तंत्र के दिव्य प्रयोग

-आर. कृष्णा

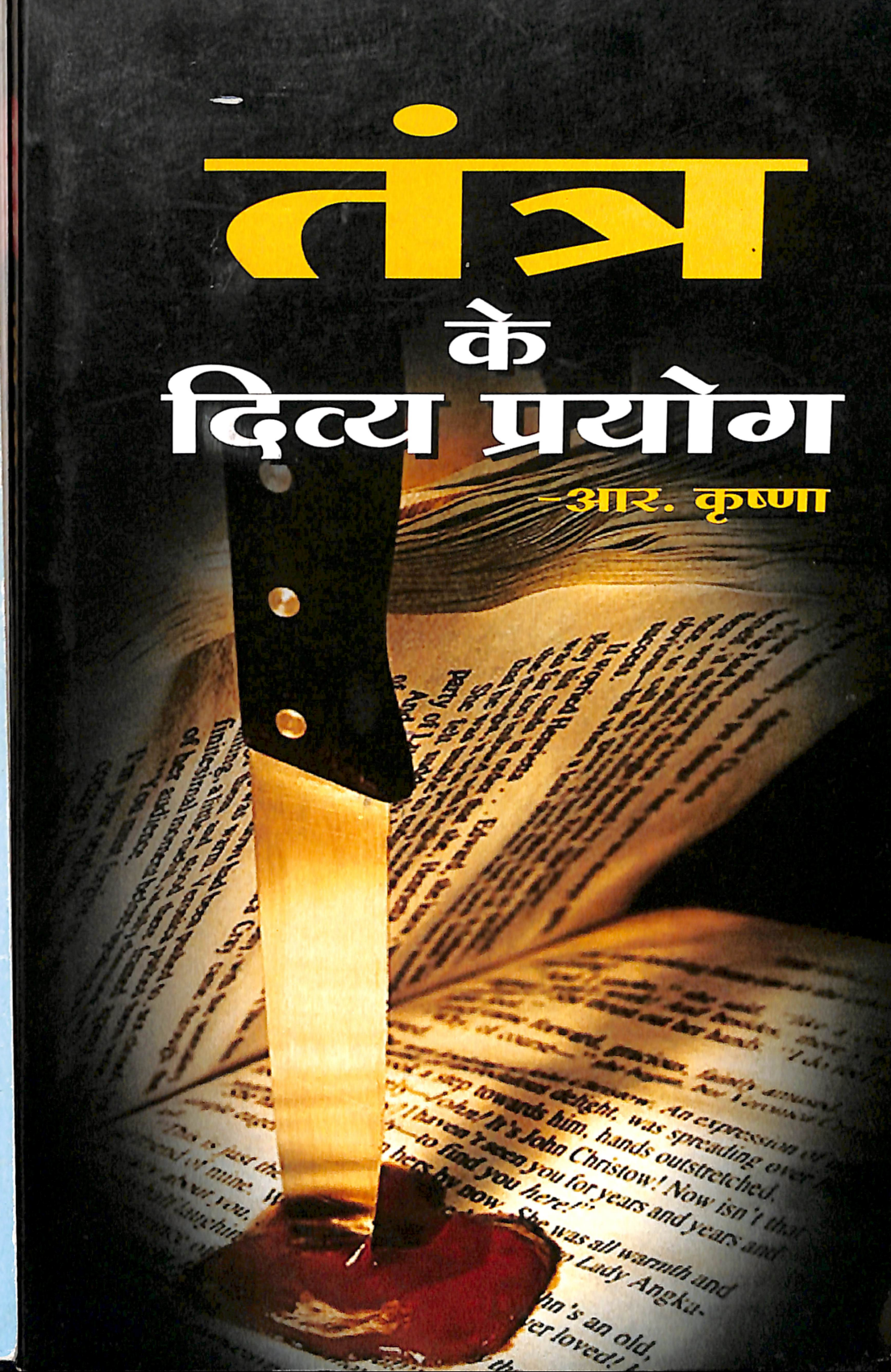

तंत्र के दिव्य प्रयोग

तंत्र साधना के दिव्य सात्विक प्रयोगों पर आधारित पुस्तक

5
8
9
20
36
55
67
85
99
110
127
131
136
144
150
158
165
171
175
180
186
189

लेखक :

आर. कृष्णा

बगीची पेड़ामल o/s लौहगढ़ गेट, अमृतसर

मोबाइल- 09417014059

मूल्य :

पेपर बैक संस्करण : 75/–

प्रमुख वितरक :

जयपुर बुक हाउस

389, जोशी भवन, मनिहारों का रास्ता, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर–3

फोन: ऑफिस: 0141-2321373 निवास-2305612 मो.- 9414048768, 9799906705

प्रकाशक :

निरोगी दुनिया प्रकाशन

2–ख–25, हाउसिंग बोर्ड, शास्त्री नगर, जयपुर–16

फोन: ऑफिस: 0141-2321373 निवास-2305612 मो.- 9414048768, 9799906705

तंत्र के दिव्य प्रयोग

लेखक :
आर. कृष्णा

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण : 2008 (अगस्त)

मूल्य : 75/–

कम्प्यूटर कम्पोजिंग :
अपराईज लेजर ग्राफिक्स
शाह बिल्डिंग, चौडा रास्ता, जयपुर।

मुद्रक :
हरिहर प्रिंटिंग प्रेस
जयपुर। Phone : 2600850

प्रकाशक :
निरोगी दुनिया प्रकाशन
2–ख–25, हाउसिंग बोर्ड, शास्त्री नगर, जयपुर–16
फोन: ऑफिस: 0141-2321373 निवास-2305612 मो.- 9414048768, 9799906705

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं, अतः कोई भी व्यक्ति इस पुस्तक में समायोजित किये गये लेखों का बिना प्रकाशक की अनुमति के सीधा अथवा तोड़–मरोड़ कर अन्यत्र उपयोग न करे। ऐसा करना कानूनन जुर्म है। जो प्रकाशक अथवा लेखक ऐसा करेगा उसके विरुद्ध उचित कानूनी कार्यवाही की जायेगी।

अनुक्रमणिका

- तंत्र विज्ञान 5
- समस्याओं से मुक्ति का मार्ग- तंत्र प्रयोग 8
- तंत्र साधना का रहस्य 9
- तारा महाविद्या और उनकी साधना रहस्य 20
- बगलामुखी साधना का रहस्य 36
- माँ बगलामुखी की ब्रह्मास्त्र साधना 55
- माँ दुर्गा और उनकी तंत्र साधना 67
- भैरव साधना के तांत्रिक प्रयोग 85
- काल सर्पदोष निवारक भैरव अनुष्ठान 99
- स्वर्णाकर्षण भैरव साधना 110
- सौभाग्यप्रद गणपति साधना 127
- हनुमानजी की तंत्र साधना 131
- विभीषणकृत हनुमद्बवडवानल स्तोत्र की तंत्र साधना 136
- विवाहकारक शिव-पार्वती अनुष्ठान 144
- वैवाहिक विलम्ब और तांत्रिक समाधान 150
- प्रेम विवाह और तांत्रिक प्रयोग 158
- शाबर अनुष्ठान और उनके तांत्रिक प्रयोग 165
  - उच्छिष्ट गणपति शाबर साधना 171
  - नौकरी पाने के लिये शाबर प्रयोग 175
  - विवाह बाधा निवारक प्रयोग 180
  - आर्थिक समस्याओं से मुक्ति का प्रयोग 186
  - तांत्रिक अभिचार कर्म से मुक्ति के उपाय 189

निरोगी दुनिया प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की नकल को रोकने के उद्देश्य से श्री उपेन्द्र धाकरे द्वारा निर्मित तांत्रिक यंत्र

ह्रीं फट् शत्रुनय् नाशय सर्वनाशय फट् स्वाहा

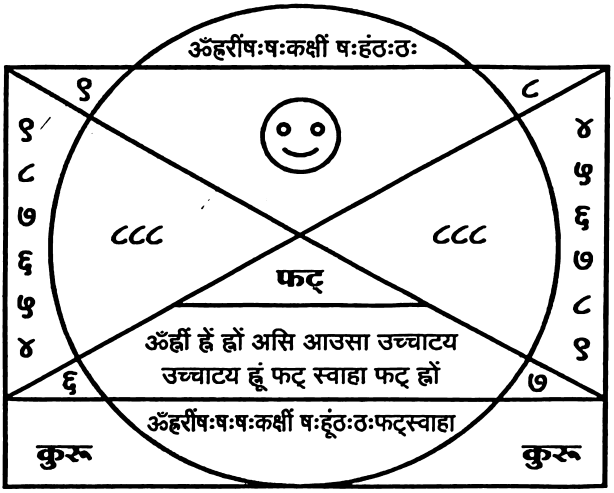

चेतावनी

निरोगी दुनिया प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें पाठकों द्वारा सबसे अधिक पसंद की जा रही हैं। इसलिये इन पुस्तकों की लोकप्रियता तथा अधिकाधिक बिक्री को देखते हुये कुछ नपुंसक प्रजाति के प्रकाशक इन पुस्तकों को हूबहू नकल करके बेच रहे हैं। कुछ पुस्तक विक्रेता भी थोड़े से लालच के कारण इन नकली पुस्तकों को बेचने का दुष्कृत्य कर रहे हैं। ऐसा करने वाले पाठकों के साथ धोखा करते हैं।

यहां पर हमारे द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का नकली संस्करण छापने तथा बेचने वालों को चेतावनी दी जाती है कि अब वे ऐसा घृणित कार्य नहीं करें।

निरोगी दुनिया प्रकाशन के द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की नकल को रोकने के उद्देश्य से **श्री उपेन्द्र धाकरे** द्वारा निर्मित **तांत्रिक यंत्र** का प्रकाशन इस पुस्तक के साथ किया जा रहा है। अतः इन पुस्तकों का नकली प्रकाशन करने वाले प्रकाशक तथा बेचने वाले इस तांत्रिक यंत्र के प्रभाव से निश्चित रूप से हानि उठायेंगे। जो नकली किताबें छापेगा एवं बेचेगा वह आर्थिक, मानसिक, शारीरिक, सामाजिक एवं अन्य किसी भी प्रकार की हानि के लिये वे स्वयं जिम्मेदार होगा। अतः **निरोगी दुनिया प्रकाशन** के द्वारा प्रकाशित किसी भी पुस्तक की नकल नहीं करें अन्यथा **तांत्रिक यंत्र** की शक्ति से ऐसे प्रकाशकों की हानि निश्चित है

- प्रकाशक

लेखकीय-

तंत्र विज्ञान

अनन्त जन्मों से एक खोज चलती रही है अपने को पहचानने की, स्वयं को जानने की, क्योंकि स्वयं को जानकर ही उस मूल स्रोत तक पहुंचा जा सकता है, उस स्रोत को ज्ञात किया जा सकता है, जहां से जीवन का अवतरण होता है। जीवन को जानकर ही जीवन से संबंधित उन मूल समस्याओं के कारणों को जाना जा सकता है, जो हमें पीड़ा, कष्ट पहुंचाते हैं। समय-असमय प्रकट होकर यह समस्यायें नाना प्रकार के दु:ख-दर्द देती रहती हैं। जीवन के सत्य को जानकर ही उस शाश्वत एवं दिव्य आनन्द को प्राप्त किया जा सकता है, जिसकी दिव्य अनुभूतियां कभी समाप्त नहीं होती हैं।

..... और स्वयं को जानने का क्या अभिप्राय है ? जीवन के गूढ़तम रहस्य को जानना, इस विश्व एवं ब्रह्माण्ड को समझना, प्राकृतिक रहस्यों को आत्मसात करना, यही खोज प्राचीनकाल से आज तक चली आ रही है और यह खोज अनन्तकाल तक इसी प्रकार चलती रहेगी।

मनुष्य की इस खोज के अनेक मार्ग रहे हैं। इसका एक मार्ग बाह्य विज्ञान पर आधारित रहा है, जबकि इसका दूसरा मार्ग आत्मदर्शन और स्वयं के अन्तस में गहराई से प्रवेश करने का रहा है। इन दोनों ही मार्गों की अपनी-अपनी उपयोगिताएं और अपनी-अपनी सीमाएं हैं। वैज्ञानिक मार्ग ने जीवन के अनेक रहस्यों से पर्दा अवश्य उठाया है, किन्तु इस मार्ग की सीमाएं केवल वहां तक पहुंचती हैं जहां तक प्रकृति की सीमाएं हैं। प्रकृति की सीमा से परे विज्ञान की पहुंच समाप्त हो जाती है क्योंकि वैज्ञानिकों की खोज, उनकी साधना का माध्यम वही साधन बनते हैं, जो स्वयं ही प्रकृति द्वारा निर्मित किये जाते हैं। अत: वैज्ञानिकों की खोज एक सीमा पर जाकर रुक जाती है।

विज्ञान के विपरीत आत्मदर्शन की खोज वहां से शुरू होती है जहां से प्रकृति की सीमा समाप्त हो जाती है और पराभौतिक जगत की शुरूआत होती है। आत्मदर्शन की साधना में प्रकृति प्रधान वस्तु ज्यादा सहायक सिद्ध नहीं होती। इस साधना में पंचतत्त्व निर्मित साधक का शरीर एक आधार भर ही होता है। इस मार्ग की शुरूआत स्थूल से परे आत्मिक शरीर से होती है जिसकी चेतना का संबंध सम्पूर्ण पराभौतिक जगत एवं परमात्मा तक के साथ सदैव रहता है, लेकिन यह मार्ग वैज्ञानिक मार्ग के मुकाबले ज्यादा दुष्कर, कठिन एवं जोखिम पूर्ण है।

तंत्र, योग, ध्यान आदि के रूप में जितनी भी प्रक्रियाएं प्रचलित रही हैं, वह सब आत्मदर्शन के सिद्धान्त पर ही आधारित हैं। तंत्र की प्रक्रियायें तो इन सबमें सबसे अद्भुत एवं प्रभावपूर्ण रही हैं क्योंकि तंत्र ही एक मात्र ऐसा विज्ञान रहा है जिसकी पहुंच प्रकृति निर्मित पंच भौतिक शरीर से लेकर परमात्मा द्वारा प्रदत्त आत्मिक शरीर तक, एक समान रहती है। तंत्र आध्यात्मिक जगत का एक ऐसा विशिष्ट विज्ञान रहा है, जहां व्याख्या एवं विश्लेषण का ज्यादा महत्व नहीं रहा, वहां केवल प्रयोग करने एवं स्वयं तंत्र साधना की अनुभूति से गुजरने पर जोर दिया गया है। इसलिये तांत्रिक अपने शिष्यों को उपदेश अथवा प्रवचन देने पर ज्यादा ध्यान नहीं देते, बल्कि सीधे-सीधे प्रयोगों की शुरूआत करने और स्वयं उन दिव्य क्षमताओं को प्राप्त कर लेने को कहते हैं।

तंत्र प्राचीन विज्ञान की एक प्रमुख प्रयोगशाला रही है। एक समय भारत में 64 प्रकार की तंत्र विधाओं का सर्वत्र प्रचलन था, लेकिन बाद में धीरे-धीरे उनमें से ज्यादातर तंत्र विधायें लुप्त होती चली गयी। अब तो तंत्र की 2-4 विधाओं के ही थोड़े-बहुत अंश अवशेषों के रूप में रह गये हैं। इनमें भी तंत्र के नाम पर बहुत कुछ जोड़ दिया गया है।

तंत्र विज्ञान का एक प्रमाणित ग्रंथ है- विज्ञान भैरव तंत्र। यह ग्रंथ शिव-पार्वती संवाद के रूप में संकलित हुआ है। पार्वती की जिज्ञासाओं को शांत करते हुये शिव ने तंत्र की 120 प्रक्रियाओं का रहस्योद्घाटन किया है, जिन्हें इस ग्रंथ में स्थान दिया गया है। तंत्र शास्त्र के इस ग्रंथ ने एक समय तंत्र विज्ञान को नई ऊंचाई तक पहुंचने में बहुत मदद की थी। इस ग्रंथ में आत्मदर्शन एवं सिद्धावस्था को प्राप्त करते हुये शिव तंत्र में लीन हो जाने की 120 से ज्यादा तंत्र प्रक्रियाओं को स्पष्ट किया गया है। तंत्र की यह विधियां आज भी उतनी ही प्रमाणिक एवं प्रभावपूर्ण सिद्ध होती हैं, जितनी वह सदियों पूर्व थीं।

इन तंत्र विधियों के थोड़े से अभ्यास से ही कई तरह की दिव्य अनुभूतियां, कई तरह के चमत्कार घटित होने लग जाते हैं। क्रियायोग, शक्ति जागरण, कुण्डलिनी जागरण, साध्य साधना, अणिमा-लघिमा जैसी अष्टसिद्धियों आदि जिन सहस्त्रों प्रक्रियाओं का उल्लेख विभिन्न ग्रंथों में हुआ है, उन समस्त तंत्र साधनाओं का मूल आधार यही ग्रंथ रहा है।

तंत्र अनुभूति और प्रयोगों का विज्ञान रहा है किन्तु बाद में इसके साथ कई घृणास्पद एवं आडम्बरयुक्त बातें भी जुड़ती चली गयी। तांत्रिक प्रक्रियायें इतनी प्रभावपूर्ण थी कि लम्बे समय तक तंत्र गोपनीय विज्ञान ही बना रहा। एक लम्बी अवधि तक तंत्र को गुप्त बनाये रखने के प्रयास किये गये। तंत्र में घृणास्पद कुछ भी नहीं है, घृणास्पद स्वरूप तो इसे बाद में प्रदान किया गया है। इसके पीछे भी कई तरह के कारण बताये जाते हैं।

तांत्रिकों के एक समूह का मानना है कि तांत्रिक क्रियाएं तत्काल असर दिखाती हैं। इन क्रियाओं की थोड़ी-बहुत क्षमताओं को अर्जित करके साधना के मार्ग से भटक जायें, तो वह समाज के लिये एक खतरा सिद्ध हो सकता है, जैसे कि आज बहुत से तांत्रिक कर रहे हैं। तंत्र साधना के मार्ग से भटके हुये थोड़ी-बहुत क्षमता सम्पन्न ऐसे तांत्रिक थोड़े लालच में ही मारण, मोहन, वशीकरण, विद्वेषण, उच्चाटन जैसे घृणास्पद कार्यों को कर डालते हैं। इन क्षमताओं के आधार पर वह लोगों को डराने, धमकाने और सताने लगते हैं। थोड़े से लोभ में यह किसी के लिये भी मारण, मोहन, उच्चाटन जैसे कामों को कर देते हैं। ऐसे भटके हुये तांत्रिक लोगों को उच्चाटित करके विक्षिप्त कर डालते हैं। कृत्या (मूठ) आदि फेंक कर शारीरिक एवं मानसिक रोगी बना डालते हैं। ऐसे पतित एवं शीघ्र भटक जाने वाले लोगों का तंत्र में प्रवेश न होने पाये, इसलिये इस विधा को लम्बे समय तक गोपनीय बनाये रखा गया।

तंत्र साधना का मार्ग इतना सहज रहा है कि प्रत्येक अवस्था का व्यक्ति इस मार्ग का साधक बन सकता है। इसमें प्रवेश के लिये कोई अनिवार्य शर्त नहीं रही। तंत्र साधक बनने के लिये न तो नैतिक तैयारी की कोई जरूरत रहती है और न ही इस पर आस्था, विश्वास जमाने की आवश्यकता रहती है। यह विज्ञान है तो इसके प्रयोग करने ही पर्याप्त रहते हैं। तंत्र एक मामले में अति नैतिक कर्म रहा है जैसा कि दवायें अति नैतिक होती हैं। वह चोर या संत, सज्जन या लंपट में कोई फर्क नहीं करती, जो भी उनका प्रयोग करता है, दवा के प्रभाव से वह ठीक होता ही है। ठीक ऐसा ही

तंत्र विज्ञान है। जो भी व्यक्ति तंत्र मार्ग में प्रवेश लेकर इन क्रियाओं का अभ्यास करता है, उसे तंत्र की दिव्य अनुभूतियां, तांत्रिक सिद्धियां निश्चित ही प्राप्त होती हैं। तंत्र साधना के प्रयोग कभी भी खाली नहीं जाते।

तंत्र साधना के इस क्षेत्र से मैं स्वयं भी पिछले 25-26 वर्षों से गहराई के साथ जुड़ा रहा हूं। इस दीर्घ अवधि में अनेक बार, अनेक अवसरों पर कई तरह के अनुभवों से गुजरने का अवसर भी मिलता रहा है। इन अवसरों पर कई बार तो ऐसा लगा कि मैं स्वप्निल संसार में रह रहा हूं अथवा वास्तविक रूप से उन्हें अनुभव कर पा रहा हूं। अनेक बार वह अनुभव वास्तविक संसार के रूप में प्रतीत हुये।

अपनी साधना के दौरान मैंने तंत्र विज्ञान को गहराई से समझने और स्वयं में आत्मसात करने का भी प्रयास किया। **तंत्र के दिव्य प्रयोग** नामक इस पुस्तक में मैं उस ज्ञान की एक झलक भर ही कहीं-कहीं दे पाया हूं, जबकि तंत्र का ज्ञान तो असीमित सागर के समान है। इस पुस्तक का मुख्य आधार साधारण लोग और उनकी भौतिक समस्यायें तथा उनका समाधान रहा है, इसलिये इस पुस्तक में तंत्र से सम्बन्धित उच्च क्रियाओं पर ज्यादा प्रकाश न डालकर, उनकी जगह उनके सूक्ष्म प्रसंग ही दे पाया हूं। यद्यपि इनके विषय में अतिरिक्त जानकारी प्राप्त करने के लिये जिज्ञासु पाठक मुझसे सीधा सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। मैं हर हरसंभव तरीके से उनकी जिज्ञासाओं का समाधान करने का प्रयास करूंगा

इस पुस्तक का मुख्य आधार जीवनकाल में समय-बेसमय पर सामने आने वाली अनेक प्रकार की समस्याओं, बाधाओं आदि से छुटकारा पाने तक ही सीमित रहा है। जीवन की ऐसी समस्याओं एवं बाधाओं से मुक्ति पाने के लिये तंत्र में अनेक तरह के प्रयोग, अनेक तरह की साधनाएं और अनेक तरह के उपाय खोजे जाते रहे हैं। तांत्रिकों ने अपने गहन अध्ययन के आधार पर अनेक ऐसे तांत्रिक अनुष्ठानों का जगह-जगह उल्लेख किया है कि अगर उन्हें पूर्ण विधि-विधान से सम्पन्न कर लिया जाये तो निश्चित ही उन समस्याओं का निराकरण हो जाता है। मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक में दिये गये तांत्रिक प्रयोग लोगों के लिये एक सहायक के रूप में कार्य करेंगे।

मुझे यह भी आशा है कि पुस्तक के पाठक तांत्रिक अनुष्ठानों का प्रयोग करके लाभ उठायेंगे ही, इस प्रक्रिया में उन्हें जो अनुभूतियां प्राप्त होंगी, उनसे मुझे भी अवगत कराने का प्रयास करेंगे। मैं उनके अनुभवों एवं आलोचनात्मक सुझावों का हृदय से स्वागत करूंगा।

इस पुस्तक के लिये प्रेरित करने तथा समय-समय पर सुझाव देने के लिये मैं प्रकाशक **श्री मोहन कुमार कश्यपजी** का हृदय से आभारी हूं। उन्हीं के अमूल्य सुझावों के आधार पर ही इस पुस्तक की रूपरेखा निखर कर सामने आ पायी और मेरे अन्तस की प्रतीक्षा साक्षात रूप प्राप्त कर सकी, इसके लिये एक बार पुनः प्रकाशक महोदय साधुवाद के पात्र हैं।

- आर. कृष्ण
बगीची पेड़ामल o/s लौहगढ़ गेट, अमृतसर
मोबाइल- 09417014059

प्रकाशकीय-

समस्याओं से मुक्ति का मार्ग- तांत्रिक प्रयोग

विभिन्न प्रकार के कष्ट एवं समस्यायें मनुष्य के जीवन का अनिवार्य अंग रही हैं। इन कष्टों तथा समस्याओं से व्यक्ति दुःखी और आहत होता है और फिर प्रयास करता है कि किस प्रकार इनसे मुक्ति प्राप्त की जाये ? अगर कहीं कष्ट और समस्यायें हैं तो निश्चित रूप से उनका समाधान भी अवश्य रहा होगा। जो सभी प्रकार के समाधान तलाश करने के उपरांत भी इनसे मुक्ति प्राप्त नहीं कर पाते, अन्त में वे ईश्वर की शरण में आते हैं। ईश्वर को विशेष मार्ग और विधान से पुकारने पर वे अवश्य ही पुकार को सुनते हैं और पुकारने वाले साधक को कष्टों से मुक्ति प्रदान कर देते हैं। ईश्वर तक अपनी करुण पुकार पहुंचाने के अनेक मार्ग हैं, इन्हीं में तंत्र भी एक मार्ग माना जाता है। आम लोगों के मन में तांत्रिक प्रयोगों के प्रति अच्छी राय नहीं है किन्तु तांत्रिक प्रयोगों का एक सात्विक स्वरूप भी है जो अपने इष्ट अथवा विशेष देव अथवा देवी की उपासना पर आधारित है। इष्ट अथवा किसी भी देव-देवी की पूजा तथा उपासना करने पर वे अवश्य प्रसन्न होते हैं और साधक के कष्टों को दूर करने में विलम्ब नहीं करते हैं।

इस पुस्तक में दिये गये समस्त तांत्रिक प्रयोग पूर्णतः सात्विक हैं। जो लोग इस भ्रम में है कि तंत्र साधना तांत्रिकों के काम ही आती है, उन्हें इस पुस्तक को अवश्य देखना चाहिये। पुस्तक में वर्णित उपाय अनेक साधकों द्वारा अनुभूत है। असंख्य पाठकों को इन उपायों को करने से वांछित लाभ की प्राप्ति हुई है एवं मनोकामनाओं की पूर्ति भी हुई है।

तंत्र के दिव्य प्रयोग तांत्रिक अनुष्ठान, साधना, उपासना तथा प्रयोगों पर आधारित पुस्तक है। वैसे तो मनुष्य अपने जीवन में अनेक प्रकार की समस्याओं और दुःखों से पीड़ित रहता है किन्तु इस पुस्तक में ऐसे प्रमुख अनुष्ठानों, साधनाओं तथा प्रयोगों को लिखा गया है जिनसे अधिक से अधिक पाठक लाभ ले सकें। पुस्तक में वर्णित उपाय पूरी तरह से सात्विक एवं ईश्वर के निकट ले जाने वाले हैं। लेखक **आर. कृष्णा** ने इस पुस्तक को सर्वकालिक उपयोगी बनाने के लिये अथक श्रम एवं शोध कार्य किया है। **आर. कृष्णा** ने इस पुस्तक के लेखन में अपने ज्ञान एवं अनुभव का प्रयोग करने के साथ-साथ इस क्षेत्र के विख्यात तांत्रिकों से सम्पर्क करके इस पुस्तक में उनके द्वारा बताये गये उपायों को सम्मिलित किया है। इस कारण से यह पुस्तक आम पाठकों के लिये अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगी। लेखक एवं प्रकाशक दोनों को इस बात का पूर्ण विश्वास है कि पाठक इस पुस्तक के माध्यम से अपनी अनेक समस्याओं से मुक्ति पाने में सफल रहेंगे। इस बारे में पाठकों से निवेदन है कि वे अपने विचारों से लेखक एवं प्रकाशक को अवश्य अवगत करायेंगे।

- प्रकाशक

तंत्र साधना का रहस्य

तंत्र का विषय बहुत विस्तृत और स्वयं में परिपूर्ण रहा है। इसलिये तंत्र शास्त्र को सहजरूप में, साधारण बुद्धि के साथ पूर्णरूपेण समझ पाना हर किसी के लिये संभव कभी नहीं रहा। अगर बात तंत्र साधनाओं के माध्यम से हस्तगत होने वाली क्षमताओं की, की जाये उन्हें तो समझ पाना और भी कठिन काम रहा है, क्योंकि कभी तो तांत्रिकों की बातें पूर्णतः कपोल कल्पित और साधारण ज्ञान से परे की चीजें लगती हैं और कभी तांत्रिकों के क्रियाकर्म, व्यवहार विक्षिप्तों जैसे प्रतीत होते हैं।

वास्तविक रूप में तो तंत्र का सम्पूर्ण विज्ञान स्थूल ज्ञान से परे आत्म अनुभूतियों पर आधारित रहा है। इसलिये तंत्र साधना की समस्त अनुभूतियां चेतन जगत से परे, साधक के अवचेतन जगत पर अवतरित होती हैं। तंत्र साधना के लिये माध्यम तो साधक का स्थूल शरीर ही बनता है, लेकिन साधना की दिव्य अनुभूतियां सूक्ष्म शरीर के माध्यम से ही अवतरित होती हैं। यह बात हमें ठीक से समझ लेनी चाहिये कि सूक्ष्म शरीर की तथा आत्मिक शरीर की अनुभतियां, स्थूल शरीर की अनुभूतियों से बहुत भिन्न रूप में रहती हैं।

हमारा स्थूल शरीर पंच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से अनुभूतियां संग्रहित करता है, लेकिन इन ज्ञानेन्द्रियों की अपनी-अपनी सीमाएं हैं। अपनी सीमा से परे के ज्ञान को यह ज्ञानेन्द्रियां पकड़ नहीं पाती हैं, किन्तु हमारे सूक्ष्म शरीर अथवा कहें कि आत्मिक शरीर की क्षमताएं स्थूल शरीर की अपेक्षा बहुत विस्तृत रूप में रहती हैं। इसलिये तंत्रादि साधनाओं के माध्यम से जो दिव्यानुभूतियां सूक्ष्म शरीर पर अवतरित होती हैं, उनके बहुत थोड़े से अंश को ही हमारा स्थूल शरीर पकड़ पाता है। यहां एक बात और भी ठीक से समझ लेने की है कि हमारे स्थूल शरीर से संबंधित जो ज्ञानेन्द्रियां हैं उनके ज्ञान का विकास समाज और वातावरण की देन है। इसलिये समाज हमें नाम प्रदान कर देता है। किसी वस्तु, व्यक्ति अथवा स्थान आदि से जिस नाम से परिचित करवा देता है, वही हमारा ज्ञान हो जाता है। उससे आगे की हमें कोई जानकारी नहीं होती। यही मुख्य कारण है कि किसी अपरिचित व्यक्ति के विषय में हम कुछ भी नहीं बता पाते। अगर किसी पुरुष ने अपने जीवन में पहले कभी भी किसी स्त्री को न देखा हो और न ही स्त्री से संबंधित कोई जानकारी सुनी हो, तो वह पुरुष एकाएक अपने सामने किसी स्त्री को पाकर दंग रह जायेगा, और संभव है कि वह उसे कोई भूत, प्रेत या पशु आदि समझ कर उसके सामने से भाग खड़ा हो जबकि स्वयं उसका जन्म स्त्री शरीर से ही हुआ होता है। सूक्ष्म शरीर पर अवतरित होने वाली अनुभूतियां वैसे भी चेतना जगत से परे की चीजें

होती हैं। इन अनुभूतियों के विषय में समाज लगभग संज्ञाहीन ही रहता है।

शायद आपने अनेक बार इस बात को तो समझा होगा कि हमारे अनुभव करने की जितनी सीमाएं हैं, उसके हजारवें अंश के बराबर भी हम अपनी अनुभूतियों को प्रकट नहीं कर पाते हैं। हम अपनी अचेतना के द्वारा अपने सूक्ष्म शरीर पर जितना अनुभव कर पाते हैं, उसके हजारवें अंश के बराबर भी सोच-विचार नहीं कर पाते। इसी प्रकार हम जितना कुछ सोच-विचार कर पाते हैं, जितनी कल्पनाओं, जितने विचारों को अपने मन में जन्म दे पाते हैं, उनके हजारवें अंश के बराबर भी हम उन्हें शब्दों के रूप में प्रकट नहीं कर पाते। अपनी भावनाओं, अपनी अनुभूतियों को लिखने की सामर्थ्य हमारे सोचने-विचारने की क्षमता के मुकाबले हजारवें अंश के बराबर भी नहीं होती। इसलिये कोई व्यक्ति अपने अन्तस में उठने वाले विचारों को थोड़ा अधिक अंश में पकड़ कर उन्हें बोलकर अथवा लिखकर प्रकट करने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है, वही समाज में सबसे अलग प्रतीत होने लग जाता है। फिर वह महान विचारक, महान लेखक, महान कवि, एक अद्‌भुत विद्वान के रूप में मान्यता प्राप्त कर लेता है। उसकी थोड़ी सी अधिक स्थूल क्षमता उसे सामान्य पुरुष से विशेष पुरुष अथवा महापुरुष बना देती है। लगभग यही बात तांत्रिक साधनाओं और उनके माध्यमों से उत्पन्न होने वाली क्षमताओं के विषय में भी कही जा सकती है।

तांत्रिक साधनाओं और तांत्रिक अनुष्ठानों से जो क्षमताएं उत्पन्न होती हैं, उनकी दिव्य अनुभूतियां चेतना से परे रहने वाले सूक्ष्म शरीर पर उतरती हैं, किन्तु उन तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न करने का मुख्य आधार साधक का स्थूल शरीर और बाह्य चेतना ही बनती है। इसलिये तंत्र के माध्यम से जो दिव्य अनभूतियां साधकों को अनुभव होती हैं, वह साधारणतः स्थूल शरीर पर पूर्णतः से प्रकट ही नहीं हो पाती हैं, क्योंकि उन्हें व्यक्त करने के लिये चेतना से संबंधित ज्ञानेन्द्रियों की सीमाएं सूक्ष्म पड़ जाती हैं। तंत्र का वास्तविक प्रकटीकरण तंत्र की दिव्य अनुभूतियों का अवतरण स्थूल शरीर से परे सूक्ष्म शरीर, आत्मिक शरीर पर होता है और हममें से अधिकांश लोगों को अपने सूक्ष्म शरीर के विषय में कोई जानकारी नहीं होती। इसलिये बिना तंत्र की वास्तविक अनुभूति से गुजरे हममें से अधिकतर लोग तांत्रिक साधनाओं के वास्तविक स्वरूप और उनकी क्षमताओं को समझने में पूर्णतः असमर्थ रहते हैं।

हमें एक बात और भी समझ लेनी चाहिये कि हमारे स्थूल शरीर की सीमाएं भौतिक जगत तक ही सीमित रहती हैं, जबकि हमारे सूक्ष्म शरीर, हमारे आत्मिक शरीर का संबंध स्थूल जगत से लेकर अभौतिक जगत तक के साथ रहता है। इस अभौतिक जगत की सूक्ष्म झांकी हममें से बहुत कम लोगों को ही कभी-कभार दिखाई-पड़ती है। अधिकांश व्यक्ति तो जन्म-जन्मान्तर तक इसकी सूक्ष्म झलक से भी वंचित बने रहते हैं।

अभौतिक सत्ता का यह जगत, जिस भौतिक जगत में हम रहते हैं, उसकी तुलना में सैकड़ों गुना विस्तृत है, पर हममें से अधिकतर लोग जीवन भर बाह्य चेतना के तल पर ही जीते रहते हैं, इसीलिये हमें अभौतिक जगत के संबंध में कोई जानकारी नहीं मिल पाती। इसी अभौतिक जगत में प्रवेश का मार्ग तंत्र साधनाएं उपलब्ध कराती हैं। हमारी बाह्य चेतना हमें स्थूल शरीर और भौतिक जगत तक ही बांधे रखती है।

अत: तंत्र साधनाओं के माध्यम से साधकों के सूक्ष्म शरीर पर जिन अभौतिक शक्तियों का उदय होता है, जिन क्षमताओं का प्रकटीकरण होता है, उन्हें कुछ हद तक ही स्थूल शरीर पर अनुभव किया जा सकता है। यद्यपि शब्दों के रूप में प्रकट करना तो और भी मुश्किल होता है। अभौतिक जगत से संबंधित जिन शक्तियों का उदय सूक्ष्म शरीर पर होता है, उन्हें कुछ हद तक ही अनुभव किया जा सकता है और कुछ सीमा तक ही उनका इच्छानुसार उपयोग किया जा सकता है, परन्तु उन शक्तियों का सम्पूर्णता में बोध सहज एवं सामान्य बुद्धि से संभव नहीं हो पाता। उन पर पूर्ण रूप से नियंत्रण पाना तंत्र के उच्च साधकों के सामर्थ्य की ही बात होती है। एक बात और, तांत्रिक साधनाओं के माध्यम से जिन शक्तियों का जागरण होता है उनका सृजनात्मक अथवा विध्वंसात्मक, किसी भी रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इसीलिये तंत्र के वास्तविक लक्ष्य से भटके हुये कुछ तांत्रिक अपनी क्षमताओं का विनाशात्मक रूप में उपयोग करने लग जाते हैं। ऐसे तांत्रिक सृजनात्मक कार्यों की जगह मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, विद्वेषण जैसे निकृष्ट कर्मों में अधिक रुचि लेने लगते हैं। अत: यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सही प्रक्रिया से सम्पन्न किया जाने वाला कोई भी काम कभी निष्फल नहीं जाता। उसका कुछ न कुछ परिणाम अवश्य निकलता ही है। यही बात तंत्र साधना एवं तांत्रिक अनुष्ठानों पर लागू होती है।

तंत्र की कोई भी साधना सम्पन्न की जाये, अगर उसकी प्रक्रिया सही है, तो उसकी कुछ न कुछ अनुभूति साधक को अवश्य होती है। साधक अपनी क्षमतानुसार उस शक्ति का उपयोग किसी विशेष रचनात्मक कार्य अथवा किसी विनाशात्मक रूप में भी कर सकता है। यद्यपि तंत्र का सम्पूर्ण रूप से उपयोग कुछ श्रेष्ठ तंत्र साधक ही कर पाते हैं। यही कारण है कि कभी-कभार ही वशिष्ठ, परशुराम, खरपानन्द, भैरवानन्द, गोरखनाथ, सर्वानन्द, मृत्युन्जय बाबा, रामकृष्ण परमहंस, वामाक्षेपा जैसा महासाधकों का जन्म होता है जो अपने तंत्र बल के आधार पर, अपनी तांत्रिक साधना के बल पर एक अलौकिक एवं विलक्षण क्षमता प्राप्त कर लेते हैं।

अत: एक बात ठीक से समझ लेनी आवश्यक है कि तंत्र विज्ञान और तांत्रिक साधनाओं के माध्यम से होने वाली क्षमताओं को अनुभव किया जा सकता है और उन शक्तियों का सृजनात्मक एवं विभिन्न तरह के रचनात्मक कार्यों, विध्वंसात्मक अथवा

विनाशात्मक रूप में उपयोग किया जा सकता है, लेकिन इसके उपरांत भी तंत्र की उस दिव्य शक्ति की व्याख्या करना सहज बोध से संभव नहीं हो पाता। जिस प्रकार आधुनिक वैज्ञानिक प्रकृति में विद्यमान रहने वाली कई तरह की शक्तियों का उपयोग करने की कला तो सीख गये हैं, वह कुछ हद तक उनके पीछे के तथ्यों को समझने, उनकी व्याख्या करने और उन्हें वैज्ञानिक सिद्धान्तों के रूप में परिभाषित करने में भी कुछ हद तक सक्षम हुये हैं लेकिन उनके लिये अब भी इस बात का उत्तर दे पाना संभव नहीं हो पाया है कि इन शक्तियों के अस्तित्व के पीछे प्रकृति का क्या उद्देश्य है ? इन शक्तियों का उद्देश्य क्या है ? इन शक्तियों के सृजन के पीछे किसका हाथ है ?

विज्ञान सृष्टि और उसकी रचना का कुछ हद तक विश्लेषण करके संरचनात्मक बनावट की जानकारी तो दे सकता है, लेकिन हमारी इस सृष्टि का अस्तित्व क्यों है... इसका विकास किस उद्देश्य के लिये हुआ है... जीवन की यहां क्या उपयोगिता है... मनुष्य क्या है... मनुष्य का यहां अस्तित्व क्यों है... वह कहां से आया है... किस उद्देश्य से यहां आया है... मृत्यु उपरांत वह कहां चला जाता है, इस गतिमान जगत के पीछे किसका हाथ है, ऐसे असंख्य प्रश्नों का कोई भी उत्तर विज्ञान नहीं दे सकता। विज्ञान सृष्टि की बनावट अथवा मनुष्य के जीवन, उसके जीवित रहने, जन्म से लेकर मृत्यु तक घटित होने वाली विविध घटनाओं का विश्लेषण तो कर सकता है, परन्तु उनके पीछे के मूल उद्देश्य पर कोई प्रकाश नहीं डाल सकता। तंत्रशास्त्र एकमात्र ऐसा परम विज्ञान है जिसके पास सृष्टि के सभी मूल प्रश्नों का उत्तर उपलब्ध है, क्योंकि तंत्र व्याख्या और विश्लेषण की जगह अनुभूति एवं साक्षात्कार पर विश्लेषण की जगह अनुभूति और साक्षात्कार पर विशेष जोर देता है। तंत्र अस्तित्व की अनुभूति पर जोर देता है। उसके लिये व्याख्यायें व्यर्थ हैं। इसलिये तंत्र की सीमाएं विराट हैं। तंत्र के लिये अस्तित्व की सीमाएं भी असीम तक विस्तीर्ण हैं। इसलिये तंत्र केवल बौद्धिक स्तर की बात नहीं करता अपितु तंत्र सदैव उस स्तर की बात करता है, जो अभौतिक जगंत के साथ संबंध रखता है।

यही प्रमुख कारण है कि तांत्रिक साधनाओं का बोध तो साधारण शरीर के तल पर ही संभव होने लगता है, परन्तु उसे पूर्ण रूप से आत्मसात करना साधारण शरीर से कतई संभव नहीं हो पाता। तंत्र शक्ति को स्वयं में पूर्णता के साथ आत्मसात करने के लिये आत्म रूपान्तरण की प्रक्रिया से गुजर कर आत्मिक स्तर, अपनी सूक्ष्म चेतना के स्तर तक पहुंचना आवश्यक होता है। सूक्ष्म जगत के स्तर पर पहुंच कर ही तंत्र और तांत्रिक शक्तियों को ठीक से समझ पाना संभव हो पाता है।

यथार्थ में समस्त तंत्र साधनाओं और तांत्रिक शक्तियों का संबंध उन अभौतिक जगत की शक्तियों के साथ रहता है, जिनका विस्तार सूक्ष्म से विराट तक फैला रहता है, परन्तु उन शक्तियों का अवतरण स्थूल चेतना से परे साधक के आत्मिक चेतना के स्तर, उसके

सूक्ष्म जगत पर होता है। इन तांत्रिक शक्तियों की अनुभूति तब तक नहीं मिल पाती, जब तक कि साधना की तपस से साधक का रूपान्तरण नहीं हो जाता और उसकी अतिचेतना के सुषुप्त केन्द्र जाग्रत नहीं हो जाते। जब तक साधना के माध्यम से साधक का आत्म रूपान्तरण नहीं होता, तब तक वह छोटी-मोटी अनुभूतियां तो प्राप्त कर पाता है, लेकिन दिव्य अनुभूतियों के अनुभवों से सदैव वंचित रहता है।

आत्म रूपान्तरण के बाद ही तंत्र की क्षमताओं का अवतरण हो पाता है और तभी हमें तांत्रिक सिद्धियों की झलक दिखाई पड़ने लगती है। ऐसी दिव्य अनुभूतियां साधक की बिलकुल निजी सम्पत्ति होती हैं। इनका लाभ आवश्यकता अनुसार वह दूसरों को करा तो सकता है, लेकिन यह दिव्य अनुभूतियां प्रदर्शन की वस्तु कदापि नहीं होती। इसी धरातल पर आकर साधक को अष्ट सिद्धियों का लाभ मिलने लगता है। यद्यपि इनके विषय में सामान्य चेतना के साथ सोच-विचार करना कपोल कल्पनाएं ही प्रतीत होता है।

तंत्र साधना के रूप :

तांत्रिक साधनाओं के मुख्यतः तीन रूप रहे हैं। इन्हीं के माध्यम से तांत्रिकों के विभिन्न सम्प्रदाय अपने अन्तिम लक्ष्य 'परमतत्व' की प्राप्ति तक पहुंचते रहे हैं। यद्यपि इन रूपों में समयान्तराल, स्थान विशेष आदि के कारण कई प्रकार के बदलाव और नवीनताएं भी आती रही हैं। इसलिये बंगाल, कामाख्या, बिहार, गोरखपुर, नेपाल आदि के तंत्र साधकों के क्रियाकर्म और उपासना पद्धतियां हिमालय में साधानारत तांत्रिकों से काफी भिन्न प्रतीत होती हैं।

तांत्रिक साधना के जो तीन रूप रहे हैं, उनमें से तंत्र साधना का प्रथम रूप आद्यशक्ति को स्वयं में पूरी तरह से आत्मसात करने की प्रक्रिया पर आधारित रहा है। साधना के इस रूप में तंत्र साधक क्षणिक भौतिक इच्छाओं के पीछे नहीं भागता, बल्कि सम्पूर्णता के साथ परमात्मा के शाश्वत सत्य को पाना चाहता है। उसका मुख्य ध्येय शाश्वत आनन्द की अनुभूति को प्राप्त करना होता है। तंत्र साधना का यही रूप सांसारिक बंधनों से मुक्त करते हुये साधक की आत्मा को दिव्य साक्षात्कार करवा देता है। तंत्र साधना में मोक्ष, मुक्ति अथवा निर्वाण प्राप्ति का यही मार्ग है। इस मार्ग पर अग्रसर होते ही साधक की भौतिक आकांक्षाएं धीरे-धीरे समाप्त होती चली जाती हैं और उसका प्रवेश अभौतिक संसार में होने लगता है। तंत्र साधना के इस पथ से अन्ततः साधक परमात्मा के दिव्य रूप में समाहित होता चला जाता है। तंत्र साधना का वास्तविक और श्रेष्ठ रूप यही है।

तंत्र साधना के इस मार्ग पर जब कोई तांत्रिक अग्रसर होता है तो उसकी भौतिक इच्छाएं तो अवश्य लोप होती चली जाती हैं, पर उसे अनंत, असीम क्षमताओं से युक्त अलौकिक शक्तियां स्वतः ही प्राप्त होने लगती हैं, जिनके माध्यम से वह प्रकृति के स्वाभाविक कार्यों में हस्तक्षेप करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। यद्यपि ऐसे तंत्र साधक धीरे-धीरे इस

नश्वर जगत के लिये विरक्त होने लगते हैं। उसकी समस्त भौतिक इच्छाएं, आकांक्षाएं, मान-सम्मान की भूख, सब धीरे-धीरे क्षीण और समाप्त होती चली जाती हैं। वह संसार के लिये एक अनुपयोगी प्राणी बनकर रह जाता है। इसलिये ऐसे सिद्ध तांत्रिक सांसारिक लोगों से दूर चले जाते हैं और घने जंगलों, पहाड़ों की गुप्त गुफाओं, शमशान आदि में रहने लगते हैं।

तंत्र साधना की इस उच्च अवस्था में वह सदैव समाधि की गहनावस्था और शाश्वत दिव्य आनन्द में डूबे रहना चाहते हैं। वह नश्वर जगत के वास्तविक सत्य को जान चुके होते हैं।

यद्यपि वह अभौतिक जगत के साथ पूर्ण रूप से तारतम्य स्थापित कर चुके होते हैं, इसलिये उनकी इच्छाएं परमात्मा की इच्छाएं बन जाती हैं, इसलिये प्रकृति तत्क्षण उनकी इच्छामात्र से सृष्टि के किसी भी पदार्थ, किसी भी वस्तु को उत्पन्न कर देने के लिये तत्पर रहती है। वह इच्छामात्र से शून्य से किसी भी पदार्थ का निर्माण करने में सक्षम हो जाते हैं। उनके लिये फिर समय की धारा कोई अवरोध खड़ा नहीं कर पाती। वह अतीत अथवा भविष्य में समान रूप से परिभ्रमण कर सकने की क्षमता प्राप्त कर लेते हैं। उनके सामने किसी भी प्राणी का अतीत, वर्तमान अथवा भविष्य काल से संबंधित कोई भी घटना अदृश्य नहीं रह पाती। वह जीवन की समस्त घटनाओं को पकड़ सकने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेते हैं। उनके सामने फिर पूर्वजन्मों अथवा भविष्य में होने वाले जन्मों से संबंधित घटनाएं भी किसी चलचित्र की तरह साक्षात होने लग जाती हैं।

साधना की इस श्रेष्ठ अवस्था में उनकी क्षमताएं असीम रूप धारण कर लेती हैं। वह दूसरे के मन में उठने वाले विचारों को पढ़ने, पकड़ने में भी सक्षम हो जाते हैं। मनुष्यों की बात तो अलग, वह पशु-पक्षियों के साथ बात करने की सामर्थ्य भी प्राप्त कर लेते हैं। उनके लिये अन्य ग्रहों का अवलोकन करना, अन्तरिक्षीय प्राणियों के साथ संबंध स्थापित करना और उनसे उपयोगी कार्यों में मदद लेना भी संभव हो जाता है। इस सिद्धावस्था में पहुंचते ही साधकों की इन्द्रियां विराट का अंग बनती चली जाती हैं। वह परमात्मा की लीलाओं का अंग बनने लगती हैं। ऐसे साधकों के लिये इच्छामात्र से ही किसी भी प्राणी के भाग्य में बदलाव कर देना, किसी को भी अभयदान दे देना, किसी भी प्राणी को राजा से रंक अथवा रंक से राजा बना देना, केवल इच्छामात्र का खेल बन जाता है। यद्यपि नश्वर संसार की वास्तविकता से गुजर चुके ऐसे संत अनावश्यक रूप में प्रकृति या परमात्मा के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करते और प्रकृति के कार्यों, प्राणियों के जीवन को उनके सहज रूप में आगे बढ़ने देते हैं।

तंत्र का यह श्रेष्ठ मार्ग है। इस सिद्धावस्था तक पहुंच पाना हर किसी के लिये सहज रूप में संभव नहीं हो पाता। यहां तक पहुंचने के लिये तंत्र के मार्ग का अनुसरण जन्मों-

जन्मों तक करना पड़ता है। यही कारण है कि बहुत दुर्लभ महापुरुष ही यहां तक, इस सिद्धावस्था तक पहुंचने में सफल हो पाते हैं। वशिष्ठ, विश्वामित्र, कणाद, अगस्त जैसे आद्य ऋषि, गोरखनाथ, आदिशंकराचार्य, मृत्युंजय बाबा, स्वामी महातपा, स्वामी सर्वानन्द, स्वामी रामकृष्ण परमहंस जैसे कुछ साधक ही यहां तक पहुंचने में सफल हो पाये हैं।

इस तंत्र साधना का एक रूप 'अघोर पद्धति' पर आधारित रहा है। तांत्रिकों का औघड़ सम्प्रदाय इसी तंत्र मार्ग का अनुसरण करता आ रहा है। भूतभावन भगवान भोले शंकर स्वयं इसी मत के साधक रहे हैं। औघड़ों की यह पद्धति अब भी निरन्तर जारी है। इस अघोर पद्धति पर अपनी किसी दूसरी पुस्तक में विस्तारपूर्वक लिखूंगा।

तंत्र साधना का दूसरा रूप 'हठ योग' की पद्धति पर आधारित रहा है। इसमें तंत्र साधक हठयोग की पद्धति का अनुसरण करते हुये आत्मरूपान्तरण की प्रक्रिया से गुजरते हुये अन्ततः परमात्मा का दिव्य साक्षात्कार प्राप्त कर लेता है। हठयोग तंत्र, तंत्र साधना से ही संबंधित आत्मरूपान्तरण की एक विशिष्ट और वैज्ञानिक प्रक्रिया रही है, जिसे तंत्र साधकों में 'क्रियायोग' की पद्धति के नाम से जाना जाता है। इस क्रियायोग के थोड़े से अभ्यास से ही साधकों को अनेक प्रकार के दिव्य अनुभव होने लग जाते हैं। वास्तव में हठयोग पद्धति पर आधारित 'क्रियायोग' अपनी अन्तः अतिचेतना में गहराई तक प्रवेश की एक अद्‌भुत प्रक्रिया है। यह आत्मसाक्षात्कार और समाधि जैसी सिद्धावस्था तक पहुंचने की सबसे सरल, सहज, वैज्ञानिक और अद्‌भुत प्रक्रिया है। इसके गहन अभ्यास से कुछ दिनों के भीतर ही साधकों को अनेक प्रकार की दिव्य अनुभूतियां प्राप्त होने लग जाती हैं। इसके नियमित अभ्यास से शीघ्र ही साधकों की चेतना स्थूल शरीर से लेकर सूक्ष्म जगत में परिभ्रमण करने लग जाती है।

क्रियायोग तंत्र आधारित एक ऐसी विशिष्ट प्रक्रिया है, जिसका सर्वप्रथम प्रकटीकरण भगवान श्रीकृष्ण ने महाभारत के युद्ध में गीता ज्ञान देते हुये अर्जुन के सामने किया था। यद्यपि बाद में आत्मसाक्षात्कार की इस जटिल प्रक्रिया को पतंजलि ने और अधिक परिष्कृत करके सरल रूप प्रदान किया। क्रियायोग संबंधी इस पद्धति पर हिमालय में तिब्बत की सीमा में स्थित ज्ञानगंज जैसे सिद्धक्षेत्र में भी निरन्तर गहन स्वाध्याय के कार्य होते रहे हैं। इस ज्ञानगंज का संबंध आदिशंकराचार्य, गोरखनाथ, ईसा और महर्षि पुलत्स्य एवं कणाद जैसे ऋषियों से लेकर आचार्य द्रोण, माँ कृपाल भैरवी, किंकट स्वामी, स्वामी विशुद्धानन्द, योगी चैतन्यप्रज्ञ, अक्षरानन्द स्वामी, महातांत्रिक मणिसंभव आदि अनेक सिद्ध साधकों के साथ रहा है।

ज्ञानगंज नामक इस स्थान को बहुत से लोग सिद्धाश्रम या सिद्ध साधकों की स्थली आदि नामों से भी जानते हैं। यह उच्च साधना का एक ऐसा स्थल है, जहां साधना के विभिन्न रूपों पर निरन्तर अध्ययन, मनन, स्वाध्याय आदि का कार्य चलता रहता है। यह

एक ऐसा सिद्ध स्थल है, जिसकी खोज अनेक पश्चिमी साधकों ने भी की है और उनमें से बहुत से लोग यहां तक पहुंचने में भी सफल रहे हैं। फ्रांस की एक लेखिका, जो बाद में लामा बन गयी थी, एक तिब्बतीय तंत्र साधक की मदद से सिद्धाश्रम में प्रवेश पाने में सफल रही थी। इसी प्रकार थियोसोफिकल सोसाइटी की संस्थापिका और 'सेवन रेज' एवं 'सीक्रेट डॉक्ट्राइन' जैसी प्रसिद्ध कृतियों की लेखिका मेडम ब्लावट्स्वी भी एक तिब्बतीय लामा की मदद से ज्ञानगंज तक पहुंचने में सफल रही थी। तिब्बतीय लामा की यह एक अशरीरी आत्मा है, जो अनेक शताब्दियों से लोगों की मार्गदर्शक बनी हुई है।

आधुनिक समय में क्रियायोग नामक इस पद्धति का सर्वप्रथम प्रकटीकरण काशी के महान सिद्धयोगी श्यामाचरण लाहड़ी महाशय के द्वारा किया गया था। बाद में उन्हीं की परम्परा को उनके शिष्यों ने आगे बढ़ाया। यद्यपि समय के साथ-साथ और जिज्ञासु साधकों के अभाव में सिद्ध साधकों की संख्या निरन्तर घटती चली गयी। असली क्रियावान योगी गुप्त स्थानों पर चले गये और उनकी जगह पर प्रचार-प्रसार के भूखे योगी रह गये।

स्वयं लाहड़ी महाशय जी को इस क्रियायोग पद्धति की दीक्षा उनके पूर्वजन्मों के गुरु महावतार बाबा के द्वारा रानीखेत स्थित पाण्डुखोली नामक एक प्राचीन गुफा में प्रदान की थी। महावतार बाबा का संबंध भी पिछली अनेक शताब्दियों से हिमालय स्थित ज्ञानगंज आश्रम के साथ रहा है। ज्ञानगंज में महावतार बाबा को मृत्युञ्जय स्वामी की उपाधि प्रदान की गयी है, क्योंकि उन्होंने पिछली बीस-बाईस शताब्दियों से निरन्तर ज्ञानगंज और समाज के मध्य नारद की भांति संबंध स्थापित किया हुआ है। महावतार बाबा अपने कुछ सिद्ध साधकों के साथ ज्ञानगंज और हिमालय स्थित अनेक गुप्त स्थानों एवं तिब्बतीय लामाओं के गुप्त मठों में निरन्तर परिभ्रमण करते रहते हैं। बाबा जब भी किसी इच्छुक जिज्ञासु को क्रियायोग जैसी किसी पद्धति के लिये अत्यधिक लालायित अवस्था में पाते हैं, तुरन्त वायुमार्ग से उसके पास पहुंच जाते हैं और उसे क्रियायोग की दीक्षा प्रदान करते हैं। यद्यपि क्रियायोग की दीक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व उन्होंने अपने सांसारिक एवं विरक्त सिद्ध साधकों को सौंप रखा है। महावतार बाबा का प्रत्यक्ष दर्शन लाभ लेने वाले अनेक साधक अब भी साधना में रत हैं।

ज्ञानगंज से ही संबंधित एक अन्य महापुरुष हैं, जिन्हें महर्षि महातपा के नाम से जाना जाता है। महर्षि महातपा भी अनेक शताब्दियों से क्रियायोग संबंधी अनेक प्रक्रियाओं के प्रचार-प्रसार में जुटे हुये हैं। महर्षि महातपा द्वारा भी समय-समय पर अलग-अलग साधकों को क्रियायोग की दीक्षा प्रदान करने के उल्लेख मिलते रहे हैं। कहा जाता है कि गुरु गोरखनाथ को उनकी तिब्बत यात्रा के दौरान इन्हीं द्वारा क्रियायोग अथवा उस जैसी ही किसी अन्य तंत्र संबंधी पद्धति की दीक्षा प्रदान की गई थी। गोरखनाथ प्रारम्भ में शाक्त उपासकों के सिद्धों के वर्ग से संबंधित रहे थे और तांत्रिकों की पंचमकार क्रियाओं का

भरपूर आनन्द लूटते रहते थे। वह भी अपने गुरु मच्छन्दर नाथ की भांति मांस, मदिरा, मैथुन, मुद्रा और मत्स्य के भोग में निमग्न रहते थे। इन क्रियाओं का पूर्णतः भोग करने एवं इनसे विरक्त होकर ही वे कामाख्या त्यागकर हिमालय यात्रा पर निकले थे।

महर्षि महातपा के द्वारा ही काशी के प्रसिद्ध संत और लाहड़ी महाशय के समकालीन प्रसिद्ध योगी त्रैलंग स्वामी को तंत्र साधना की दीक्षा प्रदान की थी। इनके अलावा मेहर बाबा, गढ़वाल के प्रसिद्ध संत गूदड़ी बाबा, नैनीताल के हेडाखान बाबा, हरिहर बाबा, बंगाल के चैतन्यपुरी और हीरानन्द स्वामी आदि अनेक ऐसे सिद्ध महापुरुष हो चुके हैं, जिन्हें तंत्र साधना संबंधी दीक्षाएं महर्षि महातपा के द्वारा प्रदान की गई थी। ऐसा भी माना जाता है कि महाकाली के परम साधक रामकृष्ण परमहंस जिस तंत्र साधना का नियमित अभ्यास किया करते थे और जिसके प्रभाव से उनकी परम आराध्य माँ काली स्वयं अपने हाथों से रामकृष्ण को महाप्रसाद का भोग प्रदान करने लगी थी, वह पद्धति भी क्रियायोग पर ही आधारित थी। संभवतः वह पद्धति उन्हें ज्ञानगंज से संबंधित किसी सिद्ध साधक ने प्रदान की होगी।

क्रियायोग पद्धति की तरह ही हठयोग पर आधारित तंत्र साधना की एक और विशिष्ट प्रक्रिया है, जो कुण्डलिनी जागरण के निमित्त काम में लाई जाती है। इस प्रक्रिया के माध्यम से भी तंत्र साधक आत्मरूपान्तरण की प्रक्रिया से गुजरते हुये और कुण्डलिनी के समस्त चक्रों को क्रमशः जाग्रत करते हुये साधना के अन्तिम लक्ष्य परमात्मा के दिव्य साक्षात्कार को प्राप्त कर लेता है।

तंत्र साधना का जो दूसरा रूप रहा है, वह उपासना एवं समर्पण की पद्धति पर आधारित है। इसमें मंत्र आदि विशिष्ट प्रक्रियाओं के माध्यम से स्वयं की अन्तःचेतना में जन्म-जन्मान्तर से सदैव सुषुप्तावथा में पड़ने रहने वाले चेतना केन्द्रों को जाग्रत करना होता है। इन प्रक्रियाओं के माध्यम से साधक की अन्तःचेतना अपनी इष्टदेवी के साथ जुड़ने लगती है। इनमें तंत्र साधक पूर्णतः समर्पित भाव से अपनी आराध्य शक्ति को समर्पित हो जाता है। धीरे-धीरे ऐसी स्थिति आ जाती है, जहां साधक और साध्य में कोई भेद नहीं रह जाता। दोनों का परस्पर मेल हो जाता है तथा साधक के समस्त कर्म उसके आराध्य के बन जाते हैं।

तंत्र साधना की इस पद्धति के माध्यम से जैसे-जैसे साधक के चेतना केन्द्र सक्रिय और जाग्रत होते चले जाते हैं, वैसे-वैसे ही उसकी चेतना शक्ति का भी विस्तार होता चला जाता है। अन्ततः वह स्वयं विराट का अंश बनने लग जाता है। एक अवस्था के बाद अपनी साधना के माध्यम से अपनी इष्टदेवी का दिव्य साक्षात्कार पाने में भी वह सफल हो जाता है। इस साधना पद्धति की प्राचीन समय से ही दो प्रकार की प्रक्रियायें प्रचलित रही हैं। इनमें से एक प्रक्रिया विशुद्ध रूप में वैदिक पद्धति पर आधारित है, जबकि दूसरी

प्रकार की प्रक्रियायें तंत्र की विविध रूपों से संबंधित रही है।

तंत्र साधना का वैदिक पद्धति पर आधारित जो रूप रहा है, उसमें अभीष्ट इष्ट से सम्बन्धित मंत्रजाप, उनके स्तोत्र, रक्षा कवच, रहस्य पाठ का अभ्यास करना, विशिष्ट प्रकार की सामग्रियों से यज्ञ, हवन करके अपने इष्ट को प्रसन्न करना मुख्य कर्म रहा है। साधना की इस प्रक्रिया में तंत्र साधक पूर्णत: समर्पित भाव से अपने इष्ट को समर्पित हो जाता है और उसके ध्यान, विभिन्न तरह के न्यास (ऋष्यादि न्यास, करन्यास, हृदयान्यास आदि) कर्मों का अभ्यास करते हुये उसे स्वयं में स्थापित कर लेता है। यह तंत्र साधना की एक विशिष्ट प्रक्रिया है। दस महाविद्याओं की साधना का भी यह एक प्रमुख अंग रही है। यद्यपि इस पद्धति में पूर्ण सफलता पाने के लिये अभ्यास के साथ-साथ साधना में पूर्ण श्रद्धा, गहन आस्था, दीर्घ धैर्य और समर्पित भाव की आवश्यकता होती है। इसलिये जब तक तंत्र साधक मानसिक रूप से पूर्णत: साधना के लिये तैयार न हो जाये, तब तक उसे इस पद्धति में दीक्षित नहीं करना चाहिये अन्यथा साधना में निष्फल रहने की पूरी संभावना बनी रहती है।

तंत्र साधना का जो दूसरा तांत्रिक विधान है, उसमें भी मंत्रजाप, स्तोत्र पाठ, हवन आदि के उपक्रमों को जारी रखना पड़ता है, लेकिन इस पद्धति में साधक को मानसिक रूप से शीघ्र तैयार करने के लिये विभिन्न तरह की तांत्रिक वस्तुओं, पूजा सामग्रियों, यंत्र आदि की आवश्यकता पड़ती है। तंत्र साधना का यह एक विस्तृत विधान है और इसकी विस्तारपूर्वक यहां व्याख्या करना संभव नहीं है, क्योंकि बहुत से तंत्र साधक तांत्रिक वस्तुओं और तांत्रिक क्रियाओं के रूप में ऐसी चीजों का प्रयोग भी करने लग जाते हैं, जो सामान्य साधकों के लिये घृणास्पद होती हैं।

तंत्र साधना का जो तीसरा मार्ग अथवा तीसरा रूप रहा है, वह मुख्यत: क्षणिक इच्छाओं की पूर्ति एवं जीवन में नित नवीन उत्पन्न होने वाली विविध तरह की परेशानियों से मुक्ति पाने पर आधारित है। तंत्र साधना का यही रूप अब सर्वत्र दिखई पड़ता है। तंत्र साधना के इस रूप को ही **तांत्रिक अनुष्ठान** कहा जाता है। तंत्र के इस प्रचलित रूप में स्वयं साधक को आत्म रूपान्तरण की प्रक्रिया से गुजरना आवश्यक नहीं होता। वह जिस रूप अथवा जिस अवस्था में होता है, वहीं ऐसे तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न कर सकता है अथवा किसी अन्य तांत्रिक के द्वारा अपने अभीष्ट कार्य के निमित्त सम्पन्न करवा सकता है।

तांत्रिक अनुष्ठानों का यह रूप है तो बहुत प्रभावशाली और इन अनुष्ठानों के चमत्कार भी शीघ्र देखने को मिलते हैं, किन्तु इनका प्रभाव सीमित समय तक ही रहता है। इन अनुष्ठानों के माध्यम से साधकों के विविध तरह के दु:ख, दर्द, क्लेश, पीड़ाएं आदि शीघ्र समाप्त तो हो जाती हैं, पर न तो उन पर उनके इष्ट की कृपा सदैव बनी रह पाती है और न ही वह साधक दिव्य अनुभूति के स्तर तक पहुंच पाते हैं। इष्ट से साक्षात्कार, शाश्वत सत्य

की उपलब्धि और आत्म साक्षात्कार जैसी कोई उपलब्धि उन्हें नहीं होती।

ऐसे सभी तांत्रिक अनुष्ठान तीन पद्धतियों से सम्पन्न किये जाते हैं। इनमें एक पद्धति अघोर क्रियाओं पर आधारित है, जिसमें तांत्रिक शमशान भूमि में रहकर ऐसे समस्त अनुष्ठानों को सम्पन्न करने का प्रयास करता है। दूसरी पद्धति वामाचार्य क्रियाओं पर आधारित रहती है, जिसमें अनुष्ठान को पूर्ण रूप से सम्पन्न करने के लिये पंचमकारों पर जोर दिया जाता है, जबकि तीसरी पद्धति शुद्ध आचरण से संबंधित वैदिक पद्धतियों पर आधारित रहती है। तांत्रिक अनुष्ठान की इन्हीं क्रियाओं के साथ तंत्र की मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, विद्वेषण जैसी क्रियाओं का गहरा सम्बन्ध रहता है। इन मारण, मोहन, उच्चाटन क्रियाओं के माध्यम से एक भ्रष्ट तांत्रिक किसी भी व्यक्ति को मृत्यु के समकक्ष पीड़ाएं दे सकता है।

तारा महाविद्या और उनकी साधना का रहस्य

तंत्र शास्त्र में माँ तारा का उल्लेख दूसरी महाविद्या के रूप में किया गया है। शाक्त तांत्रिकों में प्रथम महाविद्या के रूप में महाकाली का स्थान रखा गया है। तंत्र में महाकाली को इस चराचर जगत की मूल आधार शक्ति माना गया है। इन्हीं की प्रेरणा शक्ति से यह जगत और उसके समस्त प्राणी जीवन्त एवं गतिमान रहते हैं। समस्त जीवन के प्राण स्रोत माँ काली के साथ संलग्न रहते हैं। इसीलिये इस शक्ति से विहीन जगत तत्क्षण निर्जीव हो जाता है।

तंत्र के अति प्राचीन प्रतीकों में महाकाली को शिव पर आरूढ़ दिखाया गया है। यह भी इसी तथ्य का प्रतीक है कि 'शक्ति' हीन 'शिव' भी निर्जीव 'शव' के रूप में रूपान्तरित हो जाते हैं। महाकाली के रूप में इस आद्यशक्ति का रहस्य बहुत अद्भुत है, क्योंकि चेतना के समस्त सूत्र इसी महाशक्ति में समाहित रहते हैं। इसीलिये महाकाली का 'श्याम' रूप माना गया है। जिस प्रकार सभी तरह के रंग काले रंग में विलीन हो जाते हैं, ठीक वैसे ही समस्त जगत काली में समाहित हो जाता है। जो साधक महाकाली को पूर्णतः समर्पित हो जाता है, उस साधक के समस्त कष्टों का माँ काली स्वतः ही हरण कर लेती है। इसीलिये महाकाली को समर्पित साधक समस्त प्रकार के दुःख, दर्द, पीड़ाओं, अभावों, कष्टों से मुक्त हो जाते हैं।

बहुत से लोग अज्ञानवश महाकाली को भय, क्रोध और मृत्यु का प्रतीक भर मानते हैं। इस विश्वास से उनकी अज्ञानता ही उजागर होती है। वास्तव में महाकाली मृत्यु पर विजय और भयहीन होने की प्रतीक है। महाकाली की भयानक एवं क्रोधयुक्त मुद्रा एवं उनका अति उग्र प्रदर्शन उनकी अनंत शक्ति का द्योतक है।

तंत्र शास्त्र में प्रथम महाविद्या के रूप में महाकाली का अधिपत्य रात्रि के बारह बजे से प्रातः सूर्योदय तक रहता है। घोर अंधकार महाकाली का साधना काल है, जबकि सूर्योदय की प्रथम किरण के साथ ही द्वितीय महाविद्या के रूप में तारा विद्या का साम्राज्य चारों ओर फैलने लग जाता है। महाकाली चेतना का प्रतीक है तो तारा महाविद्या बुद्धि, प्रसन्नता, सन्तुष्टि, सुख, सम्पन्नता और विकास का प्रतीक है। इसीलिये तारा का साम्राज्य फैलते ही अर्थात् सूर्य की प्रथम रश्मि के भूमण्डल पर अवतरित होते ही सृष्टि का प्रत्येक कण चेतना शक्ति युक्त होता चला जाता है। रात्रि के अंधकार में जो जीव-जन्तु निद्रा के आवेश में आकर सुस्त और निष्क्रिय पड़ जाते हैं, फूलों की प्रफुल्लित हुई कलियां मुर्झा जाती हैं, प्राणियों में जो पशु भाव उतर जाता है, वह सब प्रातःकाल होते ही अपने मूल

स्वरूप में लौट आता है।

तारा महाविद्या का रहस्य बोध कराने वाली हिरण्यगर्भ विद्या मानी गई है। इस विद्या के अनुसार वेदों ने सम्पूर्ण विश्व (सृष्टि) का मुख्य आधार सूर्य को स्वीकार किया है। सूर्य अग्नि का एक रूप है। अग्नि का एक नाम हिरण्यरेता भी है। सौरमण्डल हिरण्यरेत (अग्नि) से आविष्ट है। इसीलिये इसे हिरण्यमय कहा जाता है। आग्नेयमंडल के नाभि में सौर ब्रह्म तत्त्व प्रतिष्ठित है, इसलिये सौरब्रह्म को हिरण्यगर्भ कहा गया है।

जिस प्रकार विश्वातीत कालपुरुष की महाशक्ति महाकाली है, उसी प्रकार सौरमण्डल में प्रतिष्ठित हिरण्यगर्भ पुरुष की महाशक्ति 'तारा' को माना गया है। जिस प्रकार गहन अन्धकार में छोटा दीपक भी अत्यन्त प्रकाशमान प्रतीत होता है, उसी तरह महानतम के अर्थात् अंतरिक्ष में तारा शक्ति युक्त सूर्य सदैव प्रकाशमान बना रहता है, इसलिये श्रुतियों में सूर्य 'नक्षत्र' नाम से भी जाने गये हैं।

माँ तारा साधना का उद्देश्य :

तारा महाविद्या एक नयी जीवन्तता, एक नये सृजन का प्रतीक रही है। यह जीवन में पूर्णता का बोध कराती है। तंत्र में तारा साधना का उद्देश्य सदैव सम्पूर्णतः पाना ही रहा है। इसीलिये इस महाविद्या की साधना जीवन में पूर्णतः की प्राप्ति के उद्देश्य के लिये ही की जाती रही है। चाहे ऐसी पूर्णता का संबंध भौतिक सुखों की प्राप्ति के लिये हो, चाहे फिर उनका संबंध आध्यात्मिक उच्चता प्राप्त करना रहा हो। तारा साधना से भौतिक रूप में समस्त प्रकार की सुख, समृद्धि और शक्ति सहज ही प्राप्ति हो जाती है। ठीक इसी प्रकार इस साधना के माध्यम से परमात्मा का दिव्य साक्षात्कार पाना भी सहज एवं संभव हो जाता है।

तंत्र में माँ तारा को सदा तारने वाली (मोक्ष प्रदायक) माना गया है। इसीलिये इनका 'तारा' रूप में नामकरण हुआ है। तारा अर्थात् जो जीवन के भव बंधनों से तार दे। माँ तारा अपनी शरण में आने वाले अपने भक्तों की सभी तरह की भयंकर विपत्तियों से रक्षा करती है। इसलिये इनका एक नाम 'उग्र तारा' भी है। यह अपने साधकों को वाक्शक्ति और अद्भुत बौद्धिक क्षमता प्रदान करती है। अतः इन्हें 'नील सरस्वती' भी कहा जाता है। इन्होंने अपने अभियोदय के साथ ही हयग्रीव नामक एक राक्षस का संहार किया था। यह शव पर प्रत्याली मुद्रा में आरूढ़ रहती है।

तारा महाविद्या अपने साधकों को बृहस्पति के समान विद्वता और यश-भोग प्रदान करने वाली है। यह साधकों के शत्रुओं का भी सहज ही नाश कर डालती है। इतना ही नहीं, यह मोक्ष प्रदान करने वाली भी है। इसलिये माँ तारा का यशोगान तांत्रिकों, मांत्रिकों से लेकर जैन तंत्र साधकों, बौद्ध तंत्र उपासकों और भारत से लेकर नेपाल, तिब्बत, चीन,

जापान तक सर्वत्र देखने को मिलता है।

तांत्रिकों की इष्ट देवी :

तंत्र साधकों, विशेषकर शाक्त सम्प्रदाय से सबंध रखने वाले तांत्रिकों के लिये दस महाविद्याओं की साधनाएं सम्पन्न करना अति आवश्यक है। इन दस महाविद्याओं को पूर्ण रूप से सिद्ध करने के बाद ही वह आगे पथ पर अग्रसर हो पाते हैं और सम्पूर्णता के साथ दिव्य आनन्द की अनुभूति प्राप्त कर पाते हैं।

तंत्र साधना की इन दस महाविद्याओं में 'तारा महाविद्या' का अपना विशिष्ट स्थान रहा है। इसलिये तांत्रिकों के लिये तारा महाविद्या की साधना सबसे श्रेष्ठ और अद्‌भुत एवं प्रभावपूर्ण मानी गयी है। इस महाविद्या को पूर्णत: से सिद्ध करते ही तांत्रिक महातांत्रिकों की कतार में सम्मिलित हो जाता है। फिर उस साधक के लिये कुछ भी अगम्य और अबोध नहीं रह जाता। प्रकृति उसकी कल्पना और इच्छा मात्र से संचालित होने लग जाती है।

यद्यपि तारा महाविद्या को पूर्ण रूप से स्वयं में आत्मसात कर पाना अपवाद स्वरूप ही किसी तांत्रिक के वश की ही बात होती है। इसीलिये बहुत कम साधक ही तंत्र क्रिया के माध्यम से तारा महाविद्या को पूर्ण रूप से साथ साधने में सक्षम हो पाये हैं। भगवान राम के कुल पुरोहित वशिष्ठ जी को इस महाविद्या का प्रथम तंत्र साधक माना जाता है। लंकाधिपति रावण ने भी तारा महाविद्या की साधना की थी। वर्तमान युग में बंगाल के प्रख्यात तंत्र साधक वामाक्षेपा, कामाख्या के महातांत्रिक रमणीकान्त देवशर्मन, नेपाल के सुप्रसिद्ध तांत्रिक परमहंस देव आदि ही कुछ ऐसे तांत्रिक हुये हैं, जो तारा महाविद्या की दिव्य अनुभूतियां प्राप्त कर पाने में सफल हो पाये हैं। बंगाल के तांत्रिक वामाक्षेपा के संबंध में तो ऐसी किंवदंतियां प्रचलित रही हैं कि वह माँ की उपासना में इतने अधिक तल्लीन रहते थे कि उन्हें हफ्तों और कभी-कभी तो महीनों तक स्वयं की कोई सुध-बुध नहीं रहती थी। इस शमशानवासी तांत्रिक की दयनीय हालत जब माँ से सहन नहीं होती थी, तो वह स्वयं आकर अपने प्रिय भक्त को अपना स्तनपान कराया करती थी। तांत्रिक देवशर्मन के संबंध में भी अनेक अद्‌भुत बातें प्रचलित रही हैं।

शाक्त तांत्रिकों की इन दस महाविद्याओं की साधनाओं में जो साधक गहरी रुचि रखते हैं और जो इन महाविद्याओं को स्वयं में आत्मसात करना चाहते हैं, इन महाविद्याओं को सिद्ध करना चाहते हैं, उन सभी को एक बात ठीक से समझ लेनी चाहिये कि आज के जो तथाकथित तंत्र गुरु इन महाविद्याओं की साधना के संबंध में जो दिवास्वप्न दिखाते हैं, वह सब वास्तविकता से बहुत दूर की चीजे हैं। वास्तव में तो वह स्वयं भी किसी वास्तविक अनुभूति की प्रक्रिया से नहीं गुजरे होते हैं। उनकी सम्पूर्ण बातें पुस्तकीय पाठन, मानसिक सृजन और काल्पनिक बीज से अंकुरित होती हैं।

तंत्र साधकों द्वारा जो मुण्डमाला तंत्र, चामुण्डा तंत्र, शाक्त प्रमोद तारा तंत्र जैसे अनेक ग्रंथ लिखे गये हैं, उनमें दस महाविद्याओं के रूप में माँ तारा का द्वितीय स्थान रखा गया है। इन्हें विश्वव्यापिनी आद्यशक्ति का द्वितीय रूपान्तरण माना गया है, जो स्वयं को अनंत-अनंत रूपों में विभाजित करके सृष्टि की रचना और पोषण का कार्य देखती है। इसलिये यह महाविद्या सृजन शक्ति से सदैव सम्पन्न रहती है। तंत्र साहित्य में माँ तारा की साधना, पूजा-उपासना और तांत्रिक अनुष्ठानों पर बहुत विस्तार से प्रकाश डाला गया है। माँ तारा के ऐसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करके अनेक प्रकार की पीड़ाओं तथा कष्टों से सहज ही मुक्ति मिल जाती है और माँ के साधक सहज ही विभिन्न प्रकार के भौतिक सुख, साधनों की प्राप्ति कर लेते हैं। इतना ही नहीं, इस महाविद्या की साधना के माध्यम से परमात्मा का सहज साक्षात्कार पाकर मुक्ति लाभ भी सहज एवं सम्भव हो जाता है।

माँ तारा का स्वरूप आद्य जननी महाकाली से बहुत साम्य रखता है। यद्यपि यह कज्जल सी काली न होकर गहरे नीले वर्ण वाली है। इसलिये इन्हें 'नील सरस्वती' भी कहा जाता है। माँ का यह नीला रंग अनन्त, असीम सीमाओं और क्षमताओं का प्रतीक है। माँ की इन असीम, अनंत क्षमताओं की वास्तविक अनुभूति इनकी साधना के माध्यम से ही प्राप्त हो पाती है। अत: द्वितीय महाविद्या के रूप में माँ तारा अनंत, असीम संभावनाओं की प्रतीक है। माँ तारा की तंत्र साधना और उनके तांत्रिक अनुष्ठानों के विषय में गहराई से जानने से पहले अगर 'तंत्र' और 'तंत्र की सीमाओं' के विषय में थोड़ा जान लिया जाये तो अधिक उपयुक्त रहेगा, क्योंकि इससे तंत्र के वास्तविक रूप विशेषकर तांत्रिकों की महाविद्याओं और उनकी अनुकंपा के प्रसाद स्वरूप प्राप्त होने वाले फलों को समझने में सहजता रहेगी।

तारा महाविद्या और उनके रूप :

तंत्र शास्त्र में जिन महाविद्याओं का विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है, उनकी साधना, उपासनाएं, दिव्य साक्षात्कार और परम सिद्धि पाने के साथ-साथ अलग-अलग प्रकार की अभिलाषाओं एवं इच्छाओं की पूर्ति के उद्देश्य के लिये भी की जाती है। तांत्रिकों की यह समस्त महाविद्याएं अमोघ शक्ति की स्वामिनी मानी गयी हैं, जो प्रसन्न होने पर अपने साधकों के सभी दु:ख, दर्द आदि को मिटाकर उन्हें समस्त सुख, सम्पन्नता प्रदान कर देती है।

तंत्र की दस महाविद्याओं में तारा नामक महाविद्या को आद्य जननी माँ काली के बाद द्वितीय स्थान प्रदान किया गया है। तारा महाविद्या का स्वरूप भी महाकाली से काफी समानता रखता है। यद्यपि यह भंवरे के समान काली न होकर नील वर्ण वाली है। अत: गहन विद्वता की सूचक भी है। इसीलिये इन्हें एक नाम नील सरस्वती भी प्रदान किया गया है।

यद्यपि माँ तारा को तांत्रिकों और अघोरियों की अधिष्ठात्री देवी के रूप में प्राचीन समय से मान्यता दी गयी है, लेकिन यह साधारण भक्तों को भी प्रसन्न होकर ज्ञान, बुद्धि, वाक्शक्ति प्रदान करके महापुरुष बना देती है। यह अपने भक्तों की पुकार शीघ्र ही सुनकर भयंकर विपत्तियों से उन्हें रक्षा प्रदान करती है और अन्त में उन्हें मोक्ष तक प्रदान करा देती है। औघड़ों की कोई भी तंत्र साधना बिना तारा महाविद्या को प्रसन्न किये सम्पन्न हो ही नहीं सकती।

तांत्रिकों ने अपनी साधनाओं के आधार पर माँ तारा के आठ विविध रूप माने हैं। माँ तारा के यह आठ रूप क्रमशः तारा, उग्रतारा, महीग्रा, वज्रा, काली, नील सरस्वती, कामेश्वरी और चामुण्डा हैं। यद्यपि इन आठ रूपों में से तीन स्वरूपों की साधना, उपासना का ही अधिक प्रचार-प्रसार रहा है। माँ तारा के यह तीन स्वरूप भी तारा, उग्रतारा और नील सरस्वती के रूप में तांत्रिकों द्वारा पूजे जाते रहे हैं। तारा के यह स्वरूप भारतीय तांत्रिकों के साथ-साथ जैनियों, बौद्धों द्वारा भी पूजे गये और इनसे संबंधित तंत्र साधनाएं भारत भूमि के साथ-साथ नेपाल, तिब्बत, चीन, जापान, मंगोलिया, श्रीलंका तक खूब प्रचलित रही हैं।

श्री तारा के रूप में तारा महाविद्या को 'एक जटा तारा' भी कहा जाता है। यह अपने इस स्वरूप में समस्त संसार का कल्याण करने वाली है। एक जटा के रूप में माँ तारा की साधना अघोरियों में होती है। उग्रतारा के रूप में यह महाविद्या भयानक विपत्तियों से उद्धार करती है और निःसंतानों को सन्तान सुख प्रदान करती है। तंत्रशास्त्र में इन्हें पुत्र प्रदायनी महाविद्या कहा जाता है। नील सरस्वती के रूप में तारा महाविद्या अपने भक्तों को वाक्सिद्धि प्रदान करती है।

हमारे देश में तारा महाविद्या की साधना के कई स्थान प्रसिद्ध हैं, जिनमें अग्रांकित पांच **तारा पीठ** अत्यन्त प्रभावशाली हैं। इन तारा पीठों पर आज भी अनेक तांत्रिक, मांत्रिक और औघड़ों को विभिन्न प्रकार के तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न करते हुये और अपनी आराध्य देवी को प्रसन्न करते हुये देखा जा सकता है। कामाख्या स्थित महोग्रा सिद्ध पीठ में तो अनेक औघड़ों को शव साधना करते हुये भी देखा जा सकता है। यह औघड़ सिद्ध पीठ के आस-पास की गुफाओं में ही रहते हैं और वहां स्थित महा शमशान में अपनी साधना करते हैं।

माँ तारा के इन **पांच सिद्ध पीठों** में से **एक** बिहार राज्य के **सहसरा जिले** के **महिषा ग्राम** में स्थित है। इस सिद्धपीठ में माँ तारा के तीनों रूपों, जैसे श्री तारा (एक जटा), उग्रतारा और नील सरस्वती को एक साथ प्रतिष्ठित किया गया है। यह एक सिद्ध स्थान है। यहां पहुंचते ही भक्तों के मन में विशेष भावों की जाग्रति होने लगती है। मेरा स्वयं का कई बार का अनुभव है कि माँ के इन तीनों स्वरूपों के दर्शन मात्र से समस्त

प्रकार की तांत्रिक अभिचार क्रियायें स्वतः ही नष्ट हो जाती हैं और साधक पर सुख, सौभाग्य की वर्षा होने लग जाती है।

ऐसे प्रमाण मिले हैं कि महिषा ग्राम के इस तारा पीठ की स्थापना महर्षि वशिष्ठ ने की थी। आचार्य महामुनि वशिष्ठ को ही तारा महाविद्या का प्रथम साधक माना जाता है। इसी पीठ पर रहकर महर्षि वशिष्ठ ने अपनी आराध्य जननी को प्रसन्न किया था और उनकी कृपा से कई तरह की सिद्धियां प्राप्त की थीं। इसलिये तांत्रिक ग्रंथों में इस पीठ का उल्लेख **वशिष्ठोपासित पीठ** या **वशिष्ठापाधिरा तारा पीठ** के रूप में किया गया है।

तारा महाविद्या का **दूसरा** सिद्धपीठ **पश्चिम बंगाल** में **रामपुर हाट रेलवे स्टेशन** से पांच किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस पीठ को **तारा पीठ** के नाम से जाना जाता है। इस तारा पीठ के साथ भी महर्षि वशिष्ठ का गहरा संबंध रहा है। इसी स्थान पर वशिष्ठ जी को अगमोक्त पद्धति (तंत्र की एक विशिष्ट प्रक्रिया) से माँ की साधना करने का आदेश प्राप्त हुआ था और उसी के बाद वह अपनी तांत्रिक साधनाओं में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सके थे।

यह तारा पीठ प्राचीन उत्तरवाहिनी नदी द्वारिका के किनारे एक महाशमशान में स्थित है। इसी तारा पीठ पर रहकर वामाक्षेपा ने माँ का साक्षात्कार पाया था। वामाक्षेपा अपनी तंत्र साधना के उस स्तर तक पहुंच गये थे कि माँ को अपने भक्त की देखभाल के लिये आना पड़ता था। अपनी साधना से वामाक्षेपा उस बालोचित्त अवस्था में पहुंच गये थे कि माँ को स्वयं अपना स्तनपान कराकर उनकी क्षुधा शांत करनी पड़ती थी।

माँ तारा का यह पीठ इतना अद्‌भुत और चेतना सम्पन्न है कि यहां बैठकर माँ का स्मरण करने मात्र से ही शरीर में झुरझुरी सी होने लगती है और बाह्य चेतना का लोप होने लगता है। यह पीठ 1008 नरमुण्डों की पीठ पर स्थापित किया गया है। इस पीठ पर माँ की नियमित पूजा तब तक अधूरी मानी जाती है, जब तक कि उन्हें चिताभस्म का स्नान न करवा दिया जाये और चिता से उठती गंध से भासित न कर दिया जाये। इस सिद्ध पीठ पर बैठकर तंत्र साधना करने की लालसा प्रत्येक तंत्र साधकों के मन में रहती है। इसलिये यह तांत्रिक और अघोरियों का मुख्य आकर्षक केन्द्र बना रहता है।

माँ तारा का **तीसरा** सिद्धपीठ **आसाम** में **कामाख्या** के पास **योनि मण्डल** के अन्तर्गत स्थित है। यह सिद्धपीठ **महोग्रा सिद्धपीठ** के नाम से विख्यात है। इस सिद्धपीठ की भी बहुत महिमा है। यहां पर औघड़ों और कापालिकों का सदैव तांता लगा रहता है। वर्ष में कम से कम दो बार तो यहां सभी तारा साधक अवश्य ही एकत्रित होते हैं और आगे की साधना का उपक्रम लेकर जाते हैं। यह पीठ नीलकूट पर्वत पर स्थित है।

चौथा सिद्धपीठ **श्री जालन्धर सिद्धपीठ** के नाम से जाना जाता है, जिसकी पहचान

चामुण्डा पीठ के रूप में हुई है। यहां माँ तारा (श्री तारा) की वज्रेश्वरी के रूप में प्रतिष्ठा की गयी है। यह पीठ भी एक शमशान में स्थित है।

तारा महाविद्या का **पांचवा सिद्धपीठ उत्तरप्रदेश** में **मिर्जापुर** जनपद में विंध्याचल क्षेत्र में **शिवपुर** के पास गंगा किनारे **रामाया घाट** स्थिम महाशमशान में स्थित है। यह पीठ भी **तारा पीठ** के नाम से ही जाना जाता है। माँ का यह सिद्ध पीठ अद्‌भुत चेतना सम्पन्न है। इसलिये तंत्र साधना में गहरी रुचि रखने वाले तांत्रिकों, भैरवियों, अघोरियों में इसके प्रति विशेष आकर्षण है।

माँ तारा के इन सिद्धस्थलों पर स्वयं मेरी भेंट अनेक तांत्रिकों, अघोरियों, भैरवियों आदि के साथ होती रही है। इन सिद्धस्थलों के अलावा भी नेपाल, लेह, लद्दाख, हिमाचल के कुल्लू-मनाली क्षेत्र और बद्री-केदार क्षेत्र में अनेक ऐसे पवित्र और प्रभावशाली स्थान हैं, जहां तारा साधक अपनी साधनाओं में सफलता प्राप्त करते हैं। इन स्थानों पर अब भी अनेक तंत्र साधकों को अपनी तंत्र साधनाओं में निमग्न देखा जा सकता है।

जैन धर्म में तारा साधना :

तारा महाविद्या की साधना तंत्र साधकों के अतिरिक्त बौद्ध भिक्षुओं और जैन साधकों में भी खूब प्रचलित रही है।

अगर बात जैन धर्म की की जाये तो प्राचीन समय से ही जैन मतावलम्बियों में माँ तारा की उपासना होती आ रही है। दरअसल जैन धर्म में चौबीस तीर्थंकरों की मान्यता है और उन्हीं के अनुसार चौबीस तीर्थंकरों की चौबीस शासन देवियां मानी गयी हैं। इन देवियों को जिन शासन में शीर्ष स्थान प्रदान किया गया है।

जैन धर्म में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को स्वीकार किया गया है और उसी प्रकार भगवान ऋषभदेव के शासन की प्रभाविका देवी चक्रेश्वरी मानी गयी है। जैन धर्म में आठवें तीर्थंकर के रूप में चन्द्रप्रभु की मान्यता है और उनकी शासन देवी ज्वाला मालिनी देवी मानी गयी है। इसी प्रकार बाइसवें तीर्थंकर की मान्यता भगवान नेमिनाथ को दी गई है और उनकी शासन देवी का स्थान अम्बिका को दिया गया है। तेइसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ माने गये हैं और उनकी शासन प्रभाविका देवी के रूप में ही माँ तारा की प्रतिष्ठा माता पद्मावती के रूप में की गयी है।

जैन धर्मावलम्बियों में देवी पद्मावती के रूप में माँ तारा की पूजा, अर्चना, आराधना से इहलोक के साथ-साथ परलोक संबंधी समस्त सुख, वैभवों की प्राप्ति की मान्यता रही है। माता पद्मावती के प्रति भक्ति और उनके आशीर्वाद की गौरव गाथा जैन ग्रंथों में यत्र-तत्र विपुल मात्रा में उपलब्ध है। यहां एक ओर लोकेषणा (सांसारिक इच्छाओं की प्राप्ति) के लिये माँ की पूजा-अर्चना की जाती है, वहीं दूसरी ओर बड़े-बड़े जैन मुनियों ने

अलौकिक एवं दिव्य आनन्द की प्राप्ति के लिये कल्याणमयी माँ पद्मावती को अपनी आराधना का अंग बनाया।

ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि प्रसिद्ध जैन मुनि हरिभद्र शूरि ने अम्बिका देवी को प्रसन्न करके उनका आशीर्वाद प्राप्त किया, तो वहीं दूसरी ओर आचार्य भट्ट अकलंक ने माता पद्मावती को प्रसन्न करके उनसे वरदान ग्रहण किया। आचार्य भद्रबाहू स्वामी ने एक व्यंतर (देव) के घोर उपसर्ग से आत्मरक्षा के निमित्त माँ पद्मावती की अभ्यर्थना की थी। एक अन्य जैन श्रुति के अनुसार श्रृणुमान, गुरुदत्त तथा महताब जैसे जैन श्रावकों पर भी माता पद्मावती की सदैव विशेष अनुकंपा बनी रही थी।

माता पद्मावती को विभिन्न नामों से स्मरण किया जाता है, जिनमें सरस्वती, दुर्गा, तारा, शक्ति, अदिति, काली, त्रिपुर सुन्दरी आदि प्रमुख हैं। माता पद्मावती की स्तुति, भक्ति के लिये जैन ग्रंथों में विपुल स्तोत्र साहित्य उपलब्ध है। इनकी स्तुति एवं भक्ति समस्त दुःखों का शमन करने वाली, प्रभु का सान्निध्य, सामीप्य के साथ-साथ दिव्य आनन्द प्रदान करने वाली संजीवनी मानी गयी है। विभिन्न स्तोत्रों के रूप में माता पद्मावती की पूजा-अर्चना भक्त हृदयों का कंठहार बन गयी है।

पार्श्वदेव गणि कृत **भैरव पद्मावती कल्प स्तोत्र** में कहा गया है कि माता पद्मावती की आराधना से राज दरबार में, शमशान में, भूत-प्रेत के उच्चाटन में, महादुःख में, शत्रु समागम के अवसर पर भी किसी तरह का भय व्याप्त नहीं रहता। सांसारिक इच्छाओं से अभिभूत होकर बहुत से लोग माँ की पूजा-अर्चना में निमग्न होते हैं, लेकिन जब वह लौकिक भक्ति के साथ विशेष अनुष्ठान (तांत्रिक पद्धति) से करते हैं, तो उनका अनुष्ठान अलौकिक रूप धारण कर लेता है ऐसी अवस्था में साधक की भक्ति मंगललोक में प्रवेश कर जाती है, जैसे **सौभाग्य रूप दलित कलिमलं मंगल मंगला नाम** अर्थात् माता सौभाग्य रूप है तथा कलियुग के दोष हरण कर उत्कृष्ट मंगल को प्रदान करने वाली है।

तंत्र की भांति ही जैन धर्म में भी माता पद्मावती का चतुर्भुजधारी रूप स्वीकार किया गया है। माता पद्मावती की प्रत्येक भुजा में क्रमशः आशीर्वाद, अंकुश, दिव्य फल और चतुर्थ भुजा में पाश (फंदा) माना गया है। माँ की इन भुजाओं का विशेष प्रतीकात्मक अर्थ है। जैसे माँ का प्रथम वरद्हस्त समस्त प्राणी जगत को आशीर्वाद का संकेत प्रदान करता है। दूसरी बाजू में अंकुश है जो इस बात का प्रतीक है कि साधक को प्रत्येक स्थिति में अपने ऊपर अंकुश (संयम) बनाये रखना चाहिये। तीसरी बाजू में दिव्य फल भक्ति के फल को प्रदान करने वाला है, जबकि चतुर्थ बाजू में पाश प्रत्येक प्राणी को कर्मजाल से स्वयं को सदैव के लिये बचाये रखने के लिये प्रेरित करता है।

जैनधर्म में माता पद्मावती का वाहन कर्कुट नाग माना गया है। यह भी तांत्रिकों की

भांति माँ के रौद्ररूप का परिचायक है। कर्कुट नाग का अर्थ विषैले नाग से है। यह पापाचारियों के लिये दण्ड का चिह्न है। माता पद्मावती पार्श्वनाथ की लघु प्रतिमा को अपने शीश पर धारण किये रहती हैं।

गुजरात में मेहसाणा के पास मेरी एक जैन मुनि से भेंट हुई थी, जो पिछले लगभग चालीस सालों से माँ पद्मावती की साधना करते आ रहे हैं। उन्होंने तांत्रिक पद्धति से माँ का साक्षात्कार प्राप्त करने में सफल्ता प्राप्त की है। इन जैन मुनि के आशीर्वाद मात्र से चमत्कार घटित होते हुये देखे गये हैं।

तारा पीठ के तंत्रोपासक :

बंगाल के प्राचीन तारा पीठ पर मेरे ऊपर भी एक महातांत्रिक की कृपा दृष्टि हुई थी। वह महातांत्रिक कामाख्या के पास रहते थे और वर्ष में कम से कम दो बार अपने साधना स्थल से निकल कर माँ तारा का आशीर्वाद लेने के लिये तारापीठ आया करते थे। इन्हें महातांत्रिक भैरवानंद के नाम से जाना जाता है।

बंगाल के दक्षिणेश्वर के पास बारह वर्ष तक उन्होंने अपने गुरु के सान्निध्य में रह कर कई तरह की तांत्रिक साधनाएं सम्पन्न की थी, लेकिन उनके गुरु अघोर पंथ से संबंध रखते थे। भैरवानंद का लक्ष्य तारा महाविद्या को सम्पूर्णता के साथ स्वयं में आत्मसात करना और तंत्र की उच्च सिद्धियां प्राप्त करना था।

अपने मुख्य लक्ष्य के विषय में भैरवानंद जी ने कई बार अपने गुरु के सामने प्रकट भी किया, किन्तु उनके गुरु ने उनकी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। फिर एक दिन अचानक उन्होंने गुरु आज्ञा लेकर दक्षिणेश्वर के अपने आश्रम का परित्याग कर दिया।

बंगाल छोड़कर वह बनारस में रहने लगे, लेकिन वहां भी उनका मन नहीं लगा, तो वह बनारस से नेपाल चले गये। नेपाल में वह कई वर्ष तक रहे और इस दौरान उन्होंने कई तरह की साधनाएं सिद्ध की। नेपाल से आकर वह हिमाचल प्रदेश में कई वर्ष तक भटकते रहे तथा कई तांत्रिकों के साथ रहकर अपना अनुभव एवं ज्ञान बांटते रहे। अन्ततः वह अपनी यात्रा के अन्त में कामाख्या के तंत्र क्षेत्र में पहुंच गये। कामाख्या में ही उनकी भेंट एक सिद्ध तारा साधक से हुई और उन्हीं के मार्गदर्शन में रहकर उन्होंने तारा महाविद्या को आत्मसात करने में सफलता प्राप्त की। तारा महाविद्या को पूर्णतः से सिद्ध करने में इस महातांत्रिक को सात वर्ष का समय लगा।

असम के कामाख्या क्षेत्र में तांत्रिक भैरवानन्द की इतनी प्रसिद्धि है कि उनकी एक झलक पाने के लिये लोग घंटों नहीं कई-कई दिनों तक इंतजार में बैठे रहते हैं, परन्तु भैरवानन्द मनमौजी तांत्रिक हैं। अपनी मर्जी से ही लोगों से भेंट करते हैं। उनकी मर्जी न हो तो, डांट-डपट कर अपने पास पहुंचे लोगों को दूर हटवा देते हैं अथवा स्वयं ही लोगों की भीड़ से बचने के लिये कुछ दिनों के लिये अन्यत्र किसी गुप्त स्थान पर चले जाते हैं।

सैंकड़ों लोगों के ऐसे अनुभव रहे हैं कि जिस किसी पर एक प्रसन्न होकर तांत्रिक भैरवानन्द ने आशीर्वाद प्रदान कर दिया तो उस व्यक्ति का भाग्य स्वत: ही चमक जाता है। रातोंरात उस व्यक्ति की स्थिति में बदलाव आ जाता है, लेकिन हर किसी के भाग्य में किसी सिद्ध साधक का आशीर्वाद प्राप्त करना नहीं होता।

माँ तारा के विशिष्ट तांत्रिक अनुष्ठान :

यद्यपि तारा विद्या को सम्पूर्णता के साथ स्वयं में आत्मसात करना ही एक तंत्र साधक का मुख्य और परम लक्ष्य रहता है। इसे ही तंत्रशास्त्र में 'महाविद्या को सिद्ध' करना कहा गया है, लेकिन सभी लोगों के लिये यह प्रमुख ध्येय नहीं होता। अत: सामान्य पाठकों के लिये लिखी जाने वाली इस पुस्तक का भी यह मुख्य विषय नहीं है। तंत्र के उच्च स्वरूप को समझने के लिये पुस्तक की जगह 'गुरु' के मार्गदशन की आवश्यकता रहती है। तंत्र साधना की ऐसी दिव्य उपलब्धियों के लिये पर्याप्त धैर्य, समर्पण, सम्पूर्ण विश्वास और गुरु पर पूर्ण आस्था रखने की आवश्यकता होती है। इस क्षेत्र में अधीरता अथवा अत्यधिक उतावलेपन की जगह गहन श्रद्धा एवं दीर्घ अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। वैसे भी तंत्र साधना के उच्च विषय गोपनीयता के आवरण में ढके रखे जाने का प्रावधान रहा है। इसके विषय में किसी योग्य मार्गदर्शक के द्वारा ही जाना जा सकता है।

पुस्तक के इस अंश में सीमित आकांक्षाओं में प्रभावशाली रहने वाले तांत्रिक अनुष्ठानों के विषय में संक्षिप्त प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है।

तारा महाविद्या के रूप में माँ तारा के अनेक तरह के तांत्रिक अनुष्ठान प्रचलित रहे हैं। इन विभिन्न तरह के अनुष्ठानों को सम्पन्न करके बहुत से लोगों ने अनेक प्रकार की परेशानियों, दु:ख, दर्द आदि से मुक्ति पाई है। यद्यपि माँ तारा के ऐसे अनुष्ठान आर्थिक समस्याओं में फंसे हुये और भारी कर्ज के बोझ से दबे हुये लोगों के लिये संजीवनी बूटी जैसी भूमिका निभाते देखे गये हैं। इन अनुष्ठानों से सहज ही व्यापारिक बाधाएं दूर होती हैं। शत्रु बाधाएं भी धीरे-धीरे समाप्त होती चली जाती है। साधकों को कई तरह के जटिल रोगों से भी मुक्ति मिल जाती है।

माँ के इस अनुष्ठान का कोई लम्बा-चौड़ा विधान नहीं है और न ही इसे सम्पन्न करने के लिये किसी विशेष वस्तु की आवश्यकता पड़ती है। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये गुरु के सानिध्य और पूर्ण समर्पित भाव की आवश्यकता रहती है।

इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये एक शंकुकार बड़ी स्फटिक बॉल, हकीक की माला, हवन सामग्री के रूप में नीलोफर के पुष्प, अपराजिता के पुष्प, भूतकेशी की जड़, बालछड़, सुगन्धबाला, श्वेत चन्दन बुरादा, लौबान, चमेली पुष्प, पीली सरसों आदि के मिश्रण, आम्र की सूखी लकड़ी, गाय के घी का दीपक एवं कम्बल का आसन आदि की आवश्यकता पड़ती है।

अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये प्रातःकाल चार बजे के आसपास का समय अथवा रात्रि के 10 बजे के बाद का समय अधिक श्रेष्ठ एवं उपयुक्त रहता है। इस अनुष्ठान को शुक्लपक्ष की नवमी तिथि से शुरू करना अति उत्तम रहता है। यह अनुष्ठान कुल 31 दिन का है।

जिस दिन इस अनुष्ठान को शुरू करना हो उस दिन सबसे पहले स्नानादि के उपरान्त केशरी रंग की धोती पहन कर कंबल के आसन पर उत्तराभिमुख होकर बैठ जायें। अनुष्ठान कक्ष को पहले ही इसके लिये तैयार कर लेना चाहिये। अनुष्ठान कक्ष में मध्यम प्रकाश की व्यवस्था रहनी चाहिये। यदि अनुष्ठान किसी ब्राह्मण द्वारा सम्पन्न कराना हो तो नियमित रूप से स्वयं थोड़े समय के लिये केशरी रंग की धोती पहनकर एक अलग कंबल के आसन पर पूर्वाभिमुख होकर बैठा जायें।

आसन पर बैठने के पश्चात् सबसे पहले अपने सामने एक लकड़ी की चौकी रखकर उसके ऊपर केशरी रंग का वस्त्र बिछा लेना चाहिये, फिर उसके ऊपर एक चांदी की प्लेट में चांदी पर ही उत्कीर्ण एवं शुभ मुहूर्त व पूर्ण विधि-विधान से तैयार किया गया

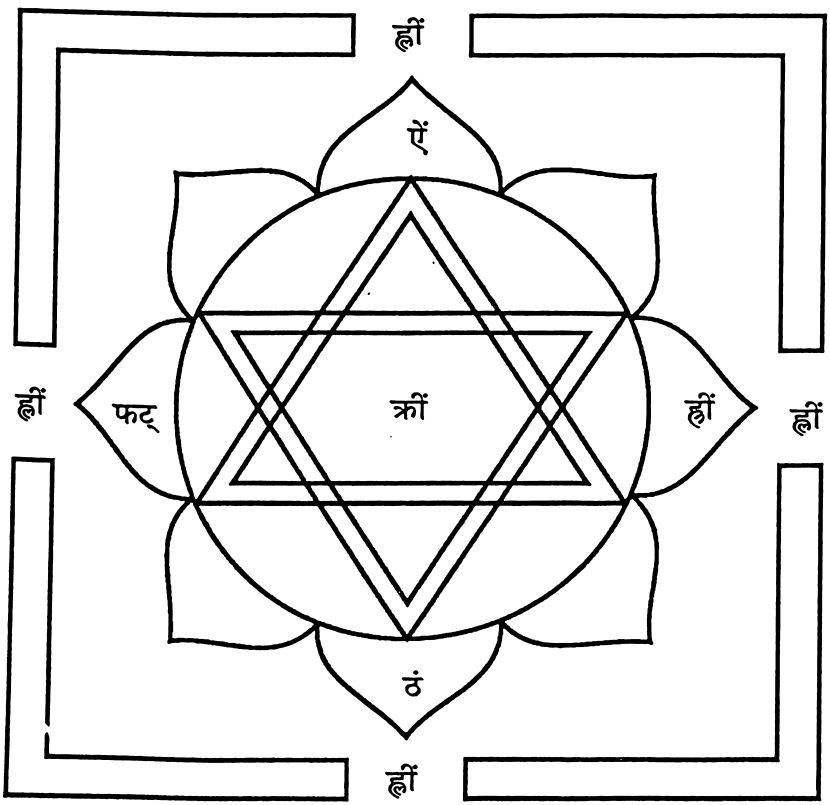

तारा श्रीयंत्र

तारा श्रीयंत्र को पंचामृत व गंगाजल से स्नान कराकर प्रतिष्ठित कर देना चाहिये। तारा श्रीयंत्र के सामने ही स्फटिक बॉल रख देनी चाहिये तथा यंत्र के ऊपर तारा के अग्रांकित मंत्र का 21 बार उच्चारण करते हुये केशर टीका, अक्षत, चमेली पुष्प और पीला मिष्ठान अर्पित करते रहें। अन्त में उनके सामने दीपक जलाकर रख देना चाहिये।

इसके उपरान्त अपने दाहिने हाथ की तरफ पहले से ही निर्मित त्रिभुजाकार हवनकुण्ड में विधिवत् आम्र लकड़ियों को प्रज्ज्वलित करके उसे विशिष्ट सामग्री युक्त समिधा और घी की आहुति प्रदान करनी चाहिये। हवनकुण्ड को प्रज्ज्वलित करने के पश्चात् पूर्ण भक्तिभाव युक्त होकर माँ का आवाह्न करना चाहिये तथा उनके सामने अपने संकल्प को बार-बार दोहराना चाहिये। अन्त में हकीक माला को अपने गले में धारण करके माँ तारा के अग्रांकित मूंत्र द्वारा 1100 आहुतियां हवनकुण्ड में देनी चाहिये। मंत्रजाप के अतिरिक्त तीन पाठ **तारा सहस्त्रनाम स्तोत्र** के भी पूर्ण करने चाहिये। सहस्त्रनाम स्तोत्र के बाद भी 21 मंत्रों के साथ हवनकुण्ड को समिधा अर्पित करनी चाहिये।

इस अनुष्ठान के लिये माँ तारा का मंत्र यह है-

ऐं ॐ ह्रीं तारा महाविद्या क्रीं हूँ फट्

माँ का यह विशेष बीज मंत्र है जिसका मंत्रोच्चार पूर्णतः लयबद्ध एवं विचारशून्य होकर करना चाहिये। अगर इस मंत्र का सही रूप में लयबद्ध उच्चारण कर लिया जाये तो थोड़ी देर में ही साधक अपने शरीर एक विशेष प्रकार की कंपन का अनुभव करने लग जाता है। साधक की सुषुम्ना नाड़ी में शक्ति का जागरण होने लगता है।

मंत्रजाप और स्तोत्र पाठ पूर्ण होने के पश्चात् भी माँ के सामने अपने संकल्प को दोहराना चाहिये। फिर माँ से आज्ञा लेकर आसन से उठना चाहिये। माँ के सामने दीपक जलाने का क्रम सुबह-शाम दोनों समय करना चाहिये।

अनुष्ठान का यह क्रम निरन्तर 31 दिन तक इसी प्रकार से ही बना रहना चाहिये। प्रत्येक दिन अनुष्ठान की शुरूआत करने से पहले चौकी पर एकत्रित हुई पूजा सामग्री को एक जगह जमा कर लें। माँ तारा के श्रीयंत्र को नित्य प्रति पंचामृत स्नान कराने के बाद एवं विधिवत् पूजा करने के बाद माँ का आह्वान करें। जप और पाठ की शुरूआत एवं अन्त में अपने संकल्प को पूर्ववत दोहराते रहें। इनके अतिरिक्त 1100 मंत्रजाप से हवनकुण्ड में आहुतियों एवं तीन बार तारा सहस्त्रनाम स्तोत्र पाठ का क्रम भी पूर्ववत् रखें।

31वें दिन जब अनुष्ठान निर्विघ्न पूर्ण हो जाय तो 51 बार अतिरिक्त मंत्रों से आहुति और देनी चाहिये। एक ब्राह्मण के साथ तीन कन्याओं को भोजन करायें एवं दान-दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद लें। घर में भी उत्सव जैसा वातावरण बनाये रखें। अगले दिन तारा श्रीयंत्र को अपने पूजास्थल में स्थापित कर दें। स्फटिक बॉल को ऑफिस की टेबिल पर

रखना चाहिये। हकीक माला को अपने गले में पहन लें। शेष समस्त सामग्रियों को किसी नदी या तालाब में प्रवाहित कर दें।

कैंसर से मुक्ति :

स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें प्राचीन काल से ही मानव के साथ जुड़ी हुई हैं। प्रत्येक काल में उपलब्ध साधनों के द्वारा ही इनका उपचार किया जाता रहा है। पहले वर्तमान समय के अनुसार रोगी को रोगमुक्त करने के लिये पर्याप्त सुविधायें नहीं थी। इसलिये तब रोगों को मंत्रजाप एवं विभिन्न अनुष्ठानों के माध्यम से दूर किया जाता था। आश्चर्य की बात तो यह है कि मंत्रजाप आदि से रोगी रोगों से मुक्त होकर स्वस्थ हो जाते थे, मंत्रजाप द्वारा रोगों से मुक्त होने की यह एक ऐसी विधा है जो हर काल और समय में प्रभावी रही है। आज भी मंत्रजाप द्वारा सामान्य एवं जटिल रोगों से मुक्त होना सम्भव है। कैंसर तक के रोगी मंत्रजाप से स्वस्थ होते देखे गये हैं। इसमें आवश्यकता केवल इस बात की है कि अनुष्ठान एवं मंत्रजाप विद्वान आचार्य के दिशा-निर्देश में हो। मैं यहां कैंसर से मुक्ति के बारे में एक प्रयोग लिख रहा हूं। इस अनुष्ठान के द्वारा कैंसर का रोगी ठीक हो जाता है।

माँ तारा का यह अनुष्ठान भी 31 दिन का है। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये शुभ मुहूर्त में चांदी पर विधिवत् निर्मित तारा महाविद्या यंत्र, पंचमुखी लघु रुद्राक्ष माला, लौबान, केशर, पीली सरसों, सुपारी, लौंग, बेसन के लड्डू, ताम्र पात्र, पीले रंग के वस्त्र, पीले रंग का कम्बल आसन आदि वस्तुओं की आवश्यकता रहती है। **(तारा महाविद्या यंत्र अगले पृष्ठ पर देखें।)**

यह अनुष्ठान शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि से शुरू किया जाना उचित होता है लेकिन अगर रोगी की हालत अधिक खराब हो तो इसे किसी भी मंगलवार के दिन से भी प्रारम्भ किया जा सकता है। अनुष्ठान के लिये प्रातःकाल का समय उपयुक्त रहता है। इस अनुष्ठान को सम्पन्न कराने के लिये किसी योग्य विद्वान ब्राह्मण की मदद भी ली जा सकती है। ब्राह्मण को यह अनुष्ठान प्रातः 4 बजे के आसपास ही करना चाहिये।

अनुष्ठान को प्रारम्भ करने के लिये सबसे पहले आसन बिछाकर पश्चिम की तरफ मुंह करके बैठ जायें। अगर रोगी अनुष्ठान के दौरान उसी साधना कक्ष में उपस्थित रहे तो अनुष्ठान का प्रभाव और भी बढ़ जाता है। अनुष्ठान कक्ष में रोगी की उपस्थिति अच्छी रहती है। अगर रोगी स्नान करने में सक्षम है तो स्नान करके अनुष्ठान कक्ष में बैठ सकता है। अक्षमता की स्थिति में हाथ, पांव तथा मुंहा का स्पंज स्नान किया जा सकता है। यह इसलिये आवश्यक समझा जाता है कि अनुष्ठान में उच्चारित मंत्रों को रोगी सुन सके। अगर रोगी की अनुपस्थिति में अनुष्ठान किया जा रहा हो तो अनुष्ठान में उच्चारित मंत्रों को टेप कर लें। बाद में रोगी टेप चलाकर मंत्रोच्चारण को सुन सकता है।

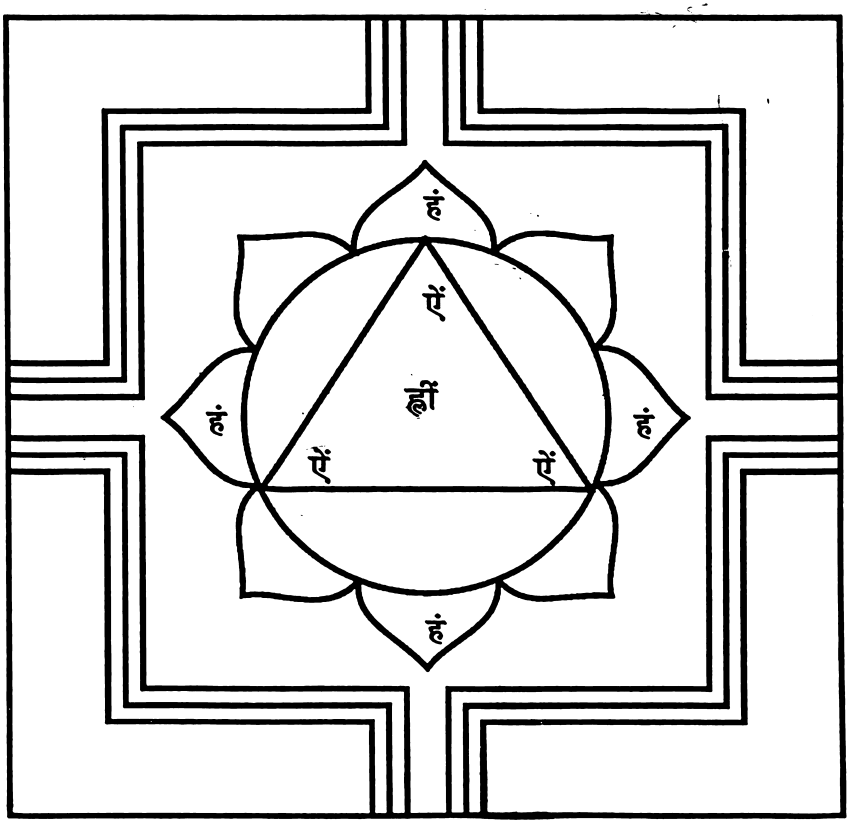

तारा महाविद्या यंत्र

अनुष्ठान की शुरूआत लकड़ी की चौकी पर केसरी रंग का वस्त्र बिछाकर की जाती है। उस चौकी पर एक चांदी की प्लेट रखकर, उसमें केसर से त्रिकोण बनाकर उसमें तारा यंत्र को पंचामृत से स्नान करवाकर विधिवत् स्थापित किया जाता है। इसके उपरान्त पीली सरसों की एक ढेरी बनाकर उसके ऊपर एक तांबे का पात्र रखा जाता है। उसमें थोड़ी सी पीली सरसों, पांच सुपारी, पांच लौंग, पांच बेसन के लड्डू, सप्तरंगी के थोड़े से पुष्प और तीन सप्तमुखी रुद्राक्ष रखे जाते हैं। इन तीनों रुद्राक्षों को अनुष्ठान शुरू करने से पहले रोगी के शरीर पर धारण कराया जाता है और अनुष्ठान समाप्त होने पर रोगी के शरीर से उतारकर तामपात्र में रख दिया जाता है। पीली सरसों, सुपारी, लौंग, लड्डू, सप्तरंगी पुष्प आदि को भी रोगी के हाथों से स्पर्श करवाया जाता है।

ताम्रपात्र की स्थापना के बाद उसके सामने गाय के घी का एक दीपक प्रज्ज्वलित कर रख दें। साथ ही शुद्ध लौबान का चूर्ण बनाकर उसी घी में मिला दें। शुद्ध लौबान के प्रयोग से शीघ्र ही साधना कक्ष सुगन्धित होने लग जाता है। यदि रोगी साधना कक्ष में उपस्थित नहीं रह सकता तो उसके कक्ष में भी मंत्र पाठ सुनाने के दौरान इसी तरह का

दीपक जलाकर रखने की व्यवस्था करनी पड़ती है।

दीप और पात्र स्थापना के बाद यंत्र को 21 बार माँ के तांत्रोक्त मंत्र के साथ केसर तिलक अर्पित करना चाहिये और साथ ही बार-बार माँ का आह्वान करते रहना चाहिये। माँ के आह्वान के बाद शुद्ध आचरण एवं पूर्ण भक्तिभाव युक्त होकर माँ के सामने अनुष्ठान के संकल्प को दोहराना चाहिये। फिर माँ की आज्ञा शिरोधार्य करके रुद्राक्ष माला से 21 मालाएं अग्रांकित मंत्र की जपनी चाहिये। मंत्र जाप पूर्ण हो जाने के उपरान्त 21 बार माँ के तांत्रोक्त स्तोत्र का पाठ भी करना चाहिये। स्तोत्र पाठ के बाद भी एक माला मंत्र जाप और करना चाहिये।

मंत्रजाप और स्तोत्र पाठ पूर्णतः समर्पित भाव एवं श्रद्धा के साथ करना चाहिये। इस दौरान मंत्रजाप करने वाले ब्राह्मण की पूर्ण एकाग्रता अपने इष्ट पर बनी रहनी चाहिये। दीपक अखण्ड रूप से निरन्तर जलते रहना चाहिये। साधना कक्ष में किसी अन्य के आने पर पूर्णतः पाबन्दी रहनी चाहिये। यद्यपि इसमें रोगी को सुनाने के लिये मंत्रजाप और स्तोत्र पाठ को टेपरिकोर्डर में टेप करने के लिये एक व्यक्ति उपस्थित रह सकता है।

इस प्रकार जब प्रथम दिन का मंत्रजाप और स्तोत्र पाठ पूर्ण हो जाये तो माँ के सामने एक बार पुनः अपने संकल्प को दोहराना चाहिये। माँ का आह्वान करते हुये उन्हें वापिस अपने लोक को लौट जाने की प्रार्थना करें। इसके उपरांत अपने आसन से उठना चाहिये। उठने के पश्चात् आसन को भी एक ओर उठा कर रख कर साधना कक्ष को बंद कर देना चाहिये। वैसे विधान तो यह है कि रात्री के समय भी माँ का आह्वान के साथ दीप प्रज्ज्वलित करके और आसन पर पुनः बैठकर एक माला मंत्रजाप एवं एक स्तोत्र पाठ पूरा करना चाहिये। पूरे अनुष्ठान के दौरान मंत्रजाप करने वाले ब्राह्मण को शुद्ध आचरण बनाये रखना चाहिये।

अनुष्ठान का यह क्रम पूरे 31 दिन तक इसी प्रकार से बनाये रखें। इस दौरान प्रत्येक दिन प्रातःकाल यंत्र का पंचामृत से स्नान, केसर तिलक और दीप समर्पण, माँ का आह्वान एवं संकल्प क्रम को दोहरा कर मंत्रजाप व स्तोत्र पाठ करते रहना चाहिये। उसी प्रकार दिन के कार्यक्रम को विश्राम देना चाहिये। इस दौरान प्रत्येक सातवें दिन ताम्रपात्र में भरी सामग्री को किसी केसरी वस्त्र में बांधकर सात ताजे बेसन लड्डू के साथ किसी भिखारी को दे दें अथवा वस्त्र एवं बेसन के लड्डू भिखारी को देकर शेष सामग्री को किसी बहते हुये जल में प्रवाहित कर दें। ताम्रपात्र को पुनः पहले की तरह ही उन्हीं सामग्रियों से भरकर यंत्र की बगल में स्थापित कर दें।

31वें दिन अनुष्ठान के पूर्ण होने की प्रक्रिया में मंत्रजाप और स्तोत्र पाठ पूर्ण करके और माँ के आह्वान के उपरान्त परिवार एवं आस पड़ोस में माँ के प्रसाद के रूप में बेसन के लड्डू वितरण करवा देने चाहिये। पूजा सामग्री को पूर्णवत् किसी भिखारी अथवा बहते

जल में पात्र एवं दीपक सहित ही प्रवाहित करवा देना चाहिये। माँ के यंत्र को अपने पूजास्थान पर स्थापित कर दें तथा रुद्राक्ष की माला को रोगी के गले में धारण करवा दें। अनुष्ठान सम्पन्न होने पर ब्राह्मण देवता को भोजन करायें और दान-दक्षिणा देकर उन्हें प्रसन्नतापूर्वक विदाई दें।

अनेक अवसरों पर इस अनुष्ठान के दौरान ही रोगी को लाभ मिलने लगता है। इस रोग के कारण रोगी के जो कष्ट निरन्तर बढ़ रहे होते हैं,उनका बढ़ता रुक जाता है और इसके बाद धीरे-धीरे रोगी स्वयं को पहले से अच्छा महसूस करने लगता है। कुछ रोगियों को अनुष्ठान के 21वें दिन से लाभ मिलता देखा गया है। इसके बाद लाभ मिलने की गति कुछ धीमी होती है किन्तु रोगी का रोग धीरे-धीरे ही दूर होने लगता है। इसमें सबसे बड़ी बात यह देखने में आती है कि जो दवायें अपना प्रभाव नहीं दे पा रही थी, अब उनका असर भी रोगी पर दिखाई देने लगता है। इसमें एक केस ऐसा देखने में आया जहां कैंसर के एक रोगी के बचने की आशा लगभग समाप्त हो गई थी। डॉक्टरों ने भी जवाब दे दिया था। फिर एक परिचित द्वारा इस अनुष्ठान के बारे में जानकारी मिली। एक विद्वान आचार्य की देख-रेख में इस अनुष्ठान को करवाने का मन बना लिया। परिवार वालों ने यह अनुष्ठान केवल इसलिये करवाया कि चलो, अन्तिम प्रयास है, करके देख लेते हैं। बाद में इसी अनुष्ठान के कारण से रोगी के प्राणों की रक्षा हुई थी। विद्वान आचार्यों का मत है कि एक बार के अनुष्ठान से अगर लाभ का अंशमात्र भी दिखाई दे, तो आशा छोड़नी नहीं चाहिये। एक अनुष्ठान के बाद दूसरा अनुष्ठान भी करवाने का प्रयास करना चाहिये।

यदि कोई साधक किसी गंभीर रोग से ग्रस्त है तो उसे उपरोक्त अनुसार अनुष्ठान सम्पन्न करना चाहिये। मेरा विश्वास है कि उसे अवश्य ही स्वास्थ्य की प्राप्ति होगी।

तारा का तांत्रोक्त मंत्र :

तारा माँ का तांत्रोक्त षडाक्षरी मंत्र निम्न प्रकार है-

ऐं ॐ ह्रीं क्रीं हूँ फट्

माँ का तांत्रोक्त स्तोत्र अन्यत्र देखा जा सकता है। पुस्तक की आकार वृद्धि के डर से उसे यहां नहीं लिखा जा रहा है। वैसे भी किसी भी प्रकार के तांत्रिक अनुष्ठानों की शुरूआत करने से पहले इस संबंध में विद्वान आचार्य से परामर्श अवश्य कर लेना चाहिये। किसी अनुष्ठान के लिये मंत्र का चुनाव अथवा स्तोत्र आदि का पाठन पुस्तकीय आधार पर स्वयं शुरू कर लेना खतरनाक सिद्ध हो सकता है। अतः इन्हें किसी आचार्य अथवा गुरु के माध्यम से ही ग्रहण करना चाहिये।

बगलामुखी साधना का रहस्य

तांत्रिकों का जो शाक्त सम्प्रदाय रहा है, उस शाक्त सम्प्रदाय से संबंधित विभिन्न तांत्रिक ग्रंथों जैसे मुण्डमाला तंत्र, रुद्रयामल तंत्र, कुलार्णवतंत्र, ब्रह्मयामल तंत्र, शाक्त प्रमोद, शारदा तिलक, प्राणतोषिणी, कुब्जिका तंत्र आदि में आद्य शक्ति के दस रूपों का बहुत विस्तार से वर्णन हुआ है। तांत्रिकों की यह दस शक्तियां दस महाविद्याओं के रूप में विख्यात हैं। तांत्रिकों की यह दस महाविद्याएं समस्त प्रकार के भौतिक सुखों, भोगों एवं ऐश्वर्य को प्रदान करने वाली हैं। इतना ही नहीं, यह अपनी साधनाओं से साधकों को मुक्ति लाभ भी प्रदान करने वाली हैं। इन दस महाविद्याओं की साधनाओं के माध्यम से सैंकड़ों तांत्रिक परम तत्व को उपलब्ध होते रहे हैं। इनमें महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, परशुराम, नारद से लेकर ऋषि पुलस्त्य, रावण, आचार्य द्रोण, भीष्म पितामह, अश्वस्थामा, युधिष्ठिर, कर्ण, विक्रमादित्य, रामकृष्ण परमहंस, माँ आनन्दमयी, महातांत्रिक जिज्ञासानन्द, अघोरी कृष्णानन्द, उडिया बाबा आदि सभी इन महाविद्याओं के साधक रहे हैं। महर्षि परशुराम को तो शाक्त मत का प्रथम आचार्य ही माना जाता है।

तंत्रशास्त्र से संबंधित जो सैंकड़ों ग्रंथ उपलब्ध होते हैं, उनमें इन दस महाविद्याओं से संबंधित विभिन्न तरह की साधना विधियां और विभिन्न तरह के अनुष्ठानों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। इसी प्रकार तांत्रिक सम्प्रदाय से संबंधित जो अलग-अलग वर्ग रहे हैं, उनमें दस महाविद्याओं से संबंधित साधनाओं की अलग-अलग तरह की पद्धतियां प्रचलित रही हैं। इनमें वामाचार पद्धति, कौल पद्धति, अघोर प्रक्रियायें तथा दक्षिण मार्ग से संबंधित वैदिक पद्धतियां कुछ विशेष हैं। यद्यपि कुछ शताब्दी पहले तक दस महाविद्याओं की साधनाओं के लिये वामाचार पद्धतियां ही अधिक प्रचलित थी, लेकिन अब इन पद्धतियों के बहुत कम साधक रह गये हैं। वर्तमान समय में इन महाविद्याओं की कृपा पाने के लिये वैदिक पद्धतियां ही प्रचलित हैं।

तंत्र साधनाओं और तांत्रिक अनुष्ठानों को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिये वैदिक क्रियाकर्म ही अब अधिक प्रचलित हो गया है। ऐसी शुद्ध साधनाओं के माध्यम से महाविद्याओं की शीघ्र अनुकंपा प्राप्त हो जाती है।

बगला महाविद्या का रहस्य :

तंत्र शास्त्र से संबंधित मुण्डमाला तंत्र, चामुण्डा तंत्र, अग्नि पुराण, मेरूतंत्र, सांख्यायन तंत्र जैसे ग्रंथों में आद्य जगत जननी के रूप में जिस 'बगला महाविद्या' का उल्लेख हुआ है, उसे समस्त चराचर जगत की आद्य शक्ति के रूप में स्वीकार करते हुये समस्त भोगों को

प्रदान करने वाली और मृत्यु उपरान्त मोक्ष प्रदाता गया है। अपने बगला रूप में यह महाविद्या अपने साधकों के समस्त कष्टों, दु:ख-दर्द का हरण करके समस्त प्रकार के सुख एवं ऐश्वर्य वाली हैं। यह शत्रुओं पर सदैव अजेयता प्रदान करती हैं, साथ ही साधकों की समस्त मनोकामनायें भी पूरी करती हैं।

तंत्र में माँ बगला का उल्लेख संहारक शक्ति के रूप में हुआ है, क्योंकि यह महाविद्या पूजा-अर्चना से शीघ्र ही प्रसन्न होकर अपने साधकों के समस्त कष्टों, बाधाओं, विपदाओं का संहार कर देती हैं। इनकी साधना से साधक के शत्रुओं का शीघ्र ही दमन हो जाता है तथा साधकों को स्तंभन शक्ति प्राप्त हो जाती है। ऐसी स्तंभन शक्ति के सामने कोई भी विरोधी, साधक के सामने ठहर नहीं पाता। ऐसे साधक युद्ध भूमि से लेकर साहित्य के क्षेत्र और तर्क-वितर्क वाली वार्ताओं में सदैव अजेय रहते हैं। उनकी वाक्शक्ति के सामने, उनके तर्कों को काटने की शक्ति उनके प्रतिरोधियों के पास नहीं रहती। शत्रु ऐसे व्यक्तियों के सामने शीघ्र ही अपनी हार मान लेते हैं।

बगलामुखी साधना का उल्लेख तांत्रिक ग्रंथों में ही नहीं, बल्कि इतिहास के पृष्ठों पर भी पढ़ने-देखने को मिलता है। विभिन्न ग्रंथों में ऐसे उल्लेख मिले हैं कि चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को कामाख्या में बगलामुखी का तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न कराया था और माहमाई बगला के वरदहस्त से ही वह अपने शत्रुओं को समाप्त करके विशाल साम्राज्य स्थापित करने में सफल हो पाये थे। चन्द्रगुप्त के अतिरिक्त विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, राज राजेन्द्र चोल भी युद्ध भूमि में जाने से पहले माँ बगला का 'शत्रुदमन' नामक विशेष तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न करवाते थे। माँ बगला के प्रभाव से ही वह अपने शत्रुओं पर अनेक बार अद्वितीय सफलताएं प्राप्त करने में सफल रहे थे।

यह हम सभी स्वीकार करते हैं कि जीवन में सहज शांति संभव नहीं है। अनायास ही जीवन में कई तरह की विघ्न-बाधाएं खड़ी होती रहती हैं और अनेक तरह के शत्रु उत्पन्न होते रहते हैं। यह विघ्न-बाधाएं जीवन में असंतुलन उत्पन्न कर देती हैं। जीवन में विघ्न बाधाएं उत्पन्न न हों, शत्रुओं के समस्त प्रयास निरन्तर असफल होते रहे, शत्रु स्वत: ही निस्तेज हो जाए, इन सबके लिये प्राचीन समय से ही बगला अनुष्ठान सम्पन्न करने का प्रचलन रहा है।

इनके अलावा भी माँ बगलामुखी के कई तरह के अनुष्ठान प्रयोग देवी प्रकोपों, जैसे अनायास घर-परिवार, समाज पर मुसीबतों का पहाड़ सा टूट पड़ना, पारिवारिक सदस्यों की एक के बाद एक मृत्यु होते जाना, निरन्तर दुर्घटनाओं का शिकार बनते रहना, अनायास व्यापार आदि में घाटा होने लग जाना, धोखा देकर भाग जाना, पारिवारिक सदस्यों के मध्य एकाएक वैमनस्य की भावना का बलवती होना आदि अनेक विषम परिस्थितियों की शांति के लिये भी बगला के तांत्रिक उपायों एवं अनुष्ठानों की मदद लेनी पड़ती है। माँ बगला के

अनुष्ठानों के प्रभाव से धन-धान्य की प्राप्ति भी सहज ढंग से होने लग जाती है। साधक की आर्थिक स्थिति में तेजी से सुधार आने लगता है। डूबा हुआ उधार का पैसा वापिस मिल जाता है।

माँ बगला का सबसे प्रमुख प्रभाव अभिचार कर्मों की शांति के दौरान अथवा शत्रुजन्य पीड़ाओं के दौरान देखने को मिलता है। व्यक्ति के ऊपर चाहे तंत्र क्रिया का प्रयोग किया गया हो अथवा शत्रु ने कृत्या से आघात करवाया हो, व्यक्ति के ऊपर कोई भी मारण, उच्चाटन, विद्वेषण जैसा कोई भी कर्म कराया गया हो, माँ बगला के विशिष्ट अनुष्ठान के द्वारा वे तत्काल प्रभावहीन एवं नष्ट हो जाते हैं। व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति में शीघ्र बदलाव देखने को मिलता है। माँ की अनुकंपा मात्र से साधक के शत्रु शीघ्र ही क्षमायाचना करने लग जाते हैं। माँ की प्रसन्नता के प्रभाव से घर-परिवार में अनावश्यक रूप में उत्पन्न हुई वैर-भाव की भावना दूर हो जाती है। माँ बगला की कृपा से टूटते हुये परिवार और तलाक की स्थिति तक पहुंच चुके पति-पत्नी के सम्बन्ध फिर से प्रेम, अपनत्व और जिम्मेदारी के भाव से भरते चले जाते हैं। मुकदमेबाजी तक में माँ का चमत्कार देखने को मिलता है। माँ के विशिष्ट तांत्रिक अनुष्ठान से हारे हुये मुकदमों में फिर से विजयश्री मिलते हुये देखी गयी है। माँ की विशेष अनुकंपा से राजनैतिक द्वन्द्व में भी निश्चित विजय प्राप्त होते देखी गयी है।

यह निश्चित रूप से माना जा सकता है कि आज के दौर में महामाई बगलामुखी की साधना, उपासनाएं करना सबसे अधिक अनुकूल सिद्ध होता है। आज समाज जिस तीव्र गति से विकास की ऊंचाई पर चढ़ता जा रहा है, उसी तीव्र गति से विभिन्न प्रकार की बाधाएं, परेशानियां, बीमारियां भी समाज में बढ़ती जा रही हैं। देखा जाये तो सम्पूर्ण जीवनचक्र ही विविध प्रकार की बाधाओं, अड़चनों, परेशानियों के बोझ तले दब सा गया है। पग-पग पर कठिनाइयों और परेशानियों से सामना होने लगा है। इसलिये कभी स्वास्थ्य संबंधी समस्या तो कभी आर्थिक समस्या, कभी परिवार संबंधी समस्यायें तो कभी संतान की शिक्षा-दीक्षा संबंधी परेशानियां आड़े आती रहती हैं। खर्चे बढ़ते जा रहे हैं, लेकिन लोगों की आमदनी में पर्याप्त वृद्धि नहीं हो रही है। अगर किसी नये काम में हाथ डाला जाता है तो वह कार्य ठीक से सिरे नहीं चढ़ता। निरन्तर नये कामों में असफलता का मुंह देखने को मिलता है। पारिवारिक कलह ने पति-पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-भाई के मध्य गहरी खाइयां बनानी शुरू कर दी है। पुत्र अपने सोच-विचार से चलना चाहता है, पुत्रवधु अपने हिसाब से घर की व्यवस्था करना चाहती है और माँ-बाप अपने आदर्शों से परिवार का संचालन करने की चाहत रखते हैं।

हर समय अकाल मृत्यु और अनचाहे संकट की आशंका बनी रहने लगी है। निरन्तर कई तरह के पूजा-पाठ करते रहने. जगह-जगह संत-महात्माओं, पंडितों, ज्योतिषियों

आदि के पास अनेक चक्कर काटने पर भी शांति नहीं मिल पा रही है। हर समय एक अज्ञात, अकारण भय लोगों के मन पर सवार रहता है। इसलिये व्यक्ति इधर-उधर भाग कर एक निश्चित समाधान पाना चाहता है, एक सुनिश्चित, स्थायी शांति की तलाश में भटकता है। अन्ततः अनुभवों से यही निष्कर्ष निकलता है कि सभी तरह की परेशानियों तथा सभी तरह के दुःखों से स्थायी रूप में मुक्ति केवलमात्र आद्यशक्ति की शरण में जाने से ही प्राप्त हो सकती है। आद्य जगतजननी के सानिध्य में ही परम शांति की राह प्राप्त हो सकती है।

परम पिता परमात्मा पर पूर्ण आस्था एवं विश्वास रखने वाले लगभग समस्त साधकों, सभी संत-पुरुषों, विशेषकर शाक्त उपासकों, औघड़ों, कपालिकों तक ने एक मत से स्वीकार किया है कि जब तक बगलामुखी की अनुकंपा प्राप्त नहीं हो जाती, जब तक उनकी तांत्रिक साधनाएं पूर्ण रूप से सम्पन्न नहीं कर ली जाती, तब तक जीवन में पूर्णता का समावेश नहीं हो सकता। जीवन में सब कुछ रहने के बावजूद जब एक रिक्तता बनी रहती है, तब तक जीवन नीरस और उत्साहीन ही बना रहेगा। इसलिये तंत्र पथ के समस्त सिद्ध साधकों ने एक मत से बगला को पूर्णता के साथ स्वयं में आत्मसात करने की वकालत निरन्तर की है। सभी का एकमत से यह विचार रहा है कि एकमात्र बगलामुखी देवी ही जीवन में पूर्णता प्रदान कर सकती है।

अनेक सिद्ध साधकों ने एक मत से माना है कि व्यक्ति गृहस्थाश्रम में रहे अथवा आध्यात्मिक पथ का अनुसरण करे, जीवन की समस्त चुनौतियों का मुकाबला केवल महाविद्या बगला साधना के माध्यम से ही कर सकता है। इन्हीं के वरदान से वह जीवन की समस्त चुनौतियों पर विजयश्री और जीवन में शाश्वत आनन्द की झलक प्राप्त कर सकता है। जिन लोगों ने तंत्र के पथ को स्वीकार कर लिया है और जो तंत्र साधना के उच्च शिखर तक पहुंचना चाहते हैं, तंत्र की दिव्य अनुभूतियां या साक्षात्कार करना चाहते हैं, उन सभी लोगों के लिये बगला साधना करना अत्यन्त आवश्यक है। इसी महाविद्या की साधना से वह साधक तंत्र के अभौतिक संसार में प्रवेश के अधिकारी बन पाते हैं।

बगलामुखी का वैदिक अभिप्राय :

बहुत से लोग बगला महाविद्या को तामसिक रूप में स्वीकार करते हैं, लेकिन उनका ऐसा सोचना ठीक नहीं है, क्योंकि माँ बगला वैष्णवी शक्ति है और उनमें त्रिशक्ति का समावेश है। इसलिये बगलामुखी साधना से साधक शीघ्र ही भय से मुक्त हो जाते हैं। उनके शत्रु उन्हें किसी तरह की हानि पहुंचाने की बात सोच नहीं पाते। धन का अभाव भी ऐसे व्यक्तियों को कभी परेशान नहीं करता। बल-बुद्धि के मामले में ऐसे साधक श्रेष्ठ सिद्ध होते हैं। उनकी वाक् शक्ति के सामने कोई अन्य टिक नहीं पाता। इसलिये तंत्र शास्त्रों में कहा गया है-

शिव भूमि युंतुं शक्तिनाद बिंदु समन्वितम्।
बीजं रक्षामम् प्रोक्तं मुनिभिर्ब्रत्स् वादिभिः।

इसी प्रकार बगलामुखी शब्द को लेकर भी आम लोगों में एक भ्रम बना हुआ है। साधारण लोग माँ के 'बगला' नाम का अर्थ पक्षी विशेष के मुख के रूप में लगाते हैं, परन्तु उनका ऐसा सोचना उचित नहीं है। संस्कृत में वल्गा कृत्या विशेष को कहा जाता है, जिसके माध्यम से अभिचार कर्म सम्पन्न किये जाते हैं। इसी प्रकार 'मुख' शब्द का अर्थ निकलना होता है। इस प्रकार **बगलामुखी** शब्द का पूर्ण अभिप्रायः होता है, जो **शक्ति शत्रुकृत अभिचार कर्म को नष्ट करे, वह बगलामुखी** है।

पौराणिक ग्रंथों में ऐसे सैंकड़ों उल्लेख प्राप्त होते हैं जिनके अनुसार देवता लोग अपने शत्रुओं को समाप्त करने के लिये कृत्या के द्वारा सूक्ष्म और गुप्त प्रहार किया करते थे। तंत्र ग्रंथों में माँ के ऐसे अनेक स्वरूपों का बार-बार वर्णन होता रहा है। यथा-

जिह्वाग्रभादाय करेण देवीं वामेन शत्रून परिपीड़यन्तीम्।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढयां द्विभुजां नमामि॥

अर्थात् शत्रु के हृदय पटल पर जो आरूढ़ है, जिनके बायें हाथ में वज्र है, जो शत्रु जिह्वा को खींचकर दायें हाथ से गदा का प्रहार करने वाली है, जो पीताम्बर स्वरूप धारण किये हुये हैं और जो द्विभुजाधारी है अर्थात् जो दोनों रूपों, वाममार्ग एवं दक्षिणमार्ग से पूजित किये जाने पर शीघ्र प्रसन्न होती है, ऐसी बगलादेवी को मैं नमस्कार करता हूं।

इसी प्रकार एक अन्य श्लोक निम्न प्रकार है-

मध्ये सुधाब्धि मणि मण्डप रत्न वेदी,
सिंहासनोपरि गतां परिपोत वर्णाम्।
पीताम्बरामरण माल्य विभूषिताङ्गी
देवीं नमामि घृत्तमुद्गा वैरिजिह्वाम्॥

अर्थात् सुधा समुद्र के मध्य अवस्थित मणि मण्डप पर अन्त्र देवी है, उस पर रत्न सिंहासन पर पीत वर्ण के वस्त्र और पीत वर्ण के आभूषण माल्य से विभूषित अंगों वाली बल्गा है। देवी के एक हस्त में शत्रु जिह्वा है और दूसरे हाथ में मुद्गर। उस पीत वस्त्रधारी बल्गा देवी को मैं नमस्कार करता हूं।

यद्यपि तंत्रशास्त्र से संबंधित जो संख्यायन तंत्र, मेरू तंत्र जैसे श्रेष्ठ ग्रंथ हैं, उनमें इनके चतुर्भुजधारी स्वरूप का भी वर्णन हुआ है। इसी चतुर्भजधारी स्वरूप का ध्यान ही तंत्र के सभी साधक और तांत्रिक लोग करते आ रहे हैं। माँ के इस चतुर्भुज रूप से माँ की अनन्त शक्ति का पूरा पता चल जाता है। इस चतुर्भुजधारी रूप में उनके प्रत्येक हाथ में क्रमशः मुद्गर, पास, वज्र एवं शत्रु जिह्वा दिखाई जाती है। माँ भक्त की पुकार से उसके शत्रुओं की

जीभ को कीलन कर देती है। ऐसे साधक से कोई भी विद्वान शास्त्रार्द्ध में विजयी नहीं हो सकता। मुकदमे आदि में इसलिये माँ का अनुष्ठान निश्चित विजयश्री दिलाता है। माँ बगला से संबंधित जो स्तोत्र, कवच, सहस्त्रनाम आदि हैं, उनके पाठ मात्र से भी विभिन्न प्रकार की बाधाएं, शत्रु क्रियायें, अभिसार संबंधी प्रयोग आदि तत्काल शांत हो जाते हैं।

माँ बगला के सिद्ध पीठ :

वैसे तो जिस स्थान पर बैठकर तांत्रिक साधनाएं सम्पन्न की जाती हैं, वह स्थान ही चेतना सम्पन्न हो जाता है, फिर भी ऐसे सैंकड़ों साधना स्थान हैं जहां बैठकर अनेक साधकों ने सफलतापूर्वक साधनाएं सम्पन्न की हैं। यह साधना स्थल अन्य स्थानों की अपेक्षा कुछ अधिक ही चेतना सम्पन्न हैं। इन स्थानों पर बैठकर अगर किसी तरह की तांत्रिक साधनाएं सम्पन्न की जाती हैं, तो उनमें साधकों को निश्चित सफलता प्राप्त होती है। तंत्र ग्रंथों में ऐसे स्थानों को सिद्ध पीठ के नाम से जाना जाता है। माँ बगलामुखी देवी के भी ऐसे अनेक सिद्ध स्थान हैं, इनमें तंत्र साधना के पांच स्थान बहुत ही प्रमुख रहे हैं।

पूरे भारत में माँ बगला के पांच सिद्ध पीठ मान गये हैं। इन सिद्ध पीठों पर महामाई स्वयं विद्यमान रहती हैं। अपनी शरण में आने वाले अपने भक्तों पर अपनी कृपा दृष्टि की वर्षा अवश्य करती है। इन शक्ति पीठों का तांत्रिक क्रियाओं के लिये और भी विशेष महत्त्व देखा जाता है। इसलिये इन शक्तिपीठों पर सदैव तांत्रिकों और शाक्त उपासकों की भीड़ जुटी रहती है और तांत्रिकों को विभिन्न प्रकार की क्रियायें करते हुये देखा जा सकता है।

कुछ विशेष अवसरों जैसे अश्विन मास और चैत्र मास के नवरात्रों के दौरान यहां लाखों की भीड़ जुट जाती है। इनके अलावा प्रत्येक वर्ष दो और ऐसे अवसर आते हैं जिन पर दूर-दूर से तांत्रिक और अघोरी आदि वहां आकर एकत्रित होते हैं। यहां वे कई प्रकार के तांत्रिक अनुष्ठान और तंत्रक्रियायें सम्पन्न करते हैं। तांत्रिकों में साधना के लिये सुनिश्चित किये गये इन दिनों को गुप्त नवरात्रों के नाम से जाना जाता है।

हमारे देश में बगला महाविद्या का एक सिद्धपीठ हिमाचल प्रदेश में ज्वाला जी, दूसरा मध्यप्रदेश में सतना के पास मैहर में, तीसरा उज्जैन में महाकाल भैरव के पास क्षिप्रा तट पर, चौथा झांसी के पास दतिया में और पांचवां तांत्रिक सिद्धपीठ उत्तरकाशी में बडकोट नामक स्थान पर मंदाकिनी के किनारे स्थित है। वैसे बगलामुखी का एक सिद्धपीठ नेपाल में भी काठमाण्डू के पास बाग्मती नदी के तट पर स्थित है। इस स्थान पर नेपाल की अधिष्ठात्री देवी 'भगवती गुह्येश्वरी' विराजमान है। यह सिद्ध स्थल श्री पशुपतिनाथ मंदिर के पास बाग्मती के गुह्येश्वरी घाट पर स्थित है। यह नेपाल राज्य की इष्टदेवी है। नवरात्रों के अवसरों पर यहां विशेष पूजा-अर्चना की प्रथा है। इन अवसरों पर सामान्य व्यक्ति माँ का आशीर्वाद लेने आता है।

हिमाचल प्रदेश के **ज्वाला जी** में माँ बगला अपने ज्वाला रूप में प्रतिष्ठित है। माँ का यह रूप अनंतकाल से इसी रूप में प्रज्ज्वलित चला आ रहा है। माँ की इन अखण्ड ज्वालाओं को समाप्त करने के लिये समय-समय पर अनेक लोगों ने कई तरह के प्रयास किये, लेकिन माँ की शक्ति के सामने वह सभी नतमस्तक होकर रह गये। ज्वाला जी के इसी सिद्ध पीठ पर बैठकर गुरु गोरखनाथ ने अपनी आराध्य माँ का साक्षात्कार प्राप्त किया था और अपनी तंत्र साधना को सम्पूर्णता प्रदान की थी। गोरख डिब्बी और गोरख पीठ के रूप में गुरु गोरखनाथ के प्रतीक अवशेष अब भी माँ के दरबार में देखे जा सकते हैं।

माँ बगला के इस सिद्ध पीठ की इतनी महिमा है कि जो भी माँ का भक्त सच्चे मन, पूर्ण श्रद्धा एवं समर्पण भाव से आकर माँ के समाने अपने कष्टों को रख देता है, माँ,अपने उस भक्त की पुकार को अवश्य ही स्वीकार कर लेती है। इसलिये आज के समय भी माँ के दरबार में भक्तों की लम्बी-लम्बी कतारें लगी रहती हैं। नवरात्रों के दौरान माँ की एक झलक पाने के लिये भी घंटों लाइन में खड़ा रहकर प्रतीक्षा करनी पड़ती है

नवरात्रों के दिनों में यहां तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न कराने वालों की होड़ सी लगी रहती है। ऐसा अनुष्ठान सम्पन्न कराने के लिये कई-कई महीनों पहले समय लेना और प्रबन्ध कराना पड़ता है। इन दिनों यहां दूर-दूर के राज्यों और विदेशों तक से श्रद्धालु आकर, जिनमें काफी अधिक संख्या में प्रख्यात राजनेताओं, उद्योगपतियों, व्यापारियों से लेकर खिलाड़ी तक सम्मिलित रहते हैं, विभिन्न तरह की इच्छाओं के लिये अनुष्ठान सम्पन्न कराते हुये देखे जा सकते हैं। अनेक राजनीतिज्ञ चुनावों में अपनी विजय सुनिश्चित करने, मंत्रीपद पाने अथवा अपनी गद्दी को बचाये रखने के लिये गुप्त रूप से भी ऐसे तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न कराते रहते हैं।

बगला महाविद्या का **दूसरा** सिद्ध पीठ **मध्यप्रदेश** में **सतना** के पास पहाड़ी पर स्थित है। वह **मैहर शक्ति पीठ** के नाम से जाना जाता है। यह शक्तिपीठ एक पहाड़ी पर स्थित है। यह 5000 वर्ष से भी अधिक प्राचीन है। ऐसे प्रमाण हैं कि इस शक्ति पीठ पर अपने दो भाइयों, भीम और अर्जुन के साथ बैठकर युधिष्ठर ने महामाई बगला से शत्रुदमन करने का आशीर्वाद प्राप्त किया था। अगले जन्म में युधिष्ठिर आल्हा रूप में जन्म लेकर महामाई की इतनी पूजा-अर्चना की कि महामाई को अपने भक्त को चिंरजीवी होने का वरदान देना पड़ा। आज भी महामाई की प्रथम पूजा का अधिकार आल्हा के लिये ही निर्धारित है। इसके पश्चात् ही पुजारी माँ की आरती-वंदना आदि करते हैं और सामान्य भक्तगणों को भगवती के दर्शन होते हैं।

मैहर स्थित इस सिद्धपीठ में माँ बगला अपने 'शारदा' रूप में प्रतिष्ठित है। इन देवी शारदा को संगीत और विद्या की देवी सरस्वती के रूप में भी जाना जाता है। महोवा का यह सिद्ध क्षेत्र तांत्रिकों के लिये विशेष आकर्षण का केन्द्र बिन्दू रहा है। इस सिद्धपीठ के

आसपास स्थित अनेक गुफाओं में अब भी अनेक तंत्र साधकों को शाक्त उपासना में संलग्न देखा जा सकता है। इन साधकों में से अनेक तो ऐसे सिद्ध पुरुष हैं, जिन्होंने स्वयं कुछ विशेष अवसरों पर सिद्धपीठ के अन्दर माँ को साक्षात प्रकट होते देखा है। ऐसी भी मान्यता है कि कुछ साधकों को अब भी वर्ष में दो बार किन्हीं विशेष अवसरों पर आल्हा के साथ माँ शारदा की पूजा-अर्चना करने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

तंत्र साधना के लिये यह उपयुक्त स्थान है। माँ के विग्रह के सामने बैठकर माँ के मंत्र का जाप करने और उनके स्तोत्र का पूर्ण तन्मयता के साथ पाठ करते ही एक अद्‌भुत आनन्द की प्राप्ति होने लगती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे साधक की पुकार को माँ स्वयं साक्षात भाव से सुन रही है। मैहर का सिद्ध पीठ अद्‌भुत चेतना सम्पन्न है।

बगला महाविद्या का **तीसरा** सिद्धपीठ **उज्जैन** में स्थित है। उज्जैन सम्राट विक्रमादित्य के समय से ही शाक्त उपासकों एवं शिव साधकों का सबसे उपयुक्त केन्द्र रहा है। यहां का महाकालेश्वर शिवलिंग द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। इसी महाकालेश्वर मंदिर से थोड़ी दूर पर ही रुद्रसागर के आसपास महाराज विक्रमादित्य की कुलदेवी 'हर सिद्ध माता' के रूप में माँ बगलामुखी विराजमान है। माँ के इस शक्तिपीठ ने उज्जैन के इस क्षिप्रा के तट को अद्‌भुत बना दिया है। इस शक्तिपीठ पर लगभग प्रत्येक दिन सैंकड़ों की संख्या में माँ के भक्त अपने दु:ख-दर्द लेकर आते हैं और माँ से अभय कृपादान लेकर वापिस लौट जाते हैं। इस शक्तिपीठ के संबंध में सदैव से अनेक प्रकार की चमत्कारिक घटनाएं सुनने को मिलती हैं।

सम्राट विक्रमादित्य पर माँ सिद्ध माता की विशेष अनुपकंपा थी। माँ के वरदहस्त के प्रताप से ही उनके सामने कोई महारथी न तो युद्धभूमि में ठहर पाया और न ही विद्वता, तर्क-वितर्क, साहित्य एवं कला, काव्य रचना के क्षेत्र में मुकाबला कर पाया। सम्राट विक्रमादित्य भारतीय इतिहास में एक ऐसे अजेय महापुरुष के रूप में जाने जाते हैं जिन्होंने अपने राज्य, शासन, युद्धभूमि, ललित कलाओं, न्याय, साहित्य, विद्या इत्यादि समस्त क्षेत्रों में अद्‌भुत कीर्तिमान स्थापित किये। यह सब महामाई की अद्‌भुत कृपा का प्रसाद ही रहा है। विक्रमादित्य के कुल पुरोहित और अन्य तंत्र उपासक माँ के तांत्रिक अनुष्ठानों में निरन्तर लगे रहते थे। स्वयं सम्राट विक्रमादित्य ने भी माँ के सामने बैठकर कई अनुष्ठान सम्पन्न किये थे। ऐसे पौराणिक उल्लेख भी मिलते हैं कि माँ के इस पीठ पर सर्वप्रथम तांत्रिक अनुष्ठान सनत्कारों के द्वारा किया गया था। वास्तव में यह एक अद्‌भुत एवं प्रभावपूर्ण क्षेत्र है जहां बैठकर तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न करने से निश्चित ही मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है।

महामाई बगला का एक अन्य **चौथा** तांत्रिक सिद्धपीठ **झांसी-ग्वालियर** मार्ग पर **दतिया** नामक स्थान पर स्थित है। यह **पीताम्बरा सिद्ध पीठ** के नाम से प्रसिद्ध है। यह

शक्तिपीठ अधिक पुराना नहीं है लेकिन इस शक्तिपीठ की मान्यता और शक्ति अद्‌भुत है। यह महामाई की अद्‌भुत महिमा ही है कि थोड़ी सी अवधि में ही इस नवीन शक्तिपीठ की सर्वत्र ख्याति फैल चुकी है।

माँ पीताम्बरा पीठ के रूप में इस शक्तिपीठ की स्थापना बैरूआ बाबा नामक एक सिद्ध संत ने 1960 के दशक में की थी। बैरूआ बाबा स्वामी के नाम से जाने जाते थे। दतिया में स्वामी जी लगभग 40 वर्ष तक साधनारत् रहे। शुरू में स्वामी जी पंचपकस नामक पहाड़ी पर आकर रहे। वहां आकर उन्होंने तारा महाविद्या की स्थापना की। वह सिद्धस्थल अब भी पूर्ण रूप से एकान्त में वैसा ही बना हुआ है। कभी-कभी कोई शाक्त उपासक वहां आकर उपासना कर लेता है।

स्वामी जी द्वारा स्थापित माँ बगला (पीताम्बरा) और धूमावती देवी का यह सिद्धपीठ अद्‌भुत ऊर्जा और चेतना सम्पन्न है। माँ के इस विग्रह के सामने नतमस्तक होते ही साधक के शरीर में कम्पनों का प्रवाह शुरू हो जाता है। यह माँ की विशेष अनुकंपा ही है कि जो भी व्यक्ति जिस किसी कामना के साथ माँ के दरवाजे पर आकर माँ का अनुष्ठान सम्पन्न करा लेता है, उस पर माँ की करुणा की वर्षा अवश्य होती है।

बगला महाविद्या का एक और सिद्धपीठ **उत्तरकाशी** के आगे **बड़कोट** के पास **मंदाकिनी के तट** पर स्थित है। यह **बगला सिद्धपीठ** के नाम से जाना जाता है। यह सिद्धपीठ बहुत अद्‌भुत है। यह महामाई का गुप्त सिद्धपीठ है तथा तंत्र साधकों के द्वारा अपनी साधनाओं के निमित्त ही काम आता है। एक समय यह सिद्धपीठ शाक्त उपासकों का प्रमुख केन्द्र हुआ करता था। अब भी इस सिद्धपीठ के आसपास अनेक तांत्रिकों को तंत्र साधनाएं करते हुये देखा जा सकता है। इसी सिद्ध स्थान से कुछ दूरी पर ही अभी कुछ समय पहले प्रसिद्ध योगी महामण्डेश्वर पायलेट बाबा ने भी एक आश्रम का निर्माण करवाया है। पायलेट बाबा का यह आश्रम कायाकल्प केन्द्र के नाम से जाना जाता है। यहां देश-विदेश से योग के जिज्ञासु सैंकड़ों लोग योग सीखने आते हैं।

बगला महाविद्या का साधना विधान :

माँ बगला की साधना के अनेक विधान रहे हैं, जिनमें शाक्त उपासकों की तंत्र साधना, औघड़ों की अघोर विद्या, कपालिकों की वीर तंत्र प्रक्रिया और नाथ योगियों की सिद्ध साधना आदि कुछ प्रमुख है। गोरखनाथ और अन्य कई शाक्त उपासकों ने माँ बगला के पांच प्रकार के मंत्र भेद बताये हैं। माँ बगला के इन विशिष्ट मंत्रों और रूपों की विशिष्ट तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न करके अनेक प्रकार के मनोवांछित फलों की सहज ही प्राप्ति की जा सकती है। विभिन्न तंत्र ग्रंथों में माँ से संबंधित इन रूपों का बहुत विस्तार से वर्णन हुआ है। माँ बगलामुखी के यह पांच रूप हैं- षडमामुखी, उल्कामुखी, जानत वेदमुखी, ज्वालामुखी, वृहद भानुमुखी। माँ बगलामुखी के यह सभी रूप अद्‌भुत, प्रभावशाली और

चैतन्य सम्पन्न हैं।

अन्य महाविद्याओं और साधनाओं की तरह ही बगला महाविद्या की साधना के भी कई विधान हैं। इनमें सबसे प्रथम और मुख्य विधान यह है कि माँ की पराशक्ति को ही पूर्ण रूप से स्वयं में आत्मसात किया जाये और उनकी परम सिद्धि प्राप्त की जाये। तांत्रिक साधनाओं में जिस सिद्धि शब्द का प्रयोग बहुतायत से होता रहा है, उसका मुख्य उद्देश्य सर्वव्यापिनी आद्यशक्ति को स्वयं में आत्मसात करना है। इसमें धीरे-धीरे स्वयं साधक ही शक्ति का एक अभिन्न अंग बनता चला जाता है। यह साधना की सर्वोच्च भाव स्थिति होती है, लेकिन इस स्थिति तक पहुंचना न तो हर किसी के लिये संभव होता है और न हर किसी की साधना का यह मुख्य उद्देश्य होता है। ऐसी परम स्थिति प्राप्त करने के लिये समय की कोई सीमा नहीं होती। साधना की ऐसी स्थिति प्राप्त करने के बाद साधक का आशीर्वाद मात्र ही उनके भक्तों के लिये पर्याप्त होता है।

माँ बगलामुखी की प्रसन्नता एवं उनकी करुणा पाने के लिये उनके विविध तरह के अनुष्ठान सम्पन्न किये जाते हैं। माँ की आद्यशक्ति को पूर्णता के साथ स्वयं में आत्मसात करने के लिये उनकी तांत्रिक साधनाएं भी की जाती हैं। तांत्रिक लोग विभिन्न कामनाओं की प्राप्ति के लिये उनके कई तरह के तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न करते हैं। बगलामुखी तंत्र की सबसे प्रभावशाली शक्ति मानी गयी है। इसलिये इनका प्रभाव प्रत्येक साधना और अनुष्ठान के दौरान प्रत्येक क्षण और विभिन्न रूपों में देखने को मिलता है।

बगला महाविद्या के अनुष्ठान शत्रुओं को निर्बल करने के लिये, बलवान शत्रुओं का मान-मर्दन करने के लिये, भूत-प्रेत आदि की बाधाओं को शांत करने के लिये, हारते हुये मुकदमों में अपने अनुकूल परिणाम पाने के लिये, गृह क्लेश से शांति के लिये, अपने ऊपर किये गये गये अभिचार कृत्यों को नष्ट करने के लिये और व्यापारिक बाधाओं आदि को दूर करने के लिये किये जाते हैं।

बगला महाविद्या के तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये 'वीर रात्रि' को सबसे प्रभावी एवं सिद्धप्रद माना जाता है। मकर संक्रान्ति का सूर्य होने पर मंगलवार के दिन चतुर्दशी तिथि हो और उस दिन पुष्य नक्षत्र पड़ जाये तो उसे वीर रात्रि कहा जाता है। ऐसी ही वीर रात्रि में माँ का अवतरण हुआ है। अगर ऐसे शुभ अवसर पर शुद्ध आचरण के साथ बगला महाविद्या के तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न किये जायें, तो उनका फल तत्काल प्राप्त होता है। यद्यपि अनुष्ठनों को सम्पन्न करने के लिये ऐसे शुभ अवसर यदा-कदा ही सौभाग्यशाली साधकों को प्राप्त होते हैं।

वीर रात्रि के अतिरिक्त बगला के ऐसे अनुष्ठान कई अन्य तिथियों एवं वारों से युक्त शुभ मुहूर्तों में भी सम्पन्न किये जाते हैं। माँ बगला अनुष्ठान के लिये किसी भी शुक्लपक्ष की अष्टमी अथवा कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि भी उपयुक्त रहती है। तांत्रिक और कृत्या

प्रयोगों को समाप्त करने के लिये माँ के विशेष तांत्रिक अनुष्ठान अमावस्या की अन्धकार युक्त रात्रि को भी सम्पन्न किये जाते हैं। माँ के ऐसे तांत्रिक अनुष्ठान नाना प्रकार की समस्याओं का निदान तो करते ही हैं, साथ ही माँ की साधना मार्ग को भी प्रशस्त करते हैं।

बगला महाविद्या के ऐसे तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न करने से पहले उनके संबंध में कुछ आवश्यक बातें समझ लेनी आवश्यक है, क्योंकि एक तो ऐसे सभी तांत्रिक अनुष्ठान विशेष पद्धति पर आधारित रहते हैं, दूसरे, इन अनुष्ठानों को पूर्णता के साथ सम्पन्न करने के लिये कई तरह की तांत्रिक वस्तुओं एवं गुरु के मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती है। तीसरे, ऐसे अनुष्ठानों को बीच में ही अधूरा छोड़ देना स्वयं अनुष्ठानकर्ता के हित में नहीं रहता। इसलिये तंत्र के क्षेत्र में प्राचीन समय से ही आद्यशक्ति की कृपा पाने और साधकों के सुषुप्त चेतना केन्द्रों को जागृत करने के लिये बहुत तरह के अनूठे प्रयोग किये जाते रहे हैं।

सभी तरह के तांत्रिक अनुष्ठानों को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिये विशिष्ट साधनाकाल का ध्यान रखना पड़ता है। अनुष्ठान के लक्ष्य के अनुसार इसकी शुरूआत विशेष तिथि, विशेष नक्षत्र योग युक्त मुहूर्त में ही करनी पड़ती है। विशेष मुहूर्त के साथ ही अनुष्ठान के लिये दिन-रात में से उपयुक्त साधना काल का चुनाव करना पड़ता है। जैसे तांत्रिक प्रयोगों, कृत्या प्रयोगों को नष्ट करने एवं भूत-प्रेत आदि के प्रकोपों को शांत करने क लिये जो बगला अनुष्ठान किये जाते हैं, उनके लिये ठीक दोपहर का समय या मध्यरात्रि का समय अधिक उपयुक्त रहता है। गृह क्लेश की शांति एवं शारीरिक पीड़ाओं से मुक्ति पाने के लिये माँ के अनुष्ठान रात्रि के दस बजे के बाद शुरू किये जाते हैं, आर्थिक स्थिति से उबरने के लिये माँ का अनुष्ठान प्रातःकाल पांच बजे के आस-पास सम्पन्न करना पड़ता है।

शुभ मुहूर्त और उपयुक्त साधना काल की तरह ही ऐसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये विशिष्ट अनुष्ठान स्थल और उसके सही रूप, रंग, आकार आदि का भी ध्यान रखना पड़ता है। अभीष्ट कार्यों के अनुसार ऐसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये माँ के सिद्धि पीठ, माँ के मंदिर या शिव मंदिर, पीपल के वृक्ष के नीचे, नदी के किनारे अथवा खण्डहर मकान या एकान्त कक्ष का चुनाव किया जाता है। प्रेतात्माओं की शांति एवं कृत्या जैसे कार्यों से मुक्ति पाने के लिये माँ के अनुष्ठान घर पर सम्पन्न नहीं करने चाहिये। ऐसे सभी अनुष्ठान घर से बाहर किसी खण्डहर में अथवा पीपल आदि वृक्ष के पास ही करने चाहिये।

अनुष्ठान स्थल की तरह उसके रूप, रंग, आकार का महत्त्व भी अनुष्ठान में रहता है। बगलामुखी अनुष्ठान के लिये त्रिकोणाकृति वाले कक्ष अधिक उपयुक्त रहते हैं। आकार की अपेक्षा रंग का इन अनुष्ठानों में विशेष महत्त्व देखा जाता है। इस महाविद्या की साधना, अनुष्ठान में पीले रंग का अधिक महत्त्व रहता है। अनुष्ठान में प्रयुक्त की जाने वाली समस्त

वस्तुएं, पूजा-सामग्री, माँ और साधक के वस्त्र, आसन, माला, पुष्प और दीपक तक पीले रंग के होने चाहिये। अनुष्ठान स्थल को भी अगर पीले रंग से पोत लिया जाये तो और भी अच्छा रहता है, अन्यथा कक्ष के दरवाजे, खिड़कियों पर पीले रंग के पर्दे डाले जा सकते हैं और कक्ष में पीले रंग के छोटे बल्ब की व्यवस्था की जा सकती है।

पीले रंग का प्रभाव इन्द्रियों की उत्तेजना को नियंत्रित करता है। व्यक्ति के सोच-विचार को प्रभावित करके उसकी निर्णय लेने की क्षमता को तीक्ष्ण बनाता है। यह बुद्धि का रंग माना गया है। माँ बगलामुखी को भी तर्क-वितर्क एवं वाक् शक्ति का प्रतीक माना गया है। माँ को पीला रंग बहुत पसंद है। अत: उनकी साधना के लिये यह रंग सर्वाधिक अनुकूल रहता है। माँ बगला के अनुष्ठानों में प्रयुक्त होने वाला पीला रंग हमारी आकांक्षाओं की पूर्ति करने वाला माना गया है। लक्ष्य सिद्धि की तीव्र इच्छा तथा तीव्र विश्लेषणात्मक क्षमता इस रंग से प्राप्ति होती है। इस रंग को पसंद करने वाले व्यक्तियों में सुख-शांति एवं समृद्धि पाने की तीव्र जिज्ञासा रहती है। ऐसे लोग दूरदृष्टा तथा जागरूक होते हैं। वह स्वभाव से मिलनसार तथा सबको अपने अनुकूल बना लेने की क्षमता रखते हैं। माँ बगला का एक नाम पीताम्बरा देवी भी है। वह इसी पीत (पीला) रंग के कारण आया है।

ऐसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये साधना तिथि, साधना स्थल और पूजा सामग्री के अलावा माँ के प्राण प्रतिष्ठित यंत्र, विभिन्न प्रकार की तांत्रिक वस्तुओं एवं विशेष बीज मंत्रों की आवश्यकता रहती है। बीज मंत्रों को किसी योग्य व्यक्ति (गुरु) के मुंह से ग्रहण करने का विधान रहा है।

प्राण प्रतिष्ठित किये यंत्रों में स्वयं इष्टदेव निवास करते हैं, इसलिये यंत्रों को एक विशिष्ट प्रक्रिया से तैयार करके उन्हें चेतना सम्पन्न करने की परम्परा रही है। ऐसे चेतना शक्ति सम्पन्न यंत्रों को पूजास्थल पर स्थापित करके इष्ट का आह्वान करने पर वह स्वयं उस यंत्र में स्थापित हो जाते हैं और सफलतापूर्वक उस अनुष्ठान को सम्पन्न करा देते हैं। ऐसे प्राण प्रतिष्ठित एवं पूजित यंत्रों को अनुष्ठान उपरांत जिन स्थानों पर स्थापित किया जाता है, वह स्थान भी विशेष भावपूर्ण बन जाते हैं। ऐसे स्थानों (घर, दुकान, भवन) पर बुरी आत्माएं अपना प्रभाव नहीं डाल पाती और न ही उनके ऊपर किसी प्रकार का तंत्र प्रयोग सफल होता है। अत: सभी तरह के अनुष्ठानों को पूर्णता के साथ सम्पन्न करने के लिये चेतना सम्पन्न अभीष्ट देव (बगला महाविद्या) के यंत्र की आवश्यकता पड़ती है। ऐसा यंत्र स्वयं अनुष्ठान से पहले निर्मित करके प्राण प्रतिष्ठित किया जा सकता है अथवा अपनी आवश्यकता अनुसार किसी शुभ मुहूर्त में पहले ही तैयार करवाया जा सकता है।

यंत्रों के निर्माण की कई प्रक्रियायें हैं और उन्हें तैयार करने में कई चीजें काम में लायी जाती है। जैसे कि भोजपत्र, अष्टगंध, अनार की कलम, स्वर्ण, रजत या ताम्रपत्र अथवा स्फटिक। जो यंत्र भोजपत्र पर निर्मित किए जाते हैं, उनका प्रभाव बहुत थोड़ा होता

है, जो 9 से 12 महीने में समाप्त हो जाता है। बिल्लौरी स्फटिक पर निर्मित किये गये यंत्रों का प्रभाव तीन वर्ष तक बना रहता है। ताम्रपत्र पर बने यंत्र तो कई वर्ष तक चेतना सम्पन्न बने रहते हैं, लेकिन उन्हें बीच-बीच में पूर्ण चेतना सम्पन्न बनाये रखने के लिये मंत्रपूरित करने की आवश्यकता पड़ती है। स्वर्ण और रजत पत्र पर निर्मित यंत्र दीर्घकाल तक चेतना सम्पन्न बने रहते हैं। यह बात ठीक से अपने मन में बैठा लेनी चाहिये कि स्वर्ण और रजत ऐसी धातुयें हैं जो हमारी बुरी या अच्छी भावनाओं से शीघ्र प्रभावित होती हैं।

तंत्र साधनाओं एवं तांत्रिक अनुष्ठानों में गुरु दीक्षा और गुरु की उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती है। यद्यपि सामान्य अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये पुस्तकों की मदद ली जा सकती है, लेकिन पुस्तकें कई बातों की पूर्ण रूप से समाधान नहीं कर पाती है। अत: ऐसी स्थिति में योग्य व्यक्ति अथवा विद्वान आचार्य से परामर्श कर लेना तथा अनुष्ठान संबंधी क्रियाओं को ठीक से समझ लेना आवश्यक होता है। इससे अनुष्ठान संबंधी समस्त आवश्यक बातें समझ में आ जाती हैं।

माँ बगला के विशिष्ट तांत्रिक अनुष्ठान :

तारा महाविद्या की तरह बगला महाविद्या को पूर्णता के साथ आत्मसात करना अर्थात् माँ बगला की परम सिद्धि को उपलब्ध हो जाना ही तंत्र साधना का मुख्य लक्ष्य रहता है, लेकिन सामान्यजनों के लिये यह मुख्य लक्ष्य नहीं होता। वह तो जीवन में आने वाली नाना प्रकार की विघ्न-बाधाओं से मुक्ति पाने की कामना ही अधिक रखते हैं। इसी कामना की पूर्ति के लिये माँ की कृपा प्राप्त करने के लिये विभिन्न प्रयोग करते हैं। परम सिद्धि को उपलब्ध होना तंत्र साधना के उच्च साधकों का ही लक्ष्य रहता है। अत: साधारणजनों को लक्ष्य करके लिखी जाने वाली इस पुस्तक में तंत्र साधना की उच्च क्रियाओं पर कोई प्रकाश नहीं डाला जा रहा है। इस पुस्तक की विषय वस्तु को कुछ निजी अनुष्ठानों तक ही सीमित रखा जा रहा है।

माँ के अनुष्ठान की प्रक्रिया :

माँ बगला के इस तांत्रिक अनुष्ठान को या तो शिव मंदिर (देवी मंदिर हो तो सर्वोत्तम) में बैठकर सम्पन्न किया जाता है अथवा इसे सम्पन्न करने के लिये किसी एकान्त कक्ष की आवश्यकता पड़ती है। सबसे पहले अनुष्ठान की जगह का चुनाव करें। उसे धो-पौंछ कर स्वच्छ करके पूजास्थल का रूप दें। अलग-अलग कामनाओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति के अनुसार अनुष्ठान के लिये अलग-अलग साधनाकाल का चुनाव किया जाता है जैसे शत्रु भय, मुकदमेबाजी, लड़ाई-झगड़े आदि में विजय पाने के उद्देश्य से किये जाने वाले अनुष्ठान प्रात:काल सूर्योदय के बाद अथवा रात्रि 10 बजे के आसपास किये जाते हैं। प्रेत आदि से मुक्ति पाने के लिये मध्य रात्रि के समय अनुष्ठान करना अनुकूल होता है। मान-सम्मान बचाने के उद्देश्य से किये जाने वाले अनुष्ठान प्रात:काल का समय अधिक उपयुक्त

रहता है। अत: यह अनुष्ठान भी प्रात:काल के समय ही सम्पन्न किया जाना चाहिये।

महामाई का यह तांत्रिक अनुष्ठान स्वयं के द्वारा भी सम्पन्न किया जा सकता है अथवा इसे सम्पन्न कराने के लिये किसी विद्वान कर्मकाण्डी ब्राह्मण की मदद भी ली जा सकती है। यद्यपि अनुष्ठान को स्वयं सम्पन्न करना अधिक श्रेष्ठ रहता है। स्वयं के द्वारा किये गये अनुष्ठान से अच्छे परिणाम मिलते हैं।

यह अनुष्ठान कुल 31 दिन का है और इसे किसी भी शुक्लपक्ष की अष्टमी से शुरू किया जा सकता है। अगर अनुष्ठान को ठीक से सम्पन्न किया जाए तो प्रथम नौ से ग्यारह दिन के भीतर ही उसका प्रभाव दिखाई पड़ने लगता है। अगर इस अनुष्ठान को नवरात्रों के दौरान सम्पन्न किया जाये तो यह अनुष्ठान नौ दिनों में ही पूर्णता के साथ सम्पन्न हो जाता है, यद्यपि इसे पूरे 31 दिन तक जारी रखना ही ठीक रहता है। कुछ विशेष परिस्थितियों में इस अनुष्ठान को निरन्तर तीन महीने तक जारी रखने पर और भी श्रेष्ठ फल की प्राप्ति होती है।

अनुष्ठान के लिये उपयुक्त दिन और साधनास्थल का चुनाव हो जाने के पश्चात् स्नान करके पूजास्थल पर जाकर दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके पीले कम्बल का आसन बिछाकर बैठ जायें। फिर अपने सामने की थोड़ी सी जगह को गाय के गोबर से लीपकर उस पर एक आम की लकड़ी से बनी चौकी रख दें। अनुष्ठान का क्रम इसके बाद प्रारम्भ होता है।

सबसे पहले चौकी पर पीले रंग का रेशमी वस्त्र बिछा लें। उस पर चांदी या स्टील की छोटी सी प्लेट रखकर उसमें गौरोचन अथवा केशरयुक्त श्वेत चन्दन मिलाकर स्याही जैसा घोल बना लें। इस स्याही से कनिष्ठा अंगुली की मदद से उसी प्लेट एक गोल घेरा बनाकर उसके अन्दर दो विपरीतमुखी त्रिकोण निर्मित करें। त्रिकोण के मध्य माँ बगला का रजत अथवा ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण यंत्र स्थापित करना है। **(यंत्र अगले पृष्ठ पर देखे)** स्थापित करने से पहले यंत्र को गंगाजल से स्नान करवा कर उसके चारों तरफ मौली लपेट दें। यंत्र के आगे गाय के घी का दीपक प्रज्ज्वलित करके रख दें। घोल में बने दो त्रिकोण माँ की शक्ति के प्रतीक हैं, इसी पर माँ का आह्वान किया जाता है। दीपक के दोनों ओर गुड़ की दो ढेलियां थाली में मौली में लपेटकर रख दें।

दीपक के सामने ही चौकी के ऊपर पीले रंग से रंगे हुये चावलों की छ: छोटी-छोटी ढेरियां बनायें और उनके मध्य एक बड़ी ढेरी पीली सरसों की बना लें। इसके उपरान्त प्रत्येक ढेरी पर एक-एक पीपल का पत्ता रखकर उसके ऊपर 1-1 हल्दी की गांठ, सुपारी, लौंग रख लें। सरसों की ढेरी के ऊपर एक हत्थाजोड़ी, गंगाजल से स्नान करवाकर एवं पीली मौली में लपेटकर रख दें।

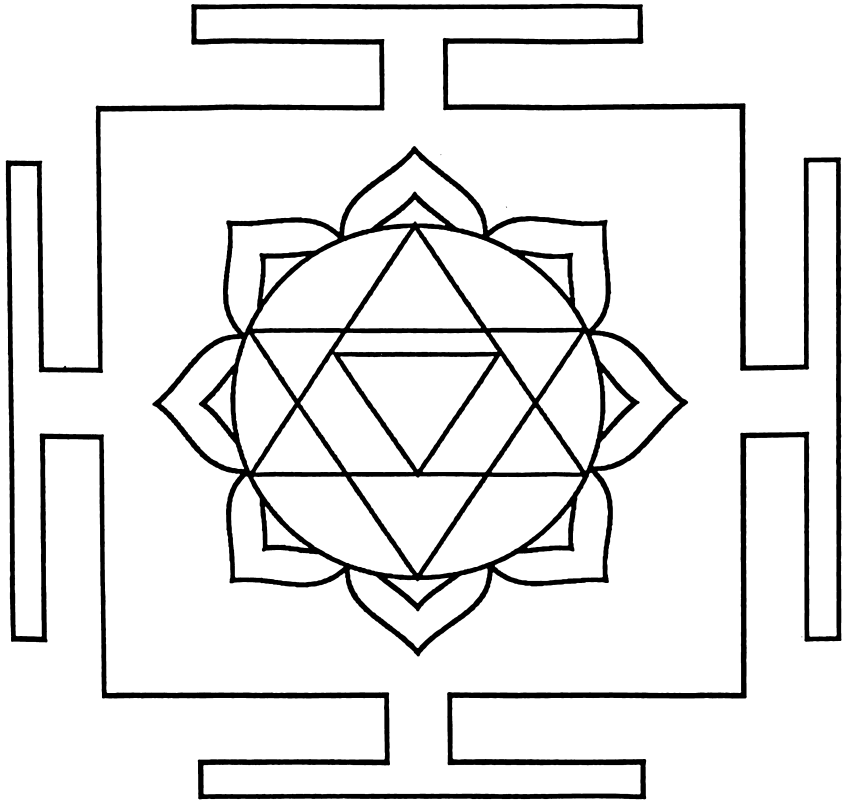

बगलामुखी यंत्र

चौकी पर पीली सरसों एवं हत्थाजोड़ी के सामने सरसों के तेल का एक दीया भी जलाकर रख दें। इस दीये को अखण्ड रूप में जलते रहना चाहिये।

इसके उपरान्त अग्रांकित मंत्र का ग्यारह बार लयबद्ध रूप में उच्चारण करते हुये भावपूर्ण स्थिति से माँ का आह्वान करना चाहिये-

ॐ चतुर्भजां त्रिनयनां कमलासन संस्थिताम्,
त्रिशूल पान पात्रं च गदा जिह्वां च विभ्रताम्।
बिंबोष्ठी कंबुकंठी च समपीन पयोधराम्,
पीतांबरा मदा धूर्णां ब्रह्मास्त्र देवतीम्॥

माँ का भावपूर्ण स्थिति में ध्यान करें कि माँ के चार भुजाएं हैं, जिनमें वह क्रमशः त्रिशूल, मद्य का पात्र, गदा और शत्रु की जीभ को पकड़ कर खींच रही हैं। उनके तीन नेत्र हैं और कमलासन पर विराजमान हैं। उनके होठ सुर्ख लाल हैं, शंख जैसी उनकी गर्दन है तथा वह पुष्ट उरोजों वाली समस्त संसार का पोषण करने वाली हैं। वह नशे में चूर शत्रु को घूर रही हैं। वह पीले वस्त्र एवं ब्रह्मास्त्र धारण किये हुये हैं। यह पीतांबरा बगलामुखी

का ध्यान है।

माँ से ज्योति रूप में प्रतिष्ठित होने का आह्वान करते रहें। आह्वान के पश्चात् माँ को पीले रंग का कोई नेवैद्य अर्पित करके उन्हें पुष्पांजलि समर्पित करें।

आह्वान के बाद माँ के सामने अपनी प्रार्थना करें कि वह अपनी अनुकंपा से आपको कष्ट से उबार लें। अन्य द्वारा यह अनुष्ठान करने पर आह्वान के बाद यजमान का नाम, पिता का नाम, गोत्र, स्थान का नाम लेकर उसके दु:ख एवं कष्ट मिटाने की प्रार्थना ब्राह्मण द्वारा की जाती है।

आह्वान और प्रार्थना (संकल्प) करने के बाद माँ की आज्ञा पाकर अभीष्ट संख्या में अग्रांकित मंत्रजाप करने की माँ से अनुमति प्राप्त की जाती है। अग्रांकित मंत्र की लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला अथवा हरिद्रा माला से जाप किया जाता है। 31 दिन में 51 हजार मंत्रजाप करने होते हैं। अत: प्रथम और 31वें दिन 21-21 मालाओं का और रोजाना 16 मालाओं का मंत्रजाप करना होता है। मंत्रजाप के समय अनुष्ठानकर्ता का ध्यान भटकना नहीं चाहिये। मंत्रजाप पूर्ण तन्मयता के साथ करना चाहिये।

माँ के इस अनुष्ठान में इस मंत्र का जाप करना होता है-

मंत्र- **ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्व दुष्टानां वाचंमुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय-कीलय बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ।**

माँ बगला का यह मंत्र विशिष्ट बीज मंत्रों के समुच्चय पर आधारित है। यद्यपि अधिकतर बीजमंत्रों के शाब्दिक अर्थ नहीं निकलते, लेकिन यह बीजमंत्र अद्‌भुत शक्ति सम्पन्न होते हैं। इसलिये उनके मंत्रोच्चार से साधक का संबंध ब्रह्माण्ड व्यापनी शक्ति के साथ स्थापित हो जाता है। इन बीजमंत्रों का सृजन साधारण बुद्धि और सामान्य मनुष्य के द्वारा संभव नहीं हुआ है। इन बीजमंत्रों को प्राचीन ऋषियों ने अपनी गहन समाधि जैसी अवस्था में अपने आत्मिक स्तर पर ग्रहण किया था। यह मंत्र हमारे प्राचीन एवं श्रेष्ठ तांत्रिकों एवं सिद्धों की अद्‌भुत खोज है।

मंत्रों में चैतन्यता का भाव उनके पूर्ण एकाग्रता एवं तन्मयता के साथ लयबद्ध उच्चारण से ही आता है। अगर ऐसे मंत्रों को 2-4 दिन भी तन्यमयता के साथ उच्चारित कर लिया जाये तो साधक के शरीर में एक विशेष प्रकार की झुरझुरी या झनझनाहट सी होने लग जाती है। इसी के बाद साधक को कई तरह की विशेष अनुभूतियां भी होने लग जाती हैं।

जब प्रथम दिन का आपका मंत्रजाप पूर्ण हो जाये तो तुरन्त अपने आसन से न उठें। सबसे पहले अग्रांकित मंत्र का तीन बार उच्चारण करते हुये सम्पूर्ण जाप माँ को ही समर्पित कर दें और माँ से आसन छोड़ने की आज्ञा प्राप्त करें। मंत्रजाप के बाद माँ के सामने एक बार पुन: अपनी प्रार्थना या संकल्प को दोहरा लेना चाहिये तथा उनकी अनुमति लेकर ही उठना चाहिये।

माँ को मंत्रजाप समर्पित करने का मंत्र है- **विद्या तत्त्व व्यापिनीं श्री बगलामुखी पादकां पूजयामि मंत्र समर्पितम्।**

माँ को अर्पित किये गये नैवेद्य को प्रसाद रूप में थोड़ा सा अंश स्वयं लेकर शेष छोटे बच्चों, विशेषकर छोटी कन्याओं में बांट देना चाहिये।

अगर अनुष्ठान के प्रथम दिन साधक व्रत रख सके तो और भी उत्तम रहता है अन्यथा उसे उस दिन कम से कम लोगों के सम्पर्क में आना चाहिये और मौन में ही रहना चाहिये। दूसरों के सम्पर्क में आते ही हमारी मानसिक एकाग्रता और चित्त की विशेष स्थिति का विखण्डन होना शुरू हो जाता है तथा मन मूल विषय से भटक जाता है। मन का यह बिखराव साधना की असफलता का प्रमुख कारण सिद्ध होता है। अत: मंत्रजाप की अवधि एवं पूरे 31 दिन के साधनाकाल में अपने चित्त को एक विशेष भावावस्था में बनाये रखने का प्रयास करना उचित रहता है।

दूसरे दिन भी अनुष्ठान का यही क्रम रहता है। प्रात:काल स्नान-ध्यान कर अनुष्ठान स्थल में अपने आसन पर बैठ जायें। पहले की तरह ही त्रिकोण के मध्य माँ बगला यंत्र को गंगाजल के छींटे देकर पूर्वानुसार स्थापित करना है और उसके सामने नई बाती लगाकर दीपक प्रज्ज्वलित कर दें। यह दीया अखण्ड रूप से संध्याकाल तक जलता रहना चाहिये। गुड़ की ढेलियों को पूर्ववत् ही रखे रहने दें। फिर सातों ढेलियां एवं हत्थाजोड़ी को गंगाजल एवं केशरयुक्त श्वेत चन्दन के छींटे देते हुये माँ के आह्वान मंत्र का ग्यारह बार जाप करना चाहिये।

माँ के भावपूर्ण आह्वान के उपरान्त उन्हें पुष्पांजलि अर्पित करके नैवेद्य का प्रसाद चढ़ायें। प्रतिदिन आह्वान से पहले वाले पुष्पों को एकत्र करके किसी पात्र में एकत्र कर लें जिन्हें बाद में या तो जल में प्रवाहित कर दें अथवा पीपल वृक्ष के नीचे डाल दें ताकि यह पैरों के नीचे नहीं आने पायें।

महामाई के आह्वान के साथ माँ के सामने अपनी प्रार्थना को बार-बार दोहरायें। माँ से प्रार्थना करें कि वह अपनी करुणा से आपको कष्टों से मुक्त कर दें। आपके समस्त दु:ख-कष्टों का अन्त कर दें। आह्वान एवं प्रार्थना के उपरान्त माँ की आज्ञा प्राप्त करके प्रथम दिन की भांति पूर्ण एकाग्रचित्त होकर रुद्राक्ष अथवा हरिद्रा माला से मंत्रजाप शुरू कर दें। दूसरे से तीसवें दिन तक 16-16 मालाओं का मंत्रजाप पूरा करना होता है।

इस प्रकार जब दूसरे दिन का जाप भी पूरा हो जाये तो अपना आसन छोड़ने से पहले पूर्ववत् तीन बार समर्पित मंत्र का उच्चारण करते हुये सम्पूर्ण जाप माँ को ही अर्पित कर दें। एक बार पुन: माँ के सामने अपनी प्रार्थना को दोहरा लेना चाहिये। माँ की आज्ञा लेकर ही अपने आसन से उठना चाहिये।

इस प्रकार इस अनुष्ठान की गति आगे बढ़ती रहनी चाहिये और यही भाव दशा एवं

सम्पूर्ण प्रक्रिया पूरे 31 दिन तक बनाये रखें। इस तरह के साधना क्रम को जारी रखने पर प्रथम सप्ताह के अन्त तक कई तरह के अनुभव कुछ लोगों को शुरू हो जाते हैं। कुछ लोगों को रात्रि को स्वप्न में अनेक प्रकार के दृश्य दिखाई देने लगते हैं। कई बार अनुष्ठान स्थल पर किसी अन्य की पदचाप से किसी की उपस्थिति का बोध होने लग जाता है। कई अन्य तरह की अनुभूतियां भी मिलने लगती हैं, लेकिन इस तरह के अनुभव उन्हीं साधकों को होते हैं जो स्वयं इस प्रकार के अनुष्ठानों को स्वयं अपने निमित्त सम्पन्न करते हैं। किसी अन्य के लिये किये जाने अथवा किसी अन्य द्वारा अनुष्ठान सम्पन्न कराने पर ऐसे अनुभव कम ही लोगों को दिखाई पड़ते हैं।

जब 31वें दिन का कार्यक्रम और मंत्रजाप सम्पूर्ण हो जाये तो अनुष्ठान की समाप्ति समझी जाती है। 31वें दिन 21 मालाओं का मंत्रजाप पूरा करना पड़ता है, साथ ही एक-एक माला मंत्रजाप के साथ हवन भी सम्पन्न करना होता है।

हवन के लिये सबसे पहले त्रिकोणाकृति वाला हवनकुण्ड निर्मित करायें, फिर उसमें विधिवत् आम की लकड़ियां रखकर अग्नि प्रज्ज्वलित करके विशेष सामग्री निर्मित समिधा की आहुतियां प्रदान की जाती हैं।

हवन की समिधा तैयार करने के लिये पीले कनेर, नीलोफर के पुष्प, पीली सरसों, भूतकेशी की जड़, बालछड़, गुलदाउद, सुगन्धबाला, श्वेत चन्दन का बुरादा, हल्दी पाउडर, लौबान, गाय का घी आदि की आवश्यकता पड़ती है। इन समस्त सामग्रियों को परस्पर मिलाकर समिधा तैयार की जाती है। मंत्रजाप वाले आसन पर बैठकर ही 108 आहुतियां माँ को मंत्र के साथ अग्नि को समर्पित की जाती हैं।

हवन के उपरांत माँ के मंत्र जाप के पूर्ववत् माँ को ही अर्पित कर दिया जाता है और अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् ग्यारह अथवा पांच कुंवारी कन्याओं को भोजन कराना होता है। कन्याओं को भोजन के साथ दान-दक्षिणा प्रदान करने से माँ बगलामुखी अति प्रसन्न होती हैं। कन्याओं को भोजन के रूप में पीले रंग के मिष्ठान, पीले फल और दक्षिणा के रूप में पीले रंग के वस्त्र मुख्यतः देने चाहिये। कन्याओं को भोजन कराने के पश्चात् स्वयं को भी परिवार सहित माँ का प्रसाद समझ कर भोजन ग्रहण करना चाहिये। इसके साथ भोजन का थोड़ा सा अंश किसी वृक्ष के नीचे रख दें। अगर वह वृक्ष पीपल का हो तो और भी अच्छा है।

जब आपके अनुष्ठान का विधिवत् समापन हो जाये, तो अगले दिन प्रातःकाल अनुष्ठान के दौरान प्रयुक्त की गई सामग्रियों, जैसे हल्दी, लौंग, सुपारी, पीली सरसों, सूखे हुये पुष्पों एवं हवनकुण्ड में भरी हुई राख आदि समस्त व्यर्थ पदार्थों को एक जगह एकत्रित करके किसी मिट्टी के पात्र में भर लें और उसके मुंह पर एक नया वस्त्र बांध कर उसे नदी में प्रवाहित कर दें। मिट्टी के पात्र को नदी में प्रवाहित करने से पहले उसमें

थोड़े से जौ और पीली सरसों के दाने भी भर दें। इसके अलावा पूजा सामग्री को नदी में प्रवाहित करने के लिये नये मिट्टी का पात्र ही प्रयुक्त करना चाहिये। इस प्रकार यह बगला अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है।

अनुष्ठान सम्पन्न होने पर बगला यंत्र के अपने पूजा स्थल पर स्थान दे देना चाहिये और नियमित रूप से प्रातः-सायंकाल धूप-दीप अर्पित करना चाहिये। अगर प्रातःकाल यह संभव नहीं हो तो संध्या समय तो अवश्य ही धूप-दीप करें। अनुष्ठान के दौरान जिस हत्थाजोड़ी का पूजा के निमित्त प्रयोग किया जाता है, वह अनुष्ठान के प्रभाव से अद्‌भुत ऊर्जायुक्त बन जाती है। अतः इस हत्थाजोड़ी को अनुष्ठान पूर्ण हो जाने के पश्चात् चौकी से उठाकर सिन्दूर, लौंग, कपूर, श्वेत चन्दन बुरादे आदि के साथ किसी स्वच्छ पात्र में ढक्कन लगा कर अपने पास रख लिया जाता है। यद्यपि इस हत्थाजोड़ी को अपने पूजास्थल, घर की तिजौरी, ऑफिस अथवा व्यापार स्थल की टेबिल आदि पर भी प्रतिष्ठित किया जा सकता है। इसके प्रभावयुक्त ऊर्जामण्डल से वहां का वातावरण शीघ्र ही अनुकूल बन जाता है। तंत्रशास्त्र में तो वैसे ही शुभ मुहूर्त में प्राप्त की गई हत्थाजोड़ी को श्रेष्ठ तांत्रिक वस्तु माना गया है। इसमें स्वतः ही सम्मोहन, वशीकरण, आकर्षण का भाव पैदा करने वाले तथा धन वृद्धिकारक गुण रहते हैं। अगर ऐसी हत्थाजोड़ी के ऊपर किसी तरह का तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न कर लिया जाये, तो उसके गुणों के बारे में तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता है। यही प्रभाव अनुष्ठान में प्रयुक्त की गई इस तांत्रोक्त हत्थाजोड़ी के साथ देखा जाता है।

अगर अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् इस हत्थाजोड़ी को घर के पूजास्थल पर ही स्थापित कर दिया जाये, तो भी यह अपना पूर्ण प्रभाव दिखाती है तथा अपने प्रभाव से घर के सदस्यों के मध्य प्रेम एवं अपनत्व की भावना को प्रबल बनाती है। इसके अलावा साधक को भी अन्य लोगों के मध्य आकर्षण का केन्द्र बिन्दू बनाये रखती है। अगर साधक किसी मुकदमे की कार्यवाही में शामिल होने के लिये जाते समय, किसी इंटरव्यू में बैठने अथवा किसी अधिकारी आदि से मिलने जाते समय इस प्रभावपूर्ण हत्थाजोड़ी को साथ ले जाये (जेब आदि में रखकर), तो सभी जगह उसे अपने अनुकूल परिणाम प्राप्त होते हैं। यह हत्थाजोड़ी अद्‌भुत तांत्रिक वस्तु है और जब तक इसे अशुद्धि के भाव से सुरक्षित बनाये रखा जाता है, तब तक यह प्रभावपूर्ण बनी रहती है।

जो साधक बगला यंत्र को शरीर पर धारण करने के इच्छुक हैं, वे अनुष्ठान प्रारम्भ करने से पूर्व उसी साधना स्थल पर भोजपत्र पर अनार अथवा पीपल की कलम से तथा अष्टगंध की स्याही से यंत्र का निर्माण कर सकते हैं। इसे भी साधना-पूजा में स्थान दें। अनुष्ठान के पूर्ण हो जाने के बाद रजत अथवा त्रिधातु के ताबीज में लाल अथवा काले धागे में बाजू पर बांध लें अथवा गले में डाल लें। ऐसा करने से माँ की कृपा हमेशा बनी रहेगी।

माँ बगला की ब्रह्मास्त्र साधना

लड़ाई-झगड़ा, शत्रुओं से परेशानी, मुकदमेबाजी और न्यायालय आदि में पूर्ण विजय पाने के लिये बगला महाविद्या की पूजा-अर्चना करने, उनके अनुष्ठान सम्पन्न कराने का प्रचलन अनंतकाल से चला आ रहा है। प्राचीनकाल से ही नहीं, आधुनिक समय में भी असंख्य लोगों ने माँ बगला की कृपा से शत्रु बाधाओं एवं न्यायालय में विचाराधीन मुकदमों आदि समस्याओं पर विजय पायी है तथा अन्य नाना प्रकार की आपदाओं से मुक्ति प्राप्त की है। माँ बगला की कृपा से उनके भक्त साधारण स्थिति से उठकर असाधारण रूप से उच्च पद तक पाने में सफल हुये हैं।

माँ बगला की उपासना, अनुष्ठान आदि शत्रु बाधाओं के दौरान ही नहीं, अपितु अन्य अनेक कार्यों के निमित्त भी की जाती है। इनका सम्बन्ध एकाएक आर्थिक हानि से बचने, किसी अज्ञात भय से बचने, किसी के धोखे में फंस जाने, अकारण किसी के साथ लड़ाई-झगड़े में पड़ जाने, किसी अज्ञात शत्रु द्वारा परेशान किये जाने की भी समस्यायें हो सकती हैं। ऐसी समस्त प्रतिकूल स्थितियों से भी महामाई अपने साधकों को सहज ही निकाल लेती है। महामाई बगला की अनुकंपा से शीघ्र ही बिगड़े हुये काम बनने लगते हैं।

माँ बगला का दस महाविद्याओं में आठवां स्थान है। दरअसल आद्य शक्ति के दस रूप दसों दिशाओं में विद्यमान रहते हैं। उनमें दक्षिण दिशा की स्वामिनी महाविद्या बगला को माना गया है, इसलिये इनकी साधना का दक्षिण मार्ग ही अधिक प्रचलित है।

शिवपुराण और देवी भागवत पुराण में शिव के दस रूपों की दस महाशक्तियां भी बताई गई हैं। यह दस महशक्तियां ही संसार में दस महाविद्याओं के रूप में पहचानी एवं पूजी जाती हैं। तंत्रशास्त्र में जगह-जगह इस बात का उल्लेख आया है कि शक्तिविहीन शिव भी शव के समान हो जाते हैं। शिव की जो भी क्षमताएं एवं शक्तियां हैं, उनके मूल में एक मात्र आद्यशक्ति ही कार्य करती है।

शिव की दस आद्यशक्तियां हैं, जो इस प्रकार जानी जाती हैं- महाकाल शिव की शक्ति काली नामक महाविद्या है, शिव के काल भैरव रूप की शक्ति भैरवी नामक महाविद्या है, कबंध नामक शिव की शक्ति छिन्नमस्तका है, त्र्यंबकम् नामक शिव रूप की शक्ति हैं भुवनेश्वरी नामक महाविद्या, ठीक उसी प्रकार एकवक्त्र नामक महारुद्र शिव की महाशक्ति बगलामुखी नामक महाविद्या है। शिव के इस रूप को वल्गामुख शिव के नाम से भी जाना जाता है। इसी आधार पर उनकी महाशक्ति को वल्गामुखी भी कह दिया जाता है।

तंत्रशास्त्र और अन्य ग्रंथों में बगलामुखी देवी का क्रोधी स्वभाव वाली न्यायदेवी के

रूप में वर्णन हुआ है। माँ का यही रूप उनके ध्यान में वर्णित किया जाता है तथा उनके चरित्र वर्णन एवं प्राचीन प्रतिमाओं में देखने को मिलता है। माँ का ध्यान एक राक्षस की जीभ को अपने हाथ से खींचते हुये रूप में किया जाता है। इस स्वरूप का भी यही भावार्थ है कि माँ अनंत शक्ति की प्रतीक है और वह अपने भक्तों के विरुद्ध किसी भी प्रकार की निंदा, झूठा आरोप, मिथ्या अफवाह, असत्य दोषारोपण आदि बिलकुल सहन नहीं करती। वह स्वत: ही अनर्गल निंदा करने वाले शत्रुओं की जीभ को कील देती है, जिससे उनके भक्त के शत्रु कमजोर पड़कर परास्त होने लगते हैं। माँ के इसी रूप की पूजा-अर्चना शत्रु बाधा से पीड़ित साधकों द्वारा की जाती है।

माँ बगला अपनी शरण में पूर्ण श्रद्धाभाव से आये भक्तों एवं अपने साधकों पर अन्याय सहन नहीं करती। माँ की शरण में नतमस्तक होते ही वह अपने भक्तों की नाना प्रकार की परेशानियों को समाप्त कर देती है। माँ बगला की अनुकंपा से अनेक लोगों को मुकदमों में विजयी होते हुये और जेल यात्रा से बचते हुये देखा गया है। नीचे ऐसी ही स्थितियों का मैं विशेष रूप से वर्णन करना चाहूंगा। इन मामलों में जेल यात्रा की निश्चित संभावना बन गयी थी, किन्तु महामाई ने अपनी विशेष अनुकंपा से अपने भक्तों को जेल जाने से बचा लिया। इन लोगों ने सही समय पर माँ का तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न कराया और माँ ने भी उन पर शीघ्र अपनी अनुकंपा करके उन्हें और अधिक कष्ट उठाने से बचा लिया।

एक मामला बेटा-बहू के तलाक से संबंधित मुकदमे में फंसे हुये परिवार का है। लड़के के पिता सेना में पुरोहित के पद पर कार्यरत थे। लड़का भी पूजा-पाठ आदि का कार्य करता था।

इस व्यक्ति ने अपने बड़े पुत्र का विवाह बड़ी ही धूमधाम से किया था। वधू भी अच्छे परिवार की थी। शुरू के डेढ़ वर्ष तक लड़के-लड़की के मध्य सब कुछ ठीक-ठीक चलता रहा। इस दौरान वह एक बच्चे के माँ-बाप भी बन गये, किन्तु उसके पश्चात् परिस्थितियों ने नाटकीय रूप लेना शुरू कर दिया। घटनाक्रम कुछ इस रूप में बदला कि लड़की इस बार मायके गयी तो उसके माँ-बाप ने उसे सुसराल भेजने से मना कर दिया। वह एक ही शर्त पर अपनी लड़की को लड़के साथ रखने को तैयार थे कि लड़का उनके पास (ससुराल) में आकर रहे और वहां पर ही अपना काम-धन्धा जमावे। यह शर्त लड़के और उसके परिवार को स्वीकार नहीं थी। इस छोटी सी हठ और अहम ने आगे चलकर कलह और मुकदमेबाजी का रूप ले लिया।

लड़की के परिवार ने ससुराल वालों पर दबाव बनाने के लिये मारने-पीटने एवं दहेज मांगने का झूठा मुकदमा दर्ज करवा दिया। शुरू में तो लड़के के पिता ने उनकी ऐसी कार्यवाहियों को हल्के रूप में लिया और सामाजिक स्तर पर आपस में ही सुलझा लेने का

प्रयास किया, किन्तु लड़की के माँ-बाप खासकर उसके भाई को ऐसा कोई समझौता स्वीकार नहीं था। परिणामस्वरूप वह अपनी लड़ाई पर दृढ़ रहे। इससे लड़के के परिवार की परेशानियां निरन्तर बढ़ती रही। महिला उत्पीड़न तथा दहेज आदि के केस ऐसे बनाये जाते हैं कि वे झूठे होते हुये भी सही लगते हैं। इन केसों में गम्भीर बात यह है कि पुलिस एवं न्यायालय में भी पुरुष पक्ष को कम विश्वसनीय माना जाता है और अक्सर अदालत का फैसला स्त्री के पक्ष में हो जाता है।

लड़के एवं लड़के के पिता ने भरसक प्रयास किया कि उनकी बेगुनाही को अदालत गंभीरता से ले किन्तु लड़के की पत्नी और उसके परिवार वालों ने ऐसे सबूत बनाकर अदालत में पेश किये कि निचली अदालत ने उन्हें दोषी मान कर सजा सुना दी और आगे ऊंची अदालत में अपील करने के लिये एक माह का समय देते हुये उनकी जमानत स्वीकार कर ली। स्थिति को देखते हुये लड़के तथा उसके पिता को विश्वास हो चला था कि ऊपरी अदालत में भी वे केस हार जायेंगे। इससे ऊपरी अदालत में जाने की उनकी क्षमता नहीं थी, इसलिये मिलने वाली सजा को भुगतने के लिये उन सबको जेल जाना ही पड़ेगा। सब भीतर से डरे-सहमे से थे। तभी उन्हें किसी परिचित ने सलाह दी कि वे माँ बगलामुखी का अनुष्ठान करायें। इसके प्रभाव से उनके बचने का कोई न कोई रास्ता अवश्य ही निकल आयेगा। उन्होंने तुरन्त माँ बगला का अनुष्ठान करवाया और इसका प्रभाव भी दिखाई दिया। ऊपरी कोर्ट ने तथ्यों की गंभीरता से विवेचना की और झूठे सबूतों को नकार कर उन्हें बरी कर दिया। माँ बगलामुखी के अनुष्ठान के बारे में आगे विस्तार से बताया जा रहा है।

दूसरा मामला एक अन्य मुकदमे से सम्बन्धित है। इस मामले में एक परिवार के चार सदस्यों को एक साजिश रच कर गबन के झूठे मामले में फंसा दिया गया। कुछ लोगों ने एक झूठा ट्रस्ट बनाकर एक सम्पत्ति को हड़पने की योजना बनाई और इसी योजना के अनुसार उन्होंने उस परिवार पर झूठा मुकदमा दर्ज किया था। वह लोग इतने चतुर थे कि वारंट निकलने तक उस परिवार को मुकदमे का पता ही नहीं चलने दिया। हरसंभव तरीके से वे न्यायालय की कार्यवाही को गुप्त रखने में सक्षम रहे। जब इस परिवार को इस सारे घटनाक्रम के बारे में पता चला, तब तक उनकी जमानत की तारीख में दस दिन ही शेष बचे थे।

सबसे बड़ी मुश्किल तो यह थी कि उन लोगों को मुकदमेबाजी, न्यायालय के कार्य की कोई जानकारी नहीं थी और न ही उनके पास जमानतदारों का इंतजाम था। वह परिवार पूर्ण आस्थावान और धार्मिक प्रवृत्ति का था। उन्होंने अपने जीवन में कभी किसी का बुरा नहीं किया था और वे इस बात पर विश्वास करते थे कि ईश्वर कभी उनका अहित और बुरा नहीं होने देगा किन्तु फिर भी उनके ऊपर यह मुसीबत टूट पड़ी थी।

इतना सब घटित हो जाने के बाद भी उन्हें पूरा विश्वास था कि पहले की तरह ही उनकी इष्टदेवी माँ बगला उन्हें इस कष्ट से सम्मान के साथ निकाल देगी। और हुआ भी बिलकुल ऐसा ही। महामाई का अनुष्ठान शुरू करते ही सातवें दिन उनकी तारीख थी, उसी दिन उन्हें जमानत करानी थी अन्यथा उन्हें जेल जाना पड़ सकता था। माँ की कृपा दृष्टि से उनके एक परिचित जमानत देने के लिये आगे आये। उनकी जमानत को स्वीकार कर लिया गया। माँ के प्रताप से न्यायालय से भी उन्हें बिना किसी परेशानी के जमानतें मिल गयी। आगे जब केस की नियमित सुनवाई प्रारम्भ हुई तो माँ की कृपा से झूठ की एक-एक परत उघड़ती चली गई। अन्त में उन्हें बेकसूर मान कर सम्मान सहित मुक्त कर दिया गया। यह महामाई का ही चमत्कार था।

वास्तव में माँ की महिमा अपरम्पार है। उनके प्रताप से असंभव कार्य भी संभव हो जाते हैं। माँ के मंत्रजाप, स्तोत्र पाठ, रक्षाकवच के नियमित पठन-पाठन से अनेक बार आश्चर्यजनक कार्य होते हुये देखे गये हैं। शत्रु शमन के लिये तो उनकी शरण में जाना ही पर्याप्त रास्ता है।

तंत्रशास्त्र में माँ बगला के इस तांत्रिक अनुष्ठान को **ब्रह्मास्त्र तंत्र प्रयोग** के नाम से जाना गया है। इस ब्रह्मास्त्र तंत्र प्रयोग की मदद से शत्रुदमन, मुकदमाबाजी, लड़ाई-झगड़े के साथ-साथ प्रतियोगिताओं में पूर्ण विजय पाने, असाध्य रोगों के जाल में पड़ जाने, दुर्घटना आदि से रक्षा के लिये, भूत-प्रेत आदि के प्रकोप से बचे रहने एवं अनिष्ट ग्रहों के प्रभाव को शान्त करने के उद्देश्य के लिये भी किया जाता है।

पौराणिक उल्लेख है कि ब्रह्मास्त्र नामक इस तंत्र प्रयोग का सबसे पहले अनुष्ठान ब्रह्मा जी ने ही सम्पन्न किया था। ब्रह्माजी के उपरान्त इस तांत्रिक अनुष्ठान को परशुराम जी ने विधिवत् सम्पन्न किया था। परशुराम को ही शाक्त मत एवं बगला अनुष्ठान का प्रथम आचार्य माना गया है। परशुराम से यह विद्या पाण्डव-कौरवों के आचार्य द्रोण ने प्राप्त की थी और इस महाविद्या को पूर्णता के साथ सिद्ध किया था। माँ बगला के शुभ आशीर्वाद से ही आचार्य द्रोण को युद्ध में परास्त करने की सामर्थ्य किसी भी महारथी के पास नहीं थी।

माँ बगला की तांत्रिक साधना करने का उल्लेख त्रेतायुग में भी मिलता है। लंकापति रावण इस विद्या के परम साधक थे, इस ब्रह्मास्त्र विद्या को उनके ज्येष्ठ पुत्र मेघनाथ ने भी सिद्ध किया था। माँ बगला की अनुकंपा से मेघनाथ लंका दहन के समय हनुमान जी के वेग को नियंत्रित करने में सक्षम हो पाये थे। बालि पुत्र अंगद भी बगला महाविद्या के परम साधक माने गये हैं। माँ बगला की स्तंभन शक्ति के बल पर ही रावण की सभा में अंगद के जमे हुये पैर को उठाने की बात तो दूर, रावण के सेनानायक पांव को हिला तक नहीं पाये थे। वास्तव में बगला का यह ब्रह्मास्त्र तंत्र प्रयोग बहुत ही अद्भुत है।

बगला के ब्रह्मास्त्र प्रयोग की विधि :

माँ बगला के इस प्रयोग को बताने से पहले मैं कुछ बातों को स्पष्ट करना उचित समझता हूं। आजकल कुछ व्यक्ति अपनी दुश्मनी निकालने के लिये अथवा अपना कोई स्वार्थ सिद्ध करने के लिये, दबाव बनाने के लिये व्यक्ति को झूठे मुकदमों में उलझा देते हैं। आम व्यक्ति तो थाने तथा कोर्ट आदि का नाम सुनते ही कांप जाता है। उसने कभी इन स्थितियों के बारे में विचार तक नहीं किया था और अब वह स्थितियां अपने सामने देख कर कांप उठता है। ऐसे लोगों के लिये माँ बगला का यह प्रयोग अत्यन्त लाभदायक है। इसके लिये यह आवश्यक है कि कोर्ट में फंसा हुआ व्यक्ति वास्तव में ही निर्दोष हो। अगर अपराध करके कोई व्यक्ति इस विधि के द्वारा माँ का अनुष्ठान करके लाभ की आशा करता है तो उसे कभी लाभ प्राप्त नहीं होता है। जो वास्तव में निर्दोष है, किन्तु फिर भी किसी ने षड्यंत्र करके उसे कोर्ट में फंसा दिया है तो उसे इस अनुष्ठान का अवश्य लाभ मिलेगा।

बगला महाविद्या की यह तांत्रोक्त अनुष्ठान साधना यूं तो 90 दिन की है, लेकिन अगर इसे पूर्ण विधान के साथ 31 दिन तक भी सम्पन्न कर लिया जाये तो भी अनेक प्रकार की परेशानियों से मुक्ति मिल जाती है। लड़ाई-झगड़े, मुकदमेबाजी और प्रतियोगिता आदि में पूर्ण विजय पाने के लिये 31 दिन का अनुष्ठान सम्पन्न करना ही पर्याप्त रहता है।

माँ बगला के तांत्रिक अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये पीले या केसरिया रंग की वस्तुओं का विशेष महत्त्व रहता है। पीला रंग को वैसे भी प्रसन्नता, मादकता, बुद्धिमत्ता, उत्साह, पौरुषता आदि का प्रतीक माना जाता है। तंत्रशास्त्र में माँ बगला का सम्बन्ध भी एक तरह से बुद्धिमत्ता, निर्णय लेने की सामर्थ्य, पौरुषता आदि के साथ ही जोड़ा गया है। इसीलिये इनके अनुष्ठान के दौरान पीले रंग की चीजों, जैसे कि गोरोचन, केसर, हल्दी, चम्पक पुष्प, पीले कनेर के पुष्प, पीले रंग के यज्ञोपवीत, पीले वस्त्र, माँ पीताम्बरा को चढ़ाने के लिये भी पीले वस्त्र, पीला कम्बल आसन के रूप में, पीला कलावा, पीले मौसमी फल, बेसन के लड्डू, पान, सुपारी, धूप, दीप, कपूर, हरिद्रा गांठ माला आदि को प्रमुखता दी जाती है। अगर साधना कक्ष को भी पीले रंग से पोत लिया जाये तो और भी श्रेष्ठ रहता है।

इनके अलावा अनुष्ठान के लिये हल्दी से रंगी कच्ची मिट्टी की हांडी, मिट्टी के दीये, लघु धेनुका शंख, स्वर्ण या रजत पत्र पर निर्मित बगला श्रीयंत्र आदि की आवश्यकता रहती है।

अनुष्ठान की शुरूआत में सबसे पहले स्वर्ण या रजत पत्र पर बगला श्रीयंत्र शुभ मुहूर्त में उत्कीर्ण करवा कर उसका विधिवत पूजन करवा लेना चाहिये। स्वर्ण या रजत पत्र के अभाव में ताम्र पर भी इस यंत्र को बनवाया जा सकता है। बगला यंत्र पूजा में गोरोचन,

केसर एवं जवाकुसुम के पुष्पों का प्रयोग किया जाना लाभप्रद माना गया है। विधिवत् पूजा से सम्पन्न यंत्र पूर्ण शक्ति सम्पन्न बन जाते हैं। ऐसे यंत्र बहुत ही प्रभावपूर्ण होते हैं।

ऐसे सभी तांत्रोक्त अनुष्ठान अगर शक्ति स्थलों अथवा देवी मंदिरों में बैठकर सम्पन्न किये जायें तो तत्काल अपना प्रभाव दिखाते हैं। यद्यपि ऐसे तांत्रोक्त अनुष्ठान किसी प्राचीन शिवालय, वृक्ष के नीचे बैठकर भी सम्पन्न किये जा सकते हैं। इसके अलावा इन्हें घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इसके लिये किसी एकान्त कक्ष का चुनाव करना पड़ता है। अगर अनुष्ठान कक्ष को पीले रंग से पुतवा लिया जाये और उसके खिड़की-दरवाजों के ऊपर पीले रंग के पर्दे चढ़ा लिये जायें तो वह स्थान और भी प्रभावपूर्ण बन जाता है।

बगला अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये मध्य रात्रि का समय अधिक अनुकूल रहता है। इसे अपनी सुविधानुसार प्रातःकाल आठ बजे के आस-पास बैठकर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इस तांत्रिक अनुष्ठान को सम्पन्न करने के दौरान साधक को दक्षिणाभिमुख होकर बैठना है। बैठने के लिये पीले कम्बल का आसन अथवा कुशा आसन का प्रयोग करना होता है।

बगला महाविद्या के इस तांत्रिक प्रयोग को अगर कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि से प्रारम्भ किया जा सकता है अथवा इसे कृष्ण पक्ष के किसी भी मंगलवार के दिन से भी शुरू किया जा सकता है।

अनुष्ठान स्थल को गाय के गोबर से लीप कर स्वच्छ एवं पवित्र किया जाता है। गाय के गोबर के अभाव में अनुष्ठान स्थल को गंगाजल से भी पवित्र किया जा सकता है। अब अनुष्ठान प्रारम्भ करने के लिये पीले कम्बल के आसन पर दक्षिणाभिमुखी होकर बैठ जायें। गोबर से लिपे स्थान के ऊपर लकड़ी की चौकी रखें। चौकी के ऊपर पीले रंग का वस्त्र बिछाकर एक चांदी अथवा स्टील की स्वच्छ प्लेट रखकर उसमें पिसी हुई हल्दी, गोरोचन एवं श्वेत चंदन के मिश्रण से एक त्रिकोण निर्मित करके उसके मध्य में निम्न मंत्र लिखकर यंत्र को स्थापित किया जाता है-

ॐ ह्रीं बगलामुख्यै नमः

बगला यंत्र को प्रतिष्ठित करने से पहले गंगाजल अथवा स्वच्छ जल से पवित्र कर लिया जाता है। यंत्र प्रतिष्ठा के पश्चात् उसकी विधिवत पूजा-अर्चना की जाती है। यंत्र को गोरोचन, हरिद्रा एवं श्वेत चंदन के मिश्रण का लेपन किया जाता है। तत्पश्चात् यंत्र को पीले रंग का वस्त्र दान, गंध दान, फल-फूल दान, ताम्बूल, घी का दीपक आदि अर्पित किया जाता है।

चौकी के ऊपर यंत्र के दाहिनी तरफ धेनुका शंख को हल्दी से पोत कर पीले रंग का कर दें। यह शंख शत्रुस्तंभन के लिये होता है। इस शंख के ऊपर तीन हरिद्रा गांठ, सात

काली मिर्च, सात लौंग, सात सुपारी, एक पीला रंगा हुआ यज्ञोपवीत भी अर्पित कर दें। इनके सामने सरसों के तेल का दीपक जला कर रख दें।

इसके अतिरिक्त चौकी के सामने जमीन के ऊपर मिट्टी का सकोरा (मिट्टी का एक बर्तन) रखकर उसमें धूनी जला दें। उसमें लौबान, पीली सरसों, श्वेत चन्दन, जवा कुसुम, लौंग, इलायची, समुद्रफेन और धूप लक्कड़ आदि की आहुति देते हुये अनुष्ठान प्रारम्भ करें।

यंत्र आदि की स्थापना एवं अन्य तांत्रिक क्रियाओं को सम्पन्न करने के उपरान्त अपने दाहिने हाथ में जल लेकर संकल्प करें। संकल्प से इस अनुष्ठान को बल मिलता है। संकल्प में देश, काल और स्थान आदि का वर्णन करते हुये अभीष्ट कार्य का उल्लेख भी करें। संकल्प इस प्रकार है-

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः। ॐ तत्सदद्यैतस्थ ब्रह्मोऽह्नि द्वितीयप्रहराद्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भारतवर्षे भरतखंडे आर्यावर्तैक देशान्तरगतदेशे अमुक क्षेत्रे विक्रम शके बौद्धावतारे अमुक..... सम्वत्सरे अमुक..... अयने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रद मासोत्तमे मासे अमुक..... मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरे अमुक नक्षत्रे अमुक योगे करणे वा अमुक राशि स्थिते सूर्ये अमुक राशि स्थिते चन्द्रे अमुक राशि स्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथा यथा राशि स्थान स्थितेषु सत्सु एवं ग्रह गुण गण विशेषण-विशिष्टे काले अमुक गोत्रः शर्माऽहं सपत्नीकः अथवा सपत्यहम् श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त पुण्य-फल-प्राप्त्यर्थं मम सकुटुम्बस्य ऐश्वर्यादि-अभिवृद्धयर्थं अप्राप्त-लक्ष्मी-प्राप्त्यर्थं प्राप्त-लक्ष्मी-चिरकाल-संरक्षणार्थं सकलमन्-ईप्सित-कामना-संसिद्धयर्थं लोके वा राजसभायां तद्द्वारे वा सर्वत्र-यथोविजयलाभदि-प्राप्त्यर्थं पुत्र पौत्राद्यभिवृद्धयर्थं च इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकल दुरितोपशमनार्थं तथा मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सवान्धवस्य अखिल-कुटुम्बसहितस्य समस्त भय-व्याधि-जरा-पीड़ामृत्यु परिहार-द्वारा आयुरारोग्यता प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्यामि अभिव्यदर्थं चतुर्थाष्टम-द्वादश स्थान-स्थित-क्रूरग्रहास्तैः संसूचितं संसूचियिषमाणं यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादश स्थानस्थितवच्छुभप्राप्तयर्थं आदित्यादि-नवग्रहाः अनुकूलता सिद्धयर्थं तथा इन्द्रादि-दश दिक्पालदेव प्रसन्नता-सिद्धयर्थम् आदिदैविक आदिभौतिक आध्यात्मिक त्रिविध-तापोपशमनार्थ धर्मार्थकाममोक्ष चतुर्विध-पुरुषार्थ सिद्धयर्थ मम जन्मांके तथा मम पतिजन्मांके सकल (ग्रह का नाम) दोषारिष्ट निर्मूलार्थं अखण्ड-दाम्पत्य सुखप्राप्ति कामनया (अमुक) देवताप्रीतयर्थं जपं (अमुक) संख्याकम् अहम् करिष्ये।

विशेष- यदि आप मंत्रजप का संकल्प संस्कृत में उच्चारित कर सकते हैं तो इसकी विधि ऊपर दी गई है। संकल्प लेते समय संवत्, मास, वार, तिथि तथा ग्रहों की राशि आदि, जो उस समय विद्यमान हों, उन्हें ही उच्चारित करना चाहिये। मंत्रजप का उद्देश्य

यदि भिन्न हो, तो वह उद्देश्य स्पष्ट रूप से इस संकल्प के अन्त में ज़हां पर उद्देश्य अंकित है, उन्हीं में जोड़ लेना चाहिये। कोष्ठक में दिये गये अमुक के स्थान पर जितने मंत्रों का जाप आप करना चाहते हैं, उतने मंत्रों की संख्या का उच्चारण करें।

अनेक पाठक ऐसे हैं जो संस्कृत में संकल्प का उच्चारण ठीक से नहीं कर सकते। ऐसे पाठकों के लिये यहां पर हिन्दी में संकल्प के बारे में जानकारी दी जा रही है। यदि आप हिन्दी में संकल्प लेते हैं तब भी आपको पूरा लाभ प्राप्त होगा। हिन्दी में संकल्प इस प्रकार है:-

हिन्दी में मंत्रजप संकल्प

मैं (अमुक) पुत्र (अमुक) गोत्र (अमुक) आज (अमुक) वार को (अमुक) तारीख को (अमुक) स्थान पर रहकर, हे (अमुक देवता) आपको प्रसन्न करने के लिये धन-धान्य, ऐश्वर्य, कीर्ति, वैभव, सम्पत्ति, सम्पदा, प्रतिष्ठा तथा सम्मान शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त करने के लिये तथा मेरे जीवन में उत्पन्न होने वाली समस्त बाधाओं के शमन हेतु तथा आपके प्रभाव से सम्बन्धित श्रेष्ठतम फल प्राप्त करने के लिये व आपसे सम्बन्धित समस्त अरिष्ट, दोष, कष्ट, पीड़ा, समस्यायें, अवरोध तथा असफलता को पूरी तरह निर्मूल करने के लिये (अमुक) मंत्र का (इतनी संख्या में) जप करने का संकल्प करता हूँ।

इतना कह कर जल अपने सामने जमीन पर छोड़ दें। इसके उपरान्त माँ बगला का विनियोग करें।

विनियोगः-

दाहिने हाथ में थोड़ा सा जल लेकर उसमें थोड़ी सी हरिद्रा डालें तथा उस पर एक पीत रंग का पुष्प लेकर विनियोग सम्पन्न करें-

अस्याः श्री ब्रह्मास्त्र विद्या बगलामुख्या नारद ऋषये नमः शिरसि।
त्रिष्टुप, छन्दसे नमो मुखे। श्री बगलामुखी देवतायै नमो हृदये।
ह्रीं बीजाय नमो गुह्ये। स्वाहा शक्तये नमः पादयोः।
ॐ नमः सर्वांगे श्री बगलामुखी देवता-प्रसादसिद्धयर्थे न्यासे विनियोगः॥

इसके उपरान्त पूर्ण एकाग्रता एवं गहन आस्था के साथ माँ का आह्वान करें।

आह्वान मंत्रः-

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बगलामुखी सर्व-दुष्टानां मुख स्तम्भिनि सकल मनोहारिणि।
अम्बिके इहामच्छ, सन्निधिं कुरू सर्वार्थं साधय साधय स्वाहा॥

आह्वान के साथ माँ को नैवेद्य के रूप में पीले रंग के बेसन के लड्डू रखें और उसके बाद माँ का निम्न ध्यान करें-

माँ बगला का ध्यान मंत्र-

ॐ सौवर्णा सनसंस्थितां त्रिनयनां पीतांशुकोल्लसिनीं।
हेमा भांगरूचिं शशांक मुकुटां सच्चम्प कस्त्रग्युताम्।
हस्तैर्मुद्गरपाश वज्र दशनां: संविभ्रतीं भूषणै॥
व्यसिगीं बगलामुखी त्रिजगतां संस्तम्भिनीं चिन्तयेत्॥

माँ का ध्यान करने के पश्चात् माँ के अग्रांकित मंत्र की प्रतिदिन ग्यारह मालाओं का जप करना होता है। जप अगर हरिद्रा माला के ऊपर अथवा लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला के ऊपर किया जाये तो शीघ्र प्रभावी होता है। माँ बगला का यह छत्तीस अक्षरों का मंत्र है। इस मंत्र में अद्भुत शक्ति सन्निहित है। मंत्र में ह्रीं बीज मंत्र माँ की असीम शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है, जो समस्त ऐश्वर्य, सुख-सम्पदा, ऋद्धि-सिद्धि को प्रदान करने वाला है। यद्यपि बगला मंत्र का पूर्ण पुरश्चरण सवा लाख या पांच लाख मंत्रजप से पूर्ण होता है, किन्तु साधारण साधकों का कार्य छत्तीस हजार मंत्रजप से ही पूर्ण हो जाता है। मंत्र इस प्रकार है-

ॐ ह्रीं बगलामुखि, सर्वदुष्टानां
वाचं मुखं परं स्तम्भय जिह्वां कीलय
बुद्धिं विनाशय ह्रीं ॐ फट्॥

बगला का मंत्रजाप सम्पन्न हो जाने के पश्चात् मिट्टी की हांडी में निरन्तर लौबान, पीली सरसों, श्वेत चंदन, जवा कुसुम, हल्दी, धूप लक्कड़ आदि के मिश्रण से आहुति देते हुये इक्कीस बार बगलामुखी के आगे लिखे गये कवच का पाठ भी कर लेना चाहिये। अपनी सामर्थ्य अनुसार कवच पाठ की आवृत्ति ग्यारह या सात अथवा तीन बार रखी जा सकती है। माँ का यह कवच सभी तरह के अभिचार कर्मों, तांत्रोक्त क्रियाओं एवं अन्य तरह की आपदाओं से रक्षा प्रदान करने वाला है। अगर माँ के इस रक्षा कवच का नियमित रूप से पूर्ण भक्तिभाव से पाठ किया जाये तो उससे ही भक्त साधक अनेक परेशानियों से बचे रहते हैं। ऐसे साधकों पर किसी भी तरह के तांत्रोक्त प्रयोग सफल नहीं हो पाते। इनके सामने शत्रु भी अपने को अहसाय महसूस करते रहते हैं। अग्नि को आहुति अर्पित करते समय समिधा में थोड़ा सा गाय का घी भी मिला लेना चाहिये।

माँ के अनुष्ठान का पाठ करते समय एक विशेष बात का ध्यान रखना चाहिये कि कवच पाठ से पूर्व एवं कवच पाठ पूर्ण होने के पश्चात् 21-21 बार माँ को उपरोक्त मंत्र का उच्चारण करते हुये अग्नि में आहुतियां प्रदान करनी चाहिये। इस कार्य से माँ बगला शीघ्र प्रसन्न होती ही है, साथ ही भैरव जैसे अन्य देव भी कृपा प्रदान करने लगते हैं।

माँ बगला के कवच पाठ का विधान निम्न प्रकार है- सबसे पहले निम्न मंत्र का पाठ करते हुये माँ को प्रणाम करें-

श्रुत्वा च बगला पूजां स्तोत्रं चापि महश्वेर।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं वद मे प्रभो॥
वैरिनाशकरं दिव्यं सर्वाशुभ विनाशकम्।
शुभदं स्मरणात्पुण्यं त्राहि मां दुःख नाशनम्॥

यह कवच भैरव द्वारा पूरित किया गया है, अतः निम्न मंत्र का पाठ करते हुये एक बार पुनः माँ का विनियोग कर लेना चाहिये। विनियोग पहले दिया गया है।

मंत्र है- कवचं श्रुण्ड वक्ष्यामि भैरविः प्राणवल्लभम्।
पठित्वा धारयित्वा तु त्रैलोक्ये विजयी भवेत्॥

माँ का कवच पाठ निम्न प्रकार है:-

कवच

शिरो मे बगला पातु हृदयैकाक्षरी परा।
ॐ ह्लीं ॐ मे ललाटे च बगला वैरिनाशिनी॥
गदाहस्ता सदा पातु मुखं मे मोक्षदायिनी।
वैरि जिह्वाधरा पातु कण्ठं मे बगलामुखी॥
उदरं नाभि देशं च पातु नित्यं परात्परा।
परात्परतरा पातु मम गुह्यं सुरेश्वरी॥
हस्तौ चैव तथा पादौ पार्वती परिपातु मे।
विवादे विषये धोरे संग्रामे रिपुसंकटे॥
पीतम्बिराधरा पातु सर्वांगं शिवनर्तकी।
श्रीविद्या समयं पातु मातंगी पूरिता शिवा॥
पातु पुत्रीं सुतन्चैव कलत्रं कालिका मम।
पातु नित्यं भ्रातरं मे पितरं शूलिनी सदा॥
रंध्रं हि बगलादेव्या कवचं सन्मुखोदितम्।
न वै देयममुख्याय सर्वसिद्धि प्रदायकम्॥
पठनाद्धारणादस्य पूजनाद्वांछितं लभेत्।
इदं कवचमज्ञात्वा यो जयेद् बगलामुखीम्॥
पिबन्ति शोणितं तस्य योगिन्यः प्रादय सादराः।
वश्ये चाकर्षणे चैव मारणे मोहने तथा॥
महाभये विपत्तौ च षष्द्या पठेद्वा पाठयेत्तु यः।
तस्य सर्वार्थसिद्धिः स्याद् भक्तियुक्तस्य पार्वति॥

यह बगला महाविद्या का तांत्रोक्त कवच है। बगला के उपरोक्त मंत्र के साथ इस रक्षा कवच के विधिवत् पाठ से साधक के चारों ओर एक ऐसा घेरा निर्मित हो जाता है, जो शत्रुओं द्वारा करवाई गई किसी भी क्रिया के लिये अभेध किले जैसा कार्य करता है। इसीलिये बगलामुखी के इस तांत्रोक्त अनुष्ठान को विधिवत् सम्पन्न कर लेने से बड़े से बड़े शत्रु से भी किसी तरह का भय नहीं रहता। इस प्रकार के तांत्रोक्त अनुष्ठानों को सम्पन्न करने की प्राचीन समय में एक आवश्यक परम्परा ही बन गयी थी। भीषण युद्ध में फंस जाने पर अधिकतर यौद्धा इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने का प्रयास करते थे। आज के समय भी यह तांत्रोक्त अनुष्ठान उतना ही प्रभावी सिद्ध होता है, जितना की पूर्व समय में होता था।

जब अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप और रक्षा कवच का पाठ सम्पन्न हो जाये तो आसन से उठने से पहले एक बार पुनः माँ के समक्ष पूर्ण श्रद्धाभाव के साथ एकाग्रचित्त होकर अपनी प्रार्थना को दोहरायें तथा माँ से बार-बार अनुरोध करते रहें कि वह शीघ्रताशीघ्र प्रसन्न होकर उसके समस्त दुःखों की पीड़ा को दूर कर दें।

प्रार्थना करने के पश्चात् माँ से आसन से उठने की आज्ञा लें। आसन छोड़कर उठ जायें। माँ को अर्पित किये नैवेद्य में से थोड़ा सा प्रसाद स्वयं ग्रहण कर लें, शेष प्रसाद को छोटे बच्चों, विशेषकर कन्याओं के बीच बांट दें। माँ को चढ़ाये फल भी बच्चों में बंटवा दें।

इस अनुष्ठान के दौरान उपवास आदि रखना आवश्यक नहीं है, लेकिन पूरे अनुष्ठान के दौरान सात्विक भोजन ग्रहण करना, भूमि पर शयन करना तथा ब्रह्मचर्य का पालन करना अनिवार्य माना जाता है। अगर अनुष्ठान के दौरान स्वयं पर इतना नियंत्रण रख पाना संभव न हो पाये तो इस अनुष्ठान को किसी विद्वान आचार्य द्वारा सम्पन्न करवा लेना चाहिये। यद्यपि अन्य तांत्रोक्त अनुष्ठानों की तरह इसको प्रारम्भ करने से पहले गुरु का आशीर्वाद प्राप्त कर लेना अनुष्ठान का एक हिस्सा रहता है।

बगला महाविद्या का यह तांत्रोक्त अनुष्ठान यूं तो तीन महीने का है, परन्तु इसे निरन्तर एक साथ सम्पन्न करने की अपेक्षा 31-31 दिन की तीन आवृत्तियों में भी सम्पन्न किया जा सकता है। आमतौर पर अधिकांश समस्यायें 31 दिन के अनुष्ठान से ही दूर हो जाती हैं।

31 दिन के इस तांत्रोक्त अनुष्ठान में पूजा-अर्चना, मंत्रजाप एवं रक्षा कवच पाठ का यही क्रम जारी रहता है। प्रत्येक दिन सबसे पहले बीते दिन की पूजा सामग्री को एकत्रित करके एक जगह रख लें, ताकि यह पांवों के नीचे नहीं आये। उस दिन का कार्यक्रम पूर्ण होने के पश्चात् किसी तालाब या बहते हुये पानी में यह सामग्री प्रवाहित कर दें अथवा प्रत्येक दिन की पूजा सामग्री को एक जगह एकत्रित रखते हुये 32वें दिन, अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् एक साथ जल में विसर्जित कर दें।

इस प्रकार इक्कतीसवें दिन अनुष्ठान का समापन हो जाता है। 31वें दिन तीन माला अतिरिक्त मंत्रजाप और एक माला (108 बार) मंत्र से प्रज्ज्वलित अग्नि में आहुतियां दी जाती हैं। मंत्रजाप एवं रक्षा कवच पाठ के पश्चात् पांच कन्याओं को भोजन करवा कर दान-दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाता है। इस तरह अनुष्ठान पूर्ण हो जाता है।

अनुष्ठान समाप्ति के अगले दिन मिट्टी के सकोरे में धेनुका शंख को रखकर जमीन में दबा दिया जाता है, जबकि बगला यंत्र को छोड़कर शेष सामग्री को एक पीले रंग के वस्त्र में बांधकर नदी या तालाब में प्रवाहित कर दिया जाता है।

माँ बगला का यह तांत्रोक्त अनुष्ठान बहुत ही अद्‌भुत एवं प्रभावशाली है। इसके प्रभाव से अधिकांश मामलों में 31 दिन के भीतर ही अनुकूल लाभ मिलने लगता है। जिन मामलों में इस अवधि में अनुकूलता नहीं आ पाती या फिर मामला अत्यधिक जटिल होता है, उन मामलों में भी तीन महीने के भीतर ही आशानुकूल परिणाम मिल जाते हैं। इस अनुष्ठान का सबसे चमत्कारिक प्रभाव उन साधकों को दिखाई देता है, जो किसी अभीष्ट इच्छा की जगह माँ की अनुकंपा पाने के उद्देश्य से इस अनुष्ठान को सम्पन्न करते हैं। ऐसे साधकों को अनुष्ठान काल के दौरान अनेक प्रकार की अलौकिक अनुभूतियां होने लगती हैं।

अनेक साधकों ने इस बात को निसंकोच स्वीकार किया है कि साधनाकाल के ग्यारहवें दिन से उन्हें साधना कक्ष में किसी अन्य की उपस्थिति का आभास होने लगता है। कई बार तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे कि साधनाकक्ष में कोई दूसरा व्यक्ति बैठकर साधक का ध्यान रख रहा हो। स्वयं मैं भी ऐसे अनुभव से गुजर चुका हूं। जब मैंने प्रथम बार बगलामहाविद्या का तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न किया तो अनुष्ठान के 17वें दिन से मुझे साधनाकक्ष में माँ का तीव्र अट्टाहास सुनाई देने लगा था। अन्य गुप्त बातों को मैं यहां प्रकट नहीं करना चाहूंगा।

माँ दुर्गा और उनकी तंत्र साधना

तंत्र साधना में दस महाविद्याओं की साधना एवं उनकी सिद्धि प्राप्त करने की परम्परा बहुत प्राचीन समय से रही है, लेकिन यह तंत्र साधनाएं सामान्य व्यक्तियों के लिये सहज एवं संभव नहीं हो पाती, जबकि नवदुर्गा के स्वरूपों की साधना, पूजा-अर्चना, उनके तांत्रिक विधान इतने सहज, सरल और सौम्य हैं कि उन्हें साधारण गृहस्थ भी सम्पन्न कर सकता है। नव दुर्गाओं की साधना का फल तक्षण मिल जाता है। यह साधनाएं ऋषियों ने साधारण गृहस्थियों को ध्यान में रखकर ही विकसित की हैं। सांसारिक कष्टों से मुक्ति पाने और अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति करने के लिये नवदुर्गा की साधना सबसे सहज पथ है।

वर्ष में दो बार ऐसे अवसर आते हैं, जिनमें नवदुर्गा की विशेष पूजा-अर्चना की जाती है। इस अवधि में अनेक तंत्र साधक अनेक प्रकार की तंत्र साधनाओं को विशेष रूप से सम्पन्न करते हैं। तंत्र साधना में इस अवधि को गुप्त नवरात्र कहा जाता है। वर्ष में पहले दो अवसरों पर सम्पन्न की जाने वाली उपासना अवधि को मूल नवरात्रि के नाम से जाना जाता है।

नवरात्रों के अवसर पर भगवती दुर्गा के नौ स्वरूपों की आराधना, साधना एवं उपासना की जाती है। तंत्र परम्परा में इन नवरात्रों का विशेष महत्त्व है। नवरात्रि का अर्थ है नौ रातें। वर्ष की शेष रात्रियां तो सांसारिक कार्यों के लिये रहती हैं, लेकिन यह नवरात्रियां कुछ विशिष्ट प्रभाव रखती हैं। इसलिये विशिष्ट पूजा-अर्चना, आराधना के लिये इनका विशेष महत्त्व स्वीकार किया गया है। नवरात्र वर्ष में चार बार आते हैं- चैत्र, आषाढ़, आश्विन और माघ मास में। नौ पवित्र रात्रियां इन महीनों के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि से लेकर नवमी तक रहती हैं। इनमें चैत्र नवरात्रों को वासंतिक तथा आश्विन नवरात्रों को शारदीय नवरात्र कहा जाता है। आषाढ़ और माघ मास में आने वाले नवरात्रों को गुप्त नवरात्र कहा जाता है। इन गुप्त नवरात्रों का महत्त्व तांत्रिकों के लिये सबसे अधिक है।

चैत्र और आश्विन मास में जो नवरात्र पड़ते हैं, उनमें आद्य शक्ति भगवती दुर्गा के नौ स्वरूपों की विशेष पूजा-अर्चना की जाती है। इस अवसर पर देश के विभिन्न भागों में पूजा का स्वरूप कई रूपों में प्रकट होता है। बंगाल, बिहार, आसाम में इसे **दुर्गोत्सव** के रूप में मनाया जाता है। वहां के आधुनिक समाज में मूल तांत्रिक उपासना का स्वरूप लुप्त हो चुका है, इसलिये वहां अब नौ रात्रियों तक पूजा-अर्चना के क्रम को जारी रखने के स्थान पर षष्ठी से लेकर दशमी तक ही पूजा का क्रम चलता है और वह भी केवल शारदीय नवरात्रियों के दौरान ही। अन्य नवरात्रों का महत्त्व तंत्र साधकों के लिये ही है।

बंगाल आदि में ऐसी मान्यता है कि नवरात्रि के अवसर पर माँ दुर्गा अपने बच्चों के साथ अपने मायके आती है। बेटी के पीहर आने पर परिवार में जो खुशी, उत्साह और उमंग होती है, कुछ वैसा ही वातावरण इन दिनों बंगाली समाज में देखने को मिलता है।

माँ के मंदिरों में सुबह-शाम पूजा-अर्चना एवं आरती का क्रम चलता है। सुबह खिचड़ी, चटनी और सब्जी का भोग लगाकर उसे ग्रहण किया जाता है। इन दिनों माँ की पूजा के अलग-अलग विधि-विधान देखने को मिलते हैं। इनमें आगमनी, अधिवास, पुष्पांजलि, बलिदान, भोग, आरती, संधि पूजा, होम तथा तर्पण-विसर्जन तक सम्मिलित रहते हैं। पहले बंगाल, बिहार, आसाम में पशु बलि और नरबलि सर्वत्र प्रचलित थी, लेकिन अब प्रतीकात्मक बलि चढ़ाने का क्रम सम्पन्न किया जाता है। नरबलि के रूप में केले का और पशुबलि के रूप में पेठे का प्रयोग किया जाता है। गन्ने की बलि भी समृद्धि प्राप्ति के लिये की जाती है। यद्यपि बंगाली समाज में आज भी एक दिन तामसिक नैवेद्य का रहता है।

नवमी के दिन कुमारी पूजा के रूप में छोटी कन्या को माँ दुर्गा के रूप में सजाया जाता है और उसी भाव में उसका पूजन भी किया जाता है। दशमी के दिन माँ की प्रतिमा के सामने बड़े-चौड़े पात्र में दूध, आलता और जल मिलाकर रखा जाता है। इस जल के मध्य में एक दर्पण रखा जाता है, जिसमें माँ के चरणों का प्रतिबिम्ब बन सके। पूजा के उपरांत घर की बेटी की तरह ही माँ दुर्गा की विदाई की जाती है। सफेद लाल साड़ी में पंक्तिबद्ध खड़ी होकर स्त्रियां माँ को सिन्दूर दान करती हैं, विदाई स्वरूप कुमकुम, मिष्ठान और भेंट अर्पण करती हैं। इसके साथ ही महिलायें परस्पर सिन्दूर की होली खेलती हैं। मुंह से मंगल ध्वनि करते हुये भीगी आंखों से माँ को भाव भरी विदाई देती हैं।

इन नवरात्रियों के अवसर पर बहुत से लोग अपने घरों में माँ के स्वरूप के साथ घट की स्थापना भी करते हैं, साथ ही जौ का रोपण भी किया जाता है। साधक माँ की भक्ति में लीन रहते हैं। माँ की सुबह-शाम विशेष पूजा-अर्चना की जाती है। उन्हें दीपदान अर्पित किया जाता है। मंत्रोच्चार के साथ विधिवत् पूजा-अर्चना के अलावा रात्रि के समय महामाई के भजन-कीर्तन करते हुये रात्रि जागरण किया जाता है।

कुछ लोग पूरे नौ दिन तक व्रत रखते हुये पानी तक ग्रहण नहीं करते। कुछ अपने शरीर पर मिट्टी डालकर उसके ऊपर ही जौ का रोपण करवा लेते हैं अथवा अपने शरीर पर अखण्ड घी का दीप जलाकर माँ की साधना में पूरी नवरात्रि वैसे ही बैठे या लेटे रहते हैं।

नवरात्रि का समापन यहां भी कंजक पूजन के साथ ही होता है। उससे पहले अष्टमी तिथि को साधक व्रत रखते हैं। अष्टदेवों ब्रह्मा, विष्णु, महेश, वराह, नारायण,

कार्तिक, इन्द्र, यम के प्रभाव से आठ मातृकाओं का जन्म हआ माना जाता है। ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेश्वरी, वाराही, योगेश्वरी, कौमारी, माहेन्द्र, यमी नामक यह आठ मातृकायें मानी गई हैं। ब्रह्मा जी ने इन अष्ट मातृकाओं की पूजा के लिये अष्टमी तिथि का विधान रखा है। अत: अष्टमी तिथि को जो साधक व्रत रखकर माँ की आराधना करता है, उस पर अष्ट मातृकायें भी प्रसन्न हो जाती हैं। साधक को आरोग्य के साथ-साथ धन, समृद्धि और समस्त ऐश्वर्य प्रदान करती हैं। अष्टमी के अगले दिन कंजक पूजन का विधान है।

यद्यपि तंत्र साधना में नवरात्रों के प्रत्येक दिन माँ की साधना के साथ कंजक पूजन को अनिवार्य माना गया है, लेकिन साधारण पूजा में अष्टमी या नवमी तिथि को नौ कन्याओं के साथ एक लांगुर की पूजा माँ की आराधना का अंग मानी गई है। नौ कन्यायें माँ के नौ स्वरूपों क्रमश: शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघंटा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिरात्री का प्रतिनिधित्व करती हैं। तंत्र शास्त्र में कन्या पूजन के लिये 2 से 10 वर्ष तक की कंजकाओं को पूजने का विधान है।

तांत्रिक ग्रंथों में दो वर्ष की कन्या को कुमारी, तीन वर्ष की कन्या को त्रिमूर्ति, चार वर्ष की कन्या को कल्याणी, पांच वर्ष की कन्या को रोहिणी, छह वर्ष की कन्या को कालिका, सात वर्ष की कन्या को शाम्भवी, आठ वर्ष की कन्या को सुभद्रा कहा गया है। तांत्रिक ग्रंथों में कंजक पूजन को माँ का सात्विक रूप बताया गया है तथा जगह-जगह ऐसा उल्लेख हुआ है कि माँ की पूजा के साथ कंजक पूजन करने से दु:ख, दरिद्रता का नाश होता है। शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। धन, आयु व बल-बुद्धि की वृद्धि होती है। इनमें त्रिमूर्ति के पूजन से पुत्र प्राप्ति, कल्याणी के पूजन से सर्वमनोकामनाओं एवं विजय की प्राप्ति, रोहिणी के पूजन से रोगों का नाश, कालिका के पूजन से शत्रुभय, शाम्भवी के पूजन से रुके हुये कामों की बाधा हटती है तथा मुकदमों में विजय प्राप्ति होती है। सुभद्रा के पूजन से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है, जबकि एक साथ नवदुर्गाओं एवं चण्डिका पूजन से सभी सुख, सौभाग्य सहज ही प्राप्त हो जाते हैं।

नवदुर्गा साधना का रहस्य :

नवदुर्गाओं के सम्बन्ध में ऋषि मार्कण्डेय प्रदत्त भगवती पुराण अर्थात् दुर्गा सप्तशती में स्पष्ट उल्लेख करते हुये लिखा है-

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्॥
पंचमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनाति च।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्॥
नवमं सिद्धिरात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता:।
'उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणेन महात्मना॥

अर्थात् आसुरी शक्तियों का नाश करने हेतु एवं अपने साधकों का कल्याण करने व धर्म की पुनर्स्थापना के लिये भगवती दुर्गा अपनी अनन्त, आलौकिक शक्तियों के साथ समय-समय पर विभिन्न स्वरूपों में अवतरित होती हैं। माँ के उपरोक्त नौ स्वरूप भी उनमें से ही हैं। माँ के इन स्वरूपों की साधना-उपासना करके माँ का आशीर्वाद सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। जीवन में विशेष रूप से माँ की आराधना अगर नवरात्रों में की जाये तो वांछित फल प्राप्त होने के साथ-साथ मनोकामनायें भी पूर्ण होती हैं। समस्याओं से सहज ही छुटकारा पाते हुये सभी सुखों का आनन्द लिया जा सकता है।

नवरात्रि के अवसर पर इन्हीं नौ स्वरूपों की साधना का विधान रहा है। इनकी साधना की दो परम्पराएं रही हैं। साधना का एक स्वरूप तंत्र साधकों के निमित्त है, जबकि दूसरा स्वरूप आम साधकों के लिये है। यहां नवदुर्गाओं के इसी सहज साधना के रूप पर प्रकाश डाला जा रहा है। आम साधकों के लिये तो नवरात्रि के अवसर पर प्रत्येक रात्रि क्रमशः एक-एक स्वरूप की आराधना का विधान है। माँ की यह आराधना प्रत्येक दिन व्रत रख कर अथवा शुद्ध-सात्विक भावना बनाये रखकर एवं कंजक पूजन के साथ सम्पन्न होती है।

नवरात्रियों में नवदुर्गा के नौ रूपों की उपासाना का विधान अग्रांकित क्रम से रहता है-

प्रथम रात्रि पूजा :

प्रथम रात्रि को भगवती दुर्गा के प्रथम स्वरूप **शैलपुत्री** की आराधना की जाती है। पर्वत राज हिमालय की पुत्री होने के कारण इनका नाम **शैलपुत्री** पड़ा है। इन्हीं का एक अन्य नाम सती भी है। यह वृष पर सवार रहती हैं। इनके दायें हाथ में त्रिशूल तथा बायें हाथ में कमल पुष्प सुशोभित रहता है। माँ का यह स्वरूप अनंत शक्तियों का प्रतीक है। तंत्र की एक अन्य पद्धति में इन्हें ही कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप माना गया है, जो जन्म-जन्मान्तर से व्यक्ति के मूलाधार चक्र पर सुषुप्तावस्था में निष्क्रिय रहती है, लेकिन जाग्रत होने पर उसे असीम क्षमताओं से सम्पन्न कर देती है।

प्रथम नवरात्रि को माँ के इस स्वरूप की पूजा दुःख, दरिद्रता से मुक्ति पाने एवं विवाह आदि की बाधाओं को दूर करने के लिये की जाती है।

शैलपुत्री की उपासना का मंत्र- शैलपुत्री की उपासना का मंत्र इस प्रकार है-

वन्दे वाञ्छितलाभाय चन्द्रार्धकृतशेखराम्।
वृषारूढ़ां शूलधरां शैलपुत्री यशस्विनीम्॥

द्वितीय रात्रि पूजा :

दूसरी नवरात्रि को भगवती दुर्गा के द्वितीय स्वरूप के रूप में **ब्रह्मचारिणी** की आराधना की जाती है। ब्रह्मचारिणी शब्द का अर्थ है पूर्णत्व के साथ सद् आचरण करने

वाली। यह सदैव तपस्या में लीन रहती हैं। इसलिये इनकी शरण में जाने व इनकी आराधना करने से साधक में तप, त्याग, वैराग्य के साथ-साथ संयम व सदाचरण का भाव बढ़ता है तथा साधक मुक्ति की अवस्था का लाभ प्राप्त करता है। तंत्र साधना की हठयोग परम्परा से ब्रह्मचारिणी का स्थान स्वाधिष्ठान चक्र पर माना गया है। इसलिये इस चक्र के जागरण से साधक में विद्या, बुद्धि व ज्ञान की वृद्धि होती है।

ब्रह्मचारिणी देवी का स्वरूप अत्यन्त तेजमय है। इनके दायें हाथ में जप की माला तथा बायें हाथ में कमण्डल है। इस स्वरूप का भी यही भाव है कि माँ ज्ञान के सर्वोच्च शिखर को प्राप्त कर चुकी है। भगवद् पुराण में आया है कि माँ ने नारद जी के परामर्श से भगवान शिव को पति रूप में प्राप्त करने के लिये घोर तपस्या की थी। इसी से देवताओं को राक्षसों के अत्याचार एवं संताप से मुक्ति प्राप्त हो पायी थी। माँ के इस स्वरूप की जो साधक विधिवत पूजा-अर्चना करता है, निश्चित ही माँ उसकी समस्त बाधाएं दूर कर देती हैं। उस साधक को फिर सर्वत्र विजय प्राप्त होती है।

ब्रह्मचारिणी देवी का उपासना मंत्रः- ब्रह्मचारिणी देवी का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

दधाना करपद्माभ्यामक्ष माला कमंडलू।
देवी प्रसीदतु मयि ब्रह्मचारिण्यनुत्तम॥

तृतीय रात्रि पूजा :

माँ भगवती की तीसरी शक्ति का नाम **चन्द्रघण्टा** है। इनके मस्तिष्क में घण्टे की आकार की अर्द्धचन्द्राकृति झलकती रहती है, इसलिये इन्हें **चन्द्रघण्टा** कहा जाता है। नवरात्रि उपासना में तीसरी रात्रि चन्द्रघण्टा की रहती है। अतः तृतीय नवरात्रि को इन्हीं के विग्रह की पूजा-अर्चना की जाती है।

इनके शरीर का रंग स्वर्ण की भांति कांतिमय है। इनके तीन नेत्र व दस हाथ हैं। इनके दसों हाथों में क्रमशः खड्ग, शस्त्र, बाण आदि अनेक शस्त्र सुशोभित रहते हैं। माँ चन्द्रघण्टा सिंह पर सवारी करती हैं। माँ का यह स्वरूप परम् शांतिदायक और कल्याणप्रद तो है ही, इनके वीर भाव को भी प्रकट करता है। इसलिये इनके सामने से सभी राक्षस भाग खड़े होते हैं। इसी तरह जो साधक माँ का कृपापात्र बन जाता है, उसके जीवन में फिर किसी तरह का अभाव नहीं रहता। वह समस्त सुखों को सहज ही प्राप्त कर लेता है।

तांत्रिकों की एक अन्य परम्परा में माँ चन्द्रघण्टा का स्थान मणिपुर चक्र पर माना गया है। अतः जब तंत्र के अभ्यास से व्यक्ति की शक्ति मणिपुर चक्र पर आकर उसे जाग्रत करने लगती है, तो सहज ही उस साधक को अनेक अलौकिक शक्तियां प्राप्ति होने लगती हैं।

चन्द्रघण्टा देवी का उपासना मंत्रः- चन्द्रघण्टा देवी का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

पिण्डज प्रवरारूढ़ा चण्डकोपास्त्रकैर्युता।
प्रसादं तनुते मह्यं चन्द्रघण्टेति विश्रुता॥

चतुर्थ रात्रि पूजा :

माँ भगवती के चतुर्थ स्वरूप का नाम **कूष्माण्डा** है। अपनी मंद, हल्की मुस्कान द्वारा अखण्ड ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने के कारण इन्हें **कूष्माण्डा** नाम दिया गया है। जब सृष्टि अस्तित्व में नहीं आयी थी, सर्वत्र घोर अन्धकार व्याप्त था, तब इन्हीं देवी ने हर्षित हास्ययुक्त खेल ही खेल में इस ब्रह्माण्ड की रचना की थी। अतः यही सृष्टि का आदि स्वरूप आद्यशक्ति है। भगवद् पुराण में माँ का निवास सूर्यमण्डल के अन्दर बताया गया है। इसलिये ये अत्यन्त, दिव्य तेज युक्त हैं। इनका तेज दसों दिशाओं में व्याप्त रहता है।

माँ कूष्माण्डा का स्वरूप अष्टभुजा युक्त माना गया है। इनके आठों हाथों में क्रमशः धनुष बाण, कमण्डल, कमल, अमृत कलश, गदा और चक्र एवं जप माला सुशोभित रहती है। माँ का वाहन सिंह है। माँ का यह स्वरूप विद्या, बुद्धि, विवेक, त्याग, वैराग्य के साथ-साथ अजेयता का प्रतीक है। इसलिये जो साधक माँ की शरण में आकर उनकी कृपा दृष्टि प्राप्ति कर लेता है, उसके शारीरिक, मानसिक और भौतिक, सभी दुःखों का अन्त हो जाता है। साधक को रोग-शोक से छुटकारा मिलता है तथा उसके आरोग्य एवं यश में निरन्तर वृद्धि होती चली जाती है।

तांत्रिकों की दूसरी विद्या में कूष्माण्डा नामक इस आदिशक्ति का निवास अनाहत चक्र में माना गया है। अनाहत चक्र की स्थिति छाती के मध्य हृदय स्थल पर मानी गयी है। अतः अनाहत चक्र की जाग्रति से ही साधक स्थूल शरीर की चेतना का परित्याग करके आत्मिक शरीर के स्तर में प्रविष्ट होता है। यह एक तरह से साधक का आध्यात्मिक धरातल पर पुनर्जन्म होता है।

माँ कूष्माण्डा का उपासना मंत्रः- माँ कूष्माण्डा का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

सुरासम्पूर्ण कलशं: रुधिराप्लुतमेव च।
दधाना हस्तपद्माभ्यां कूष्माण्डा शुभदास्तु मे॥

पंचम रात्रि पूजा :

नवरात्रियों में पांचवीं रात्रि को भगवती के पांचवें स्वरूप **स्कन्दमाता** की पूजा-अर्चना करने का विधान है। माँ शैलपुत्री का विवाह शिवजी के साथ हो जाने के पश्चात् स्कन्द कुमार (इन्हें कार्तिकेय भी कहा जाता है) का जन्म हुआ। प्रसिद्ध देवासुर संग्राम के समय यही स्कन्द देवताओं के सेनापति बने थे। पुराणों में इन्हें कुमार और शक्तिधर कहकर इनकी बड़ी महिमा कही गयी है। इनका वाहन मयूर कहा जाता है। इन्हीं स्कन्द

की माता होने के कारण भगवती के इस पंचम स्वरूप को स्कन्दमाता कहा गया।

स्कन्दमाता चार भुजाओं वाली हैं। इनके दायें हाथ में कमल पुष्प है। ऊपर वाले बायें हाथ में भी कमल पुष्प है। बायां एक हाथ वरमुद्रा में है। माँ की गोद में स्कन्द बैठे हैं। माँ के तीन नेत्र हैं तथा माँ कमलासान पर आसीन हैं। माँ का यह स्वरूप बहुत ही अनुपम है। यह चारों पुरुषार्थों को एक साथ प्रदान करने वाला है। इसलिये माँ के इस स्वरूप की आराधना से साधकों को समस्त सुख सहज ही प्राप्त हो जाते हैं, वह आध्यात्मिक मार्ग पर भी तेजी से अग्रसर होता है। माँ के तंत्र विधान से चारों पुरुषार्थों को प्राप्त किया जा सकता है।

तंत्र साधना की एक अन्य पद्धति में स्कन्दमाता के रूप में इस आदिशक्ति की उपस्थिति विशुद्ध चक्र में मानी गयी है। विशुद्ध चक्र का केन्द्र कण्ठ में है, जहां से शक्ति आज्ञाचक्र और सहस्त्रार चक्र की ओर उर्ध्वगमन करती है।

स्कन्दमाता का उपासना मंत्र:- स्कन्दमाता का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

सिंहासनगता नित्यं पद्माश्रित करद्वया।
शभदास्तु सदां देवी स्कन्दमाता यशस्विनी॥

छठवीं रात्रि पूजा :

नवरात्रियों में छठे दिन आदिशक्ति के छठे स्वरूप **कात्यायनी** की आराधना की जाती है। महर्षि कात्यायन की पुत्री रूप में जन्म लेने के कारण माँ दुर्गा के इस स्वरूप का नाम **कात्यायनी** के रूप में विख्यात हुआ। ऐसी कथा है कि कत नामक एक महर्षि थे। उनके पुत्र ऋषि कात्य हुये। इन्हीं कात्य के गोत्र में महर्षि कात्यायन का जन्म हुआ था। इन्होंने भगवती पराम्बा की उपासना करते हुये बहुत वर्षों तक साधना की। इनकी इच्छा थी कि उनके घर स्वयं माँ भगवती पुत्री के रूप में जन्म लेकर उन्हें कृतार्थ करें। इसलिये जगत जननी को उनके घर कात्यायनी के रूप में अवतरित होना पड़ा।

माँ कात्यायनी के स्वरूप की आभा स्वर्णमयी है। यह तीन नेत्रों और चार भुजाओं वाली हैं। इनका दायां हाथ वर देने की मुद्रा में है। बायें हाथों में तलवार व कमल पुष्प सुशोभित हैं। माँ सिंह पर सवारी करती है। अपने भक्तों की सभी कामनाओं की पूर्ति करने वाली है। नवरात्रियों के छठवें दिन इनकी विशेष पूजा-अर्चना करने से साधक के समस्त दु:ख कष्ट दूर हो जाते हैं। ऐसा उल्लेख है कि द्वापर युग में ब्रज की गोपियों ने श्रीकृष्ण को पति स्वरूप में प्राप्त करने के लिये माँ के इसी रूप की आराधना की थी।

तंत्र साधना की हठयोग पद्धति में आद्यशक्ति के इस स्वरूप का निवास भृकुटी के मध्य आज्ञा चक्र पर माना गया है। इसलिये तंत्र साधना में इस स्थान की जाग्रति से साधक का रूपान्तर होने लगता है तथा उसकी चेतना पराभौतिक जगत में प्रविष्ट कर जाती है।

माँ कात्यायनी का उपासना मंत्र:- माँ कात्यायनी का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

चन्द्रहासौ ज्वलकरा शार्दूलवरवाहना।
कात्यायनी शुभं दधादेवी दानव धातिनी॥

सप्तम रात्रि पूजा :

आद्यशक्ति के सप्तम स्वरूप की आराधना सप्तम नवरात्रि को की जाती है। माँ का सप्तम स्वरूप **कालरात्रि** के नाम से जाना जाता है। माँ का यह अद्‌भुत स्वरूप है। इनका रंग श्याम है। बाल बिखरे हुये हैं। यह त्रिनेत्रधारी एवं चतुर्भुजी हैं। इनके ऊपर उठे हुये दायें हाथ में तलवार है व दूसरा हाथ वर देने की मुद्रा में उठा हुआ है। बायें ऊपर वाले हाथ में लोहे का कांटा व नीचे वाले हाथ में कटार है। माँ गदर्भ पर सवार रहती हैं। नासिका से ज्वाला निकलती रहती है। गले में माला धारण किये रहती हैं। माँ सबको भयाक्रान्त रखने वाले काल को भी भय देने वाली है। इसलिये इन्हें **कालरात्रि** कहा जाता है।

माँ का यह स्वरूप अत्यन्त विकराल है, पर वह अपने भक्तों के लिये बहुत सुकोमल स्वभाव रखती हैं। जो कोई भी व्यक्ति माँ की शरण में पहुंच जाता है, अपने उस भक्त को माँ हर संकट से उबारे रखती हैं। माँ की कृपा से साधक अपनी सभी आकांक्षाओं की पूर्ति कर लेता है।

तंत्र साधना की एक अन्य पद्धति में माँ के इस स्वरूप का स्थान मस्तिष्क स्थित सहस्त्रार चक्र में माना गया है। जो तांत्रिक सहस्त्रार चक्र की जाग्रति कर लेता है, उसके सामने अनन्त संभावनाओं के द्वार खुलते चले जाते हैं। ऐसे साधक अष्ट सिद्धियां भी सहज से प्राप्त कर लेते हैं।

माँ कालरात्रि की उपासना का मंत्र:- माँ कालरात्रि की उपासना का मंत्र इस प्रकार है:-

चतुर्बाहु युक्तादेवी चन्द्रहासेन शोभिता।
गदर्भे च समारूढ़ा कालरात्रि भयावहा॥

अष्टम रात्रि पूजा :

माँ भगवती की आठवीं शक्ति का नाम **महागौरी** है। यह गौर वर्णा हैं। माँ के इस गौरे रंग की उपमा शंख, चन्द्र और कुन्द के पुष्प से दी जाती है। माँ का रूप आठ वर्षीय कन्या जैसा है। इनके समस्त वस्त्र व आभूषण भी श्वेत रंगी हैं। त्रिनेत्री व चतुर्भुजी माँ की मुख मुद्रा शांत व सौम्य है, जिस पर बाल सुलभ मुस्कान झलकती रहती है। माँ का वाहन वृष है। इनका ऊपरी दायां हाथ वरमुद्रा में है। यह नीचे वाले हाथ में त्रिशूल धारण किये हुये हैं। इनके ऊपरी बायें हाथ में डमरू तथा नीचे वाले हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में हैं।

शिव को प्राप्त करने के लिये दीर्घ अवधि तक की साधना की थी। इस साधना से उन्हें महागौरव की प्राप्ति हुई थी। महागौरी की साधना से साधक का यश और प्रताप निरन्तर बढ़ता जाता है। भगवान शिव की कृपा भी इन पर निरन्तर बनी रहती है। मृत्यु उपरान्त इन्हें शिव तत्त्व की प्राप्ति होती है।

महागौरी का उपासना मंत्रः- महागौरी का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

श्वेते वृषे समारूढ़ा श्वेताम्बरधरा शुचिः।
महागौरी शुभं दद्यान्महादेव प्रमोददा॥

नवम रात्रि पूजा :

नवरात्रों की नवम रात्रि **सिद्धिदात्री** की रहती है। यह आद्यशक्ति माँ दुर्गा का नवम स्वरूप है। माँ सिद्धिदात्री अपने साधकों को समस्त रिद्धियां, सिद्धियां एवं लौकिक व परालौकिक सुखों को प्रदान करने वाली हैं। माँ के इस स्वरूप की साधना से अन्त में मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

माँ सिद्धिदात्री का स्वरूप चतुर्भुजी है जिनके दाहिने नीचे वाले हाथ में चक्र, ऊपर वाले हाथ में गदा तथा बायीं तरफ के नीचे वाले हाथ में शंख व ऊपरी हाथ में कमल पुष्प सुशोभित रहता है। माँ कमल पुष्प पर ही आसीन रहती हैं। माँ का यह स्वरूप समस्त लौकिक एवं परालौकिक सुखों को प्राप्ति कराने वाला है।

तांत्रिकों की अन्य परम्परा में सिद्धिदात्री स्वरूप में माँ की साधना अष्टसिद्धियों अर्थात् अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व की प्राप्ति के उद्देश्य के लिये भी की जाती है।

माँ सिद्धिदात्री का उपासना मंत्रः- माँ सिद्धिदात्री का उपासना मंत्र इस प्रकार है:-

सिद्धगन्धर्व यक्षाद्यैर सुरैरमैररपि।
सेव्यमाना सदां भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी॥

अत: निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि माँ भगवती के उपरोक्त नौ स्वरूपों की पूर्ण विधि-विधान से आराधना करने से सहज ही अपने समस्त कष्टों से छुटकारा पाया जा सकता है तथा अनेक प्रकार की मनोकामनाओं की प्राप्ति की जा सकती है। नवरात्रियों के दौरान इनकी विशेष पूजा-अर्चना का विधान प्राचीन समय से चला आ रहा है।

भगवती दुर्गा और उनके नौ रूपों की वैदिक आराधना और तांत्रिक अनुष्ठान भी सर्वत्र प्रसिद्ध रहे हैं। ऋषि मार्कण्डेय द्वारा संकलित किया गया भगवती चरित्र (दुर्गा सप्तशती) तो बहुत ही अद्‌भुत है। इसमें भगवती के स्वरूपों, चरित्रों के साथ-साथ अनेक गूढ़ रहस्यों को एक जगह समाहित किया गया है। इन रहस्यों के विषय में या तो स्वयं साधनारत होकर ही पूरी तरह से जाना जा सकता है या फिर गुरु कृपा से इनके रहस्य को

समझना सम्भव है। साधारण भक्तों के लिये तो यह तेरह अध्याय एवं 700 श्लोकों में संकलित किया गया एक काव्य भर ही है। यद्यपि प्राचीन समय से ही तंत्र साधना के विविध ग्रंथों में ऐसा भी उल्लेख किया जाता रहा है कि दुर्गा सप्तशती पाठ अथवा उसमें वर्णित किये देवी चरित्रों की विधिवत् साधना से भौतिक इच्छाओं के साथ परालौकिक अनुभवों को भी पाया जा सकता है। दुर्गा सप्तशती तंत्र साधना की कामधेनु है।

माँ के तांत्रिक अनुष्ठान :

आद्य जननी माँ दुर्गा के अनेक तांत्रिक विधान हैं। इनमें से देवी का **रात्रि सूक्त** और **देवी सूक्त** तो बहुत ही अद्‌भुत है। इनके पाठ के वैदिक और तांत्रिक दोनों ही विधान हैं लेकिन इस पुस्तक में इनके तांत्रिक स्वरूपों को ही सम्मिलित किया गया है।

माँ दुर्गा के रात्रि सूक्त का तांत्रिक प्रयोग :

माँ दुर्गा के प्रथम अध्याय के श्लोक 70 से श्लोक संख्या 87 के मध्य 18 श्लोकों का जो रात्रि सूक्त नामक पाठ आया है, उसकी तंत्र परम्परा में बहुत प्रसिद्धि रही है। माँ की साधना का यह एक बहुत ही अद्‌भुत एवं प्रभावशाली तांत्रिक स्तोत्र है अनेक साधकों ने इस स्तोत्र के विधिवत् अनुष्ठान से चमत्कार घटित हुये देखे हैं। अगर इस रात्रि सूक्त का पूर्ण विधि-विधान के साथ अनुष्ठान सम्पन्न किया जाये तो केवल 21 दिन के भीतर ही मनोवांछित फल की प्राप्ति हो जाती है। इस सत्य को अनेक साधकों ने भी स्वीकार किया है।

माँ के रात्रि सूक्त का तांत्रिक अनुष्ठान आर्थिक समस्याओं में फंस जाने पर भी शीघ्र प्रभाव दिखाते हैं। इसके प्रभाव से साधक के सामने आय के नये साधन निर्मित होने लगते हैं। व्यापारिक कार्यों में निरन्तर उन्नति होती जाती है। नये-नये व्यावसायिक मित्र बनते हैं। कुछ साधकों ने तो यहां तक अनुभव किया है कि इस रात्रि सूक्त के नियमित पाठ करने मात्र से ही आर्थिक स्थिति में चमत्कारिक परिवर्तन आने लगता है। वर्षों की आर्थिक समस्यायें समाप्त होकर वैभवपूर्वक जीवन की प्राप्ति होने लगती है। सुख-समृद्धि में वृद्धि होने लगती है। साधाना काल में कुछ साधकों को दिव्य अनुभूतियां भी मिलने लग जाती हैं।

इस रात्रि सूक्त के तांत्रिक अनुष्ठान का सबसे उत्तम समय रात्रि के अन्तिम प्रहर अर्थात् 2 से 3 बजे के मध्य के समय को माना जाता है। यद्यपि रात्रि सूक्त से माँ की आराधना नित्य प्रति भी की जा सकती है, लेकिन अगर शुरू में रात्रि सूक्त का 31 दिन वाले 1-2 अनुष्ठान विधिपूर्वक सम्पन्न कर लिये जायें तो अति उत्तम रहता है, ऐसा करने से माँ की शीघ्र अनुकंपा प्राप्त होती है। 31 दिन के इस अनुष्ठान की शुरूआत प्रथम नवरात्रि से की जाये तो श्रेष्ठ रहता है अन्यथा इसकी शुरूआत किसी भी मास के शुक्लपक्ष की पंचमी तिथि से की जा सकती है।

जिस दिन से माँ के इस अनुष्ठान की शुरूआत करनी हो उस रात्रि को सबसे पहले दो बजे से पहले नहा धोकर व स्वच्छ वस्त्र पहन कर तैयार हो जायें। अलग-अलग कामनाओं को ध्यान में रखकर की जाने वाली साधनाओं के अनुसार ही पहने जाने वाले वस्त्रों के रंग एवं बैठने के आसन का चुनाव किया जाता है अन्यथा श्वेत वस्त्र पहन कर अनुष्ठान में बैठा जा सकता है। अगर कर्ज आदि की मुक्ति के लिये यह अनुष्ठान किया जा रहा है तो लाल रंग के अधोवस्त्र पहन कर साधना में बैठना उत्तम रहता है। अगर लाल रंग की धोती पहन कर ही अनुष्ठान में बैठा जाये तो भी ठीक रहता है।

अनुष्ठान के समय साधक अपने सामने लकड़ी की बाजोट (चौकी) रखकर उसके ऊपर लाल रंग का रेशमी वस्त्र बिछा लें। उसके ऊपर चांदी की एक छोटी प्लेट रख लें। अगर चांदी की प्लेट की व्यवस्था न हो पाये तो उसकी जगह स्टील की प्लेट भी काम में लायी जा सकती है। तत्पश्चात् केशर, गोरोचन और श्वेत चन्दन मिश्रित स्याही से प्लेट में **क्लीं** लिखकर उसके ऊपर कूर्ममुद्रा युक्त **श्री दुर्गा यंत्र** गंगाजल से शुद्ध करके प्रतिष्ठित कर दें।

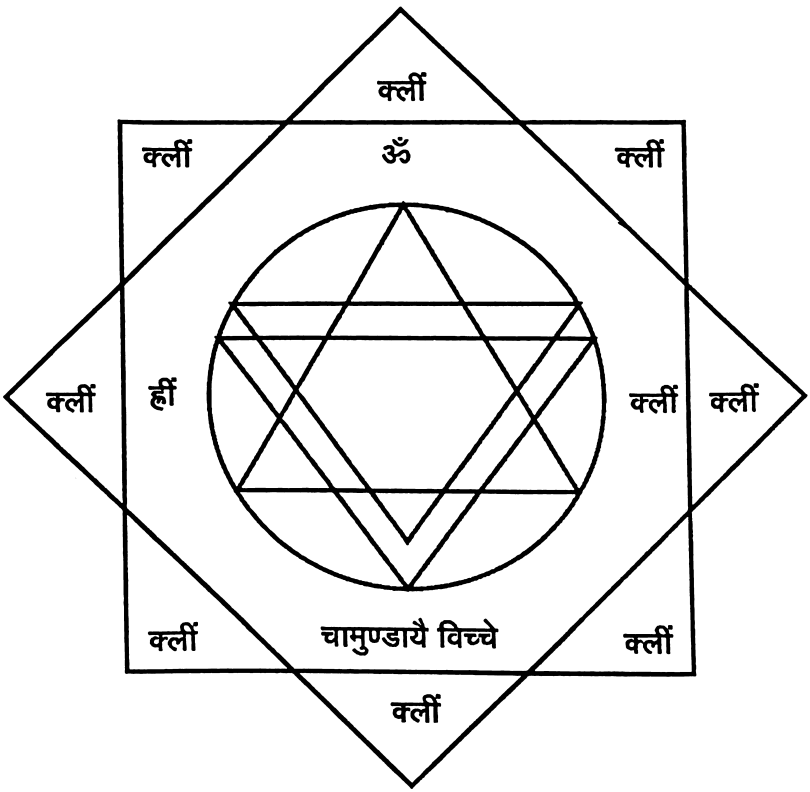

दुर्गा यंत्र

कूर्म मुद्रा युक्त श्रीयंत्र स्वयं माँ लक्ष्मी का प्रतिनिधित्व करता है। यंत्र स्थापना के पश्चात् रात्रि सूक्त के एक-एक श्लोक का पाठ करते हुये यंत्र पर क्रमशः केशर, गोरोचन व श्वेत चन्दन का टीका लगायें। फिर अक्षत, पुष्प, मौसमी फल, नैवेद्य, धूप, दीप अर्पित करें। तत्पश्चात् जिस कामना की पूर्ति के लिये यह साधना की जा रही है, उसके बारे में माँ से प्रार्थना करनी चाहिये। माँ से आज्ञा लेकर उनके रात्रि सूक्त का शुद्ध रूप में सस्वर जाप करें। अगर अनुष्ठान शुरू करने से पहले रात्रि सूक्त को कण्ठस्थ कर लिया जाये तो साधना के लिये ठीक रहता है।

तांत्रिक अनुष्ठान के रूप में रात्रि सूक्त का पाठ प्रति रात्रि 31 बार करना होता है। यद्यपि इनकी संख्या को अपनी सामर्थ्यानुसार घटाकर 21, 11 या 9 तक भी सीमित किया जा सकता है। जब अभीष्ट संख्या में पाठ पूर्ण हो जायें तो उसके अन्त में एक बार पुनः माँ से प्रार्थना करनी चाहिये।

पाठ समाप्ति के पश्चात् अगर एक माला निर्वाण मंत्र **ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे** की कर ली जाये तो अनुष्ठान का प्रभाव और भी बढ़ जाता है।

आसन से उठने से पहले माँ से आज्ञा प्राप्त कर लेनी चाहिये। आसन से उठने के साथ ही माँ को अर्पित किये गये नैवेद्य को उठाकर उसमें से थोड़ा सा भाग स्वयं प्रसाद रूप में ग्रहण कर लें और शेष प्रसाद को अगले दिन प्रातःकाल बच्चों में बंटवा दें। अगर संभव हो पाये तो साधना कक्ष में ही भूमि पर ही सोना चाहिये।

इस तरह निरन्तर 31 दिन तक अनुष्ठान के इसी क्रम को बनाये रखना चाहिये।

अगर इस अनुष्ठान की प्रक्रिया निर्विघ्न जारी रहती है तो शीघ्र ही माँ की अनुकंपा का प्रसाद मिलना शुरू हो जाता है। अनुष्ठान के अन्त तक तो निश्चित ही कष्टों का समापन होने लगता है। अनुष्ठान की समाप्ति पर नवीन संकल्प के साथ अपने कर्मक्षेत्र में जुट जायें। कर्ज से मुक्ति के लिये माँ के आशीर्वाद के साथ-साथ अपने काम को पूरी निष्ठा के साथ करते रहना चाहिये।

जब 31 रात्रियों के पश्चात् अनुष्ठान का समापन हो जाये तो नौ कन्याओं की पूजा करना एवं उन्हें भोजन करा कर व दान-दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करें। कूर्ममुद्रा युक्त श्रीयंत्र को चांदी की कटोरी में ही रखकर अपने पूजास्थल पर प्रतिष्ठित कर दें तथा नियमित रूप से उसके सामने प्रातःकाल बैठ कर कम से कम एक बार रात्रि सूक्त का पाठ करते रहें। पाठ करने से पहले घी का दीपक जला कर यंत्र के सामने रख दें, साथ ही धूप, अगरबत्ती भी जला दें।

समापन पर अनुष्ठान में प्रयुक्त की गई अन्य सामग्रियों को एकत्रित करके किसी वस्त्र में बांधकर जल में प्रवाहित करवा दें। अगर ऐसा सम्भव नहीं हो पाये तो इन सामग्रियों को पीपल वृक्ष के नीचे रख दें ताकि अनुष्ठान में प्रयुक्त की गई सामग्रियां व्यक्तियों के पांवों के नीचे नहीं आने पाये।

माँ का तांत्रोक्त रात्रि सूक्तम्

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति संहारकारिणीम्।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥1॥
त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥2॥
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि! जननी परा ॥3॥
त्वमैतद्धार्यते विश्वं त्वमैतत् सृज्यते जगत्।
त्वमैतत् पाल्यते देविः त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥4॥
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने।
तथा संहृति-रूपान्ते जगतोअस्य जगन्मये ॥5॥
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥6॥
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रय-विभावनी।
कालरात्रि-महारात्रि-मौहरात्रिश्च दारूणा ॥7॥
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिबौधलक्षणा।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षन्तिरेव च ॥8॥
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।
शंखनी चापिनी बाण-भुशुण्डी परिधायुधा ॥9॥
सौम्या सौम्यतराशेष सौम्येभ्यस्त्वति सुन्दरी।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥10॥
यच्च किञ्चत् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥11॥
यया त्वया जगत्स्त्रष्टा जगत् पात्यत्ति यो जगत्।
सोअपि निद्रावंश नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥12॥
विष्णुः शरीर ग्रहणमहमीशान एव च।
कारितास्ते यतोअतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥13॥
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरूदारैर्देविः संस्तुता।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ ॥14॥
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महापुरौ ॥15॥

माँ के देवी सूक्तम् का तंत्र विधान :

दुर्गा सप्तशती के पंचम अध्याय के अन्तर्गत आद्य शक्ति माँ भगवती का एक दिव्य स्तोत्र आया है, जिसे **देवी सूक्तम्** के नाम से जाना जाता है। इस स्तोत्र के द्वारा देवताओं ने माँ भगवती की कृपा दृष्टि प्राप्त की थी।

इस देवी सूक्तम् के रूद्र ऋषि हैं। महासरस्वती इसकी अभीष्ट देवी हैं। अनुष्टुप छन्द है। भीमा शक्ति है। भ्रामरी बीज है। सूर्य तत्त्व है और यह सामवेद स्वरूप है। महासरस्वती की प्रसन्नता के लिये उत्तर चरित्र के पाठ में इसका विनियोग किया गया है।

देवी के इस **देवी सूक्तम्** के विषय में एक कथा है कि एक समय जगत् जननी ने इन्द्र आदि देवों को एक वर दिया था कि आपात्तकालीन परिस्थितियों में जब भी आप मुझे स्मरण करोगे, मैं उसी समय आपके सामने उपस्थित होऊंगी और तत्क्षण ही आपकी समस्त आपत्तियों व कष्टों का नाश कर डालूंगी। एक समय समस्त देवों को राक्षसों ने इन्द्रलोक से बाहर खदेड़ दिया तथा स्वयं इन्द्रलोक के स्वामी बन बैठे। देवता काफी समय तक राक्षसों का संताप भुगतते रहे, तभी उन्हें माँ द्वारा दिये गये वर की स्मृति हो आई। सभी देवों ने माँ की निम्न स्तोत्र से जैसे ही स्तुति शुरू की, वैसे ही माँ उनके सामने प्रकट हुई और देवताओं को आश्वस्त किया। इसके पश्चात् माँ ने इन्द्रलोक को राक्षसों से मुक्त करवा कर पुनः इन्द्र को सौंप दिया।

माँ के इस देवी सूक्तम् पर अब भी यही अनुभूति है कि यह आज भी उतना ही प्रभावी सिद्ध होता है, जैसा कि इसके बारे में वर्णन है। इसको सम्पन्न करने की एक विशिष्ट प्रक्रिया, एक विशेष विधि है, जिसका सार्वजनिक उल्लेख करना प्रतिबंधित है। इस प्रक्रिया के विषय में किसी गुरु का विश्वास प्राप्त करके ही जाना जा सकता है। फिर भी अगर इस देवी सूक्तम् का पाठ अग्रांकित प्रक्रिया के माध्यम से सम्पन्न कर लिया जाये तो काफी हद तक माँ की कृपा दृष्टि प्राप्त की जा सकती है।

अनेक बार ऐसा देखा गया है कि देवी सूक्तम् के अग्रांकित 31 दिन के अनुष्ठान को सम्पन्न करते ही कई प्रकार की आपदाओं से सहज ही मुक्ति मिल जाती है। गृह क्लेश शान्त हो जाते हैं। पति-पत्नी के मध्य उत्पन्न हुये मनमुटाव दूर होने लग जाते हैं। तीन महीने तक निरन्तर इस अनुष्ठान को जारी रखने से बंदी बंधन मुक्त हो जाते हैं। सिर पर चढ़े कर्जों से मुक्ति मिलने लगती है। आर्थिक स्थिति में सुधार आने लगता है। मुकदमे का निर्णय साधक के पक्ष में होने की स्थितियां निर्मित होने लगती हैं। इसी तरह अगर इस अनुष्ठान को निर्विघ्न एक वर्ष तक जारी रखा जाये तो साधकों को विविध प्रकार की दिव्य अनुभूतियां भी मिलने लग जाती हैं।

देवी सूक्तम् के इस अनुष्ठान की शुरूआत किसी भी मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी से की जा सकती है। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त का समय अति उत्तम रहता है। साधक को प्रथम दिन व्रत भी रखना चाहिये।

सबसे पहले प्रात:काल नहा धोकर व स्वच्छ श्वेत वस्त्र पहन कर साधक को तैयार हो जाना चाहिये। इस अनुष्ठान में साधक को कम्बल या ऊनी आसन पर पूर्वाभिमुख होकर बैठना पड़ता है तथा साधना कक्ष में अन्य का प्रवेश निषिद्ध कर दिया जाता है।

साधक को सबसे पहले आसन पर बैठकर अपने सामने एक लकड़ी का बाजोट रखकर उस पर लाल रंग का वस्त्र बिछाकर उसके ऊपर चांदी अथवा पीतल की थाली रख देनी चाहिये। इसके ऊपर केसर, श्वेत चन्दन और गोरोचन की स्याही व अनार की कलम से अधोमुखी त्रिकोण निर्मित करके, उनके मध्य के त्रिकोण में **ॐ ह्रीं ॐ** लिखकर उसके ऊपर मिट्टी का कलश स्थापित कर दें। (**त्रिकोणाकृति देखें**) कलश में पानी भरकर उसके ऊपर ढक्कन रख दें। इसके पश्चात् कलश पर एक लघु नारियल लाल रंग के रेशमी वस्त्र में लपेट कर और रौली चढ़ाकर रख दें। इनके साथ अगर बाजोट पर गणेश जी की स्थापना करके व मातृका पूजन उपरान्त चौसठ योगिनी व पचास क्षेत्रपालों को भी स्थापित कर दिया जाये तो अति श्रेष्ठ रहता है अन्यथा नारियल सहित कलश की चन्दन, पुष्प, नैवेद्य से पूजा करके एवं अखण्ड दीप प्रज्ज्वलित करके भी उपासना क्रम को आगे बढ़ाया जा सकता है।

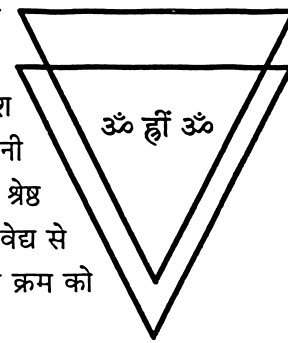

दीप प्रज्ज्वलित करके गुरु का पूजन व गुरु का स्मरण अवश्य कर लें। अगर आपका कोई गुरु नहीं है तो इस स्थिति में देवगुरु बृहस्पति का स्मरण करके अग्रांकित मंत्र का जाप करके मानसिक रूप से ही गुरु को प्रणाम करें। इसके पश्चात् अनुष्ठान की प्रक्रिया को आगे बढ़ायें। बृहस्पति का मंत्र है- **ॐ गुरु गुरुवे नमः।**

अगर इस अनुष्ठान को तीन महीने या उससे भी आगे जारी रखना हो तो उस अवस्था में अवश्य ही गुरु के निरन्तर मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती है। दीर्घ साधना में साधकों को कई परीक्षाओं के दौर से गुजरना पड़ सकता है। कई बार ऐसी परीक्षाओं के दौरान साधक भयग्रस्त हो सकता है।

इस पूजा क्रम के पश्चात् अग्रांकित मंत्र का ध्यान करना चाहिये। ध्यान करते समय साधक अपनी अंजलि में पुष्प रख लें, जिन्हें ध्यान मंत्र पूरा होने पर अपने चारों आत्मरक्षा के लिये फेंक दें।

माँ का ध्यान मंत्र निम्न प्रकार है:-

ॐ घण्टाशूल हलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं,
हस्ताब्जैर्दधतीं धनान्तविलसच्छीतांशु तुल्य प्रभाम्।
गौरी देहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूता महापूर्वामत्र
सरस्वती मनुभजे शुम्भदिदैत्यादिनीम्॥

अर्थात् जो अपने कर कमलों में घण्टा, शूल, हल, शंख, मूसल, चक्र, धनुष और बाण धारण किये हुये हैं, शरद् ऋतु के शोभा सम्पन्न चन्द्रमा के समान जिनकी मनोहर कान्ति है, जो तीनों लोकों की आधारभूता और शुम्भ-निशुम्भ आदि दैत्यों का नाश करने वाली है तथा गौरी के शरीर से जिनका प्राकट्य हुआ है, उन महासरस्वती देवी का मैं सदैव स्मरण करता हूं।

ध्यान के पश्चात् माँ के सामने संकल्प करें कि किस निमित्त यह अनुष्ठान किया जा रहा है तथा इसे कितने दिन तक जारी रखना है, अनुष्ठान के दौरान कितनी बार स्तोत्र पाठ करना है, आदि।

संकल्प के पश्चात् माँ के सामने अपनी प्रार्थना को रखें कि आप किस कामनापूर्ति के लिये यह अनुष्ठान प्रयोग कर रहे हैं अथवा किस समस्या से मुक्ति प्राप्त करने के लिये माँ की कृपा एवं आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते हैं। इसके पश्चात् उनकी आज्ञा प्राप्त करके **देवी सूक्तम्** का पाठ शुरू कर दें। देवी सूक्तम् का पाठ प्रतिदिन 21 बार करना होता है। यद्यपि अपनी सामर्थ्य के अनुसार और गुरु के परामर्श से इनकी संख्या को कम या अधिक भी किया जा सकता है। अगर प्रत्येक स्तोत्र के अन्त में घी युक्त समिधा की आहुतियां भी अग्नि में प्रदान की जायें तो अनुष्ठान का प्रभाव और भी बढ़ जाता है। इसके लिये या तो त्रिकोणाकृति हवन कुण्ड निर्मित करना होता है या फिर मिट्टी के किसी पात्र में गाय के गोबर के कण्डे में उसके ऊपर ही आहुतियां दी जाती हैं। इसके साथ ही इस बात का भी विशेष ध्यान रखना चाहिये कि स्तोत्र पाठ की पूरी अवधि में अखण्ड दीप जलते रहना चाहिये।

जब देवी सूक्तम् का अभीष्ट संख्या में जाप सम्पन्न हो जाये तो माँ के सामने प्रार्थना करके व उनकी आज्ञा प्राप्त करके ही आसन से उठना चाहिये। अनुष्ठान का यही क्रम पूरी अवधि तक बनाये रखना चाहिये तथा अनुष्ठान समापन के पश्चात् नौ कन्याओं को भोजन आदि कराकर व दान-दक्षिणा देकर प्रसन्न करना चाहिये।

इस तरह देवी सूक्तम् अनुष्ठान को सम्पन्न करते ही अभीष्ट फल की प्राप्ति साधक को निश्चित रूप में हो जाती है।

देवी सूक्तम्

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणता : स्मताम्॥1॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः॥2॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्धयै सिद्धयै कुर्मो नमो नमः।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥3॥

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सवकारिष्यै।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥4॥

अतिसौम्यातिरौद्रायै नमास्तस्यै नमो नमः।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै सिद्धयै कृत्यै नमो नमः ॥5॥

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥6॥

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥7॥

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥8॥

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥9॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥10॥

या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥11॥

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥12॥

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥13॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥14॥

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥15॥

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥16॥

या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥17॥

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥18॥

या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥19॥

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥20॥

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥21॥

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥22॥

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥23॥

या देवी सर्वभूतेषु तुष्णिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥24॥

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥25॥

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥26॥

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चारिवलेषु या।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ॥27॥

चितिरूपेण या कृत्स्नभेतद् व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥28॥

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट संश्रयात
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥29॥

या साम्प्रतं चोद्धत-दैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्ति विनम्र मूर्तिभिः ॥30॥

भैरव साधना के तांत्रिक प्रयोग

तंत्र ग्रंथों में भैरव शब्द की व्याख्या करते हुये लिखा गया है कि जो समस्त प्रकार की विपत्तियों, आपदाओं को भयभीत करके भगा सके, वही **भैरव** कहलाने के योग्य है। जैसे- **विभेति क्लेशो यस्मादिति भैरवः।**

भैरव देव की कलियुग में अपार महिमा मानी गई है। एक तरह से इन्हें कलियुग का ही देव माना गया है। इसलिये यह साधारण पूजा-अर्चना से ही प्रसन्न हो जाते हैं। अपनी शरण में आये अपने भक्तों के ऊपर अपनी करुणा एवं कृपा की वर्षा करने लगते हैं। तांत्रिकों के यह प्रत्यक्ष देव ही रहे हैं, इसलिये तंत्र साधकों के मध्य भैरव साधना का विशेष आकर्षण रहा है। भैरव की तंत्र साधना को जैन धर्म में भी स्वीकार किया गया है। ऐसा भी प्रायः देखने में आता है कि तांत्रिकों का कोई भी कर्म अर्थात् पूजा-अर्चना व तांत्रिक अनुष्ठान तब तक निर्विघ्न सम्पन्न नहीं हो पाता, जब तक कि वहां भैरव की स्थापना करके उनका आशीर्वाद प्राप्त नहीं कर लिया जाता। इसलिये प्रत्येक तंत्र साधना में भैरव देव की सर्वप्रथम प्रतिष्ठा कर लेना अनुष्ठान का प्रथम भाग माना जाता है।

भैरव को रक्षा करने वाला देव भी माना जाता है। इसलिये प्राचीन समय से ही प्रत्येक स्थान पर भैरव की स्थापना करने का विधान चला आ रहा है। भैरव साधना को सम्पन्न करते ही विभिन्न प्रकार की विघ्न बाधायें, आपदायें आदि अपने आप ही दूर होने लगती हैं। साधकों के शत्रु तक शत्रुता छोड़कर शांति में रुचि दिखाने लगते हैं। भैरव साधना से कई प्रकार की असाध्य बीमारियां साधक के घर का परित्याग करके चली जाती है। भैरव साधक का पूरा परिवार पूरी तरह से स्वस्थ रहता है।

भैरव शिव के रुद्र रूप माने गये हैं। शिवपुराण आदि ग्रंथों एवं तंत्रशास्त्र में भैरव के बावन रूपों की बहुत प्रसिद्धि रही है। तंत्र साधना में विभिन्न तरह की सिद्धियों को प्राप्त करने के लिये भैरव के इन सभी स्वरूपों की पूजा-अर्चना का विशेष विधान रहा है। तांत्रिकों की एक प्रमुख परम्परा में भैरव साधना ही उनकी साधना का अन्तिम एवं सर्वोच्च लक्ष्य माना जाता है।

भैरव के बावन स्वरूपों में से आठ स्वरूपों, जिन्हें अष्ट भैरव के नाम से जाना जाता है, बहुत ही प्रसिद्ध रहे हैं। यह अष्ट भैरव निम्न प्रकार हैं- असितांग भैरव, रूरू भैरव, चंड भैरव, क्रोध भैरव, उन्मत भैरव, कपाल भैरव, भीषण भैरव और संहार भैरव। तंत्र साधना में इन भैरव के अलावा भी कई अन्य स्वरूपों की पूजा-अर्चना आदि का विधान प्राचीन समय से चला आ रहा है। भैरव के यह अन्य स्वरूप हैं- बटुक भैरव, काल

भैरव, स्वर्णाकर्षण भैरव आदि। भैरव के इन स्वरूपों की मान्यता साधारणजनों में भी बहुत अधिक रही है।

तंत्र साधना में भैरव की प्रतिष्ठा और पूजा-अर्चना करके उनकी कृपा प्राप्त करना साधना का एक अनिवार्य अंग माना जाता है। इसलिये प्रत्येक तंत्र साधना स्थल पर सबसे पहले भैरव देव की प्रतिष्ठा करने की प्रथा चली आ रही है। आज भी यह स्थिति देखने को मिलती है। इसके अलावा शिव मंदिरों में भी भैरव की स्थापना और पूजन करना प्राचीन समय से ही प्रचलन में रहा है। जगत जननी माँ दुर्गा और उनके समस्त स्वरूपों के साथ भैरव की अवश्य ही स्थापना की जाती है। इसलिये माँ का एक भी शक्ति स्थल (जिन स्थानों पर माँ के स्वरूपों की स्थापना की गई है, भारत भर में ऐसे 51 शक्ति स्थल माने गये हैं) ऐसा नहीं है, जहां पर भैरव की प्रतिष्ठा न की गई हो और जहां माँ की पूजा के साथ भैरव की पूजा को अनिवार्य न माना गया हो।

कलियुग में भैरव देव को कितनी मान्यता प्राप्त हुई है, इस बात का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि भैरव मंदिर अथवा उनकी प्रस्तर प्रतिमायें सर्वत्र प्रतिष्ठित की हुई मिल जाती हैं। प्रत्येक गांव की सीमा पर भैरव की स्थापना करना रक्षा की दृष्टि से अनिवार्य विषय माना जाता रहा है। भैरव को रक्षादेव माना गया है और वह हैं भी रक्षा के देव।

भैरव के विषय में उनके विभिन्न नामों से ही स्पष्ट हो जाता है कि यह यथाशीघ्र प्रसन्न होकर अपने भक्तों की प्राय: सभी समस्याओं का निराकरण शीघ्र ही कर देते हैं। अपने काल भैरव स्वरूप में यह असाध्य रोगों के साथ-साथ असमय मृत्यु से भी अपने भक्तों को बचा लेते हैं। इनका यह स्वरूप भीषण आपदाओं से रक्षा करता है। इसी प्रकार यह अपने बाल, बटुक स्वरूप में विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सहज ही निराकरण कर देते हैं। स्वर्णाकर्षण भैरव स्वरूप में यह आर्थिक सम्पन्नता प्रदान करते हैं तथा अनेक प्रकार के सुख-साधनों एवं ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। क्रोध भैरव के रूप में यह अपने साधकों को शत्रुओं से सुरक्षा प्रदान करते हैं। उन्हें बुरे विचारों, बुरी आत्माओं के प्रभाव से दूर रखते हैं। संहार भैरव के रूप में यह अपने साधकों के शत्रुओं का संहार करके उन्हें सदा के लिये अभय प्रदान करते हैं।

भैरव की साधना सात्विक स्वरूप में भी की जाती है और उनके वीभत्स स्वरूप में भी। यह अपने आराध्य भगवान शिव की तरह सहज स्वभाव एवं शीघ्र प्रसन्न होने वाले हैं। यह सामान्य रूप से फल, फूल, चोला से की गई पूजा से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं, किन्तु जब यह क्रोधित रूप में आते हैं तो उनके तेज से कोई नहीं बच पाता। क्रोधित होने पर यह पल भर में ही सर्वस्त्र विध्वंस करने में पीछे नहीं रहते, लेकिन अपने भक्तों के लिये भैरव सदैव सहज हृदय ही बने रहते हैं।

भैरव के कुछ स्वरूपों को भावनावश सुरापान भी कराया जाता है। ऐसी पूजा का विधान मुख्यतः कापालिक सम्प्रदाय में रहा है। आज भी भैरव के कई प्रसिद्ध स्थल है जहां नैवेद्य के रूप में उन्हें सुरा चढ़ाई जाती है। ऐसा भैरव का एक मंदिर उज्जैन में हैं। उज्जैन के अतिरिक्त ऐसे भैरव मंदिर गोरखपुर के पास, कर्ण प्रयाग और बंगाल-बिहार में स्थित हैं। इन मंदिरों में एक समय कापालिक सम्प्रदाय के तांत्रिक बलि भी चढ़ाया करते थे, किन्तु भैरव अपने साधारण रूप में दूध की खीर, घी-गुड़ से तैयार की गई लस्सी एवं गुड़-चना आदि के नैवेद्य से भी अतिशीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। भैरव देव को हनुमानजी की तरह घी-सिन्दूर का चोला बहुत भाता है। अतः इनकी पूजा-अर्चना में चोला चढ़ाने का भी विधान है।

इस अध्याय में भैरव से सम्बन्धित कुछ अनुभूत तांत्रोक्त प्रयोगों का वर्णन किया जा रहा है। इन तांत्रोक्त प्रयोगों को सहजता के साथ हर कोई सम्पन्न कर सकता है तथा भैरव देव को प्रसन्न करके अपनी अनेक प्रकार की समस्याओं एवं दुःखों से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

भैरव से सम्बन्धित कुछ तांत्रोक्त अनुष्ठान निम्न प्रकार हैं:-

आपदा निवारक बटुक भैरव साधना

जीवन परेशानियों का नाम है। यह परेशानियां अनेक रूपों में सामने आती हैं और असंख्य लोगों को जीवन के विभिन्न पक्षों में अनेक प्रकार के दुःख, दर्द, पीड़ाएं देकर सताती रहती हैं। यद्यपि यह आपदाएं (समस्यायें) बिना बुलाये ही हमला करती हैं, लेकिन कुछ सीमा तक उनके लिये हमारे पूर्व जन्म के कर्म और वर्तमान जीवन के क्रियाकलाप भी जिम्मेदार रहते हैं। बिना बुलाये प्रकट हुई आपदाएं हमें शारीरिक या मानसिक दुःख ही नहीं देतीं, बल्कि सुव्यवस्थित घर-गृहस्थी तक को प्रभावित करती हैं। इनके कारण परिवार में कलह बनी रहने लगती है, बिना किसी विशेष कारण के लड़ाई-झगड़े शुरू हो जाते हैं। घर में बीमारी का स्थायी निवास बना रहने लगता है तथा अन्य कई प्रकार की समस्यायें सताने लगती हैं।

आपदाएं अनेक अन्य रूपों में भी प्रकट हो सकती हैं। जैसे कि व्यक्ति एक जगह पर कई साल तक नौकरी करके अपनी घर-गृहस्थी को ठीक से बसाता है, कई तरह के प्रयास करके बच्चों को शहर के प्रतिष्ठित स्कूलों में प्रवेश दिलाता है, अपने रहने के लिये स्थायी निवास के रूप में कर्ज आदि लेकर मकान बनाता है और तभी एकाएक उसका स्थानान्तरण किसी अन्य शहर में कर दिया जाता है अथवा उसे तत्काल शहर से दूर किसी गांव-देहात की शाखा में जाकर काम संभालना है। ऐसे आदेश व्यक्ति को अनेक प्रकार की परेशानियों में डाल देते हैं। वह एकाएक घबरा जाता है। उसे समझ नहीं आता कि

क्या किया जाये ?

इसी प्रकार एक अन्य व्यक्ति समस्त उपायों के बाद एक भूखण्ड खरीदता है अथवा कोई मकान खरीदता है या फिर मकान बनवाने के लिये बैंक, अपने रिश्तेदारों, मित्रों आदि से कर्ज लेता है, किन्तु बाद में उसे पता चलता है कि खरीदा गया भूखण्ड तो विवादास्पद है अथवा किसी अन्य कारण से मकान की अलॉटमेंट में बार-बार विलम्ब होता रहता है या फिर उसे अनावश्यक रूप से सरकारी कार्यालयों के चक्कर काटने पर विवश होना पड़ता है, अधिकारियों को कई बार रिश्वत देनी पड़ती है। ऐसी स्थिति में उसका जीवन नरक बनकर रह जाता है। ऐसी समस्यायें उसके समस्त सुख-चैन को छीन लेती हैं। इस बारे में कटु सत्य यह है कि अनेक प्रकार की समस्यायें बार-बार जीवन में आती रहती हैं।

मुकदमेबाजी में फंस जाना भी किसी समस्या से कम नहीं है। आज के समय में मुकदमेबाजी में तो फंस जाना एक सामान्य बात हो गई है। किसी भी सामान्य बात अथवा लापरवाही के कारण भी यह स्थिति उत्पन्न हो सकती है। आयकर, सेवा शुल्क, गृह कर आदि समय पर न देने से बैठे-बिठाये ऐसी परेशानियां आ सकती हैं। मानसिक शांति का क्षय कर डालती हैं।

इस संदर्भ में एक बात देखने में आई है कि इस प्रकार की सभी परेशानियों एवं ऐसी समस्त समस्याओं से बचने में **बटुक भैरव साधना** अथवा उनका अनुष्ठान बहुत ही लाभदायक सिद्ध होता है। बटुक भैरव, भैरव का बाल रूप है। यह भैरव के बावन स्वरूपों में सबसे सौम्य रूप माना जाता है। बटुक भैरव की प्रसन्नता भर से ऐसी समस्त परेशानियां चमत्कारिक रूप से समाप्त होने लग जाती हैं। इस बात का अनुभव असंख्य लोगों ने अनेक बार किया है।

यहां मैं एक ऐसे साधक के बारे में बताना चाहता हूं जो बटुक भैरव के उपासक थे और उन पर प्रबल विश्वास भी था। इस साधना का यह अनुभव रहा है कि उस पर जब भी किसी प्रकार की समस्या अथवा विपत्ति आयी, तभी श्री बटुक भैरव ने उसे सकुशल निकाल दिया। इस साधक के नाम का उल्लेख करना तो उचित नहीं होगा किन्तु उनके जीवन की अनेक घटनाओं में से एक घटना को अवश्य बताना चाहूंगा। बटुक भैरव के संबंध में उनका अनुभव बहुत ही अद्‌भुत रहा है। भैरव की कृपा को उन्होंने अनेक बार अनुभव किया है। भैरव पर उनकी अगाध आस्था है। यह साधक यू.पी. कैडर के आई.पी.एस. अधिकारी रहे हैं। अनेक वर्षों तक दिल्ली में रहकर वह भारत सरकार को अपनी सेवायें प्रदान करते रहे हैं। उन्हें भी अनेक बार ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना पड़ा जिनसे ऐसा लगा कि जैसे कि अब नौकरी को छोड़ देना चाहिये। कई बार उन्हें अपने उच्च अधिकारियों अथवा कार्यालय के सहकर्मियों के साथ उलझना पड़ा। एक बार उनकी अपने एक उच्च अधिकारी से इतनी तनातनी हो गई कि उस अधिकारी ने

एकाएक चिढ़ कर उनका स्थानान्तरण बहुत ही विषम परिस्थितियों वाली जगह पर कर दिया, जहां जाना उनके लिये सम्भव नहीं था। उन्हें बटुक भैरव जी का सदैव आशीर्वाद मिलता रहा था। जब भी उनके सामने कोई परेशानी पेश आती, वह तत्काल बटुक भैरव की शरण में जाते और उन्हें तत्काल अनुकंपा भी मिल जाती। इस बार भी उनकी परेशानी सहज ही दूर होगी, ऐसा उन्हें पूरा विश्वास था।

इस बार जैसे ही उन्हें पता चला कि उनका स्थानान्तरण दिल्ली से उठाकर मिजोरम की पहाड़ियों पर कर दिया गया है तो तुरन्त ही वह अपनी परेशानी को लेकर अपने आराध्य बटुक भैरव की शरण में पहुंच गये। उन्होंने तत्काल अपने घर पर ही बटुक भैरव की पूजा-अर्चना करने की व्यवस्था करवायी तथा 21 दिन वाला भैरव का तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न करवा लिया। इस बार भी उन पर भैरव की अप्रत्याशित कृपा हुई। अनुष्ठान के दौरान ही ग्यारहवें दिन सचिवालय स्तर पर कुछ ऐसा घटनाक्रम घटित हुआ कि उनका स्थानान्तरण एकाएक रोक दिया गया। जिस अधिकारी ने उनका स्थान्तरण किया था, उसे अवश्य अन्य प्रदेश भेज दिया गया। स्थानान्तरण रुकने के साथ ही इस साधक को दिल्ली में मनोनुकूल विभाग का दायित्व भी दे दिया गया। बटुक भैरव की अनुकंपा के कई अन्य मामले भी देखे गये हैं।

बटुक भैरव साधना रहस्य :

तंत्रशास्त्र में भैरव साधना को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। तंत्रशास्त्र के अन्तर्गत जो मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, स्तभंन, विद्वेषण जैसी षट्क्रियायें की जाती हैं, उनके विपरीत प्रभावों को निरस्त करने के लिये सबसे पहले भैरव साधना का ही विधान है। इसी प्रकार तंत्र के शाक्त मत में जिन दस महाविद्याओं की साधना का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया गया है, उन महाविद्याओं की पूर्ण प्राप्ति और उनकी साधनाओं में पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिये भी सबसे पहले भैरव की कृपा प्राप्त करना आवश्यक होता है। वास्तव में भैरव साधना और तांत्रोक्त अनुष्ठान एक-दूसरे के पूरक ही हैं।

जम्मू-कश्मीर स्थित वैष्णो देवी के दर्शन करने वाले इस बात को जानते हैं कि वहां भी माँ के दर्शनों का पूरा लाभ भैरव के सामने नतमस्तक होने पर ही मिल पाता है। कटरा से माँ वैष्णो की गुफा तक की 13 किलोमीटर की यात्रा मार्ग में मुख्यतः दो ही पड़ाव पड़ते हैं। एक गर्भयोनि का स्थान और दूसरा भैरव पहाड़ी पर स्थित भैरव मंदिर का। महामाई की यात्रा का लक्ष्य तब तक अधूरा माना जाता है, जब तक कि भैरव की अनुकंपा प्राप्त नहीं कर ली जाती। इसी प्रकार दस महाविद्याओं से सम्बन्धित जितने भी शक्तिपीठ हैं, उन सब स्थानों पर भी महाविद्याओं के साथ ही भैरव जी की प्रतिष्ठा भी सबसे प्रमुख रूप में की गई है। यह भी अद्भुत बात है कि उन शक्तिपीठों पर भी आद्य माँ की पूजा-अर्चना का कार्य तब तक अधूरा ही समझा जाता है जब तक कि भैरव की

कृपा प्राप्त नहीं कर ली जाती।

महाविद्याओं के साथ ही नहीं बल्कि हनुमान जी के अनेक अनुग्रहों के साथ भी भैरव की स्थापना करने का विधान रहा है। हनुमान जी के ऐसे अनेक प्रसिद्ध स्थान हैं, जहां हनुमान जी के साथ भैरव जी की पूजा-अर्चना की जाती है।

दरअसल भैरव भगवान शिव के द्वादशवें रुद्र हैं। तंत्रशास्त्र में भैरव के बावन स्वरूपों का वर्णन आया है, जिनमें अष्ट भैरवों की पूजा-उपासना का तो बहुत विस्तार से उल्लेख हुआ है। भैरव के यह अष्टरूप असितांग भैरव, रूरू भैरव, चंड भैरव, क्रोध भैरव, उन्मत भैरव, कपाल भैरव, भीषण भैरव और संहार भैरव। यद्यपि तांत्रिक साधनाओं में भैरव के अन्य स्वरूपों की साधना, पूजा, अनुष्ठानों का प्रचलन भी रहा है। इनमें से काल भैरव, स्वर्णाकर्षण भैरव, बटुक भैरव, आदि कुछ प्रमुख हैं। बटुक भैरव को भैरव का बाल स्वरूप माना गया है। नवरात्रियों के दौरान अष्टमी अथवा नवमी के दिन नवकंजकाओं के साथ एक लांगुर के रूप में लड़के की पूजा का विधान भी चला आ रहा है। लांगुर का यह रूप बटुक भैरव का ही प्रतीक है।

मार्गशीर्ष कृष्ण अष्टमी को भगवान भैरव का प्रादुर्भाव हुआ, ऐसा माना जाता है। भैरव की पूजा-अर्चना का दिन रविवार का माना गया है। रविवार के दिन भैरव की पूजा-अर्चना करने, भैरव मंदिर में मस्तक झुकाने, भैरव को चोला चढ़ाने तथा उस दिन उपवास रखते हुये संयम से रहने से वह शीघ्र प्रसन्न होते हैं। रविवार को दिन में भैरव मंदिरों के बाहर दर्शनार्थियों की लम्बी कतारें लगी हुई देखी जा सकती हैं।

भैरव साधना विधान :

भैरव को लाल सिन्दूर और सरसों का तेल बहुत प्रिय है। अतः इनकी पूजा-अर्चना, अनुष्ठान आदि में इन्हें विशेषतौर पर सम्मिलित किया जाता है। सरसों के तेल में सिन्दूर मिलाकर उसका मूर्ति पर लेपन करने से वे शीघ्र प्रसन्न होते हैं। सिन्दूर चढ़ाने की इस प्रक्रिया को चोला चढ़ाना कहा जाता है। हनुमान जी को भी इसी तरह का चोला चढ़ाया जाता है लेकिन हनुमान जी को सरसों के तेल की जगह घी में सिन्दूर मिलाकर चोला चढ़ाया जाता है। चोला चढ़ाने से भैरव और हनुमान जी शीघ्र प्रसन्न होते हैं और उनकी मनोकामनाओं की सहज ही पूर्ति कर देते हैं।

बटुक भैरव अनुष्ठान की इस प्रक्रिया में भैरव के तीन रूपों की प्रतिष्ठा की जाती है। अतः इनकी साधना के तीन क्रम हैं। एक उनकी सात्विक उपासना का क्रम है, दूसरी राजसिक उपासना का क्रम है और तीसरी तामसिक उपासना का क्रम है। भैरव की सात्विक उपासना से साधक को समस्त आधि-व्याधियों से सहज ही मुक्ति मिल जाती है, उसके मान-सम्मान में वृद्धि होती है तथा कई तरह की असाध्य बीमारियों से भी मुक्ति

प्राप्त हो जाती है। भैरव की सात्विक उपासना का विधान बहुत ही सौम्य और सहज है। इसके अन्तर्गत किसी भैरव के मंदिर जाकर भैरव की संक्षिप्त पूजा-अर्चना कर लेना अथवा रविवार के दिन उन्हें चोला चढ़ाकर व उनके कवच आदि का अभीष्ट संख्या में जाप कर लेना ही पर्याप्त रहता है जबकि भैरव साधना के अन्य विधान थोड़े भिन्न हैं।

बटुक भैरव साधना का सात्विक रूप :

बटुक भैरव की सात्विक साधना के लिये सिन्दूर से भैरव का श्रृंगार करना सबसे प्रथम कार्य है। भैरव की प्रतिमा को सरसों के तेल में सिन्दूर मिलाकर चोला चढ़ाना और उनकी विधिवत पूजा करना सात्विक उपासना का क्रम है। भैरव को चोला चढ़ाने के उपरांत उन्हें धूप, दीप अर्पण करें। उन्हें पुष्प माला, गन्ध अर्पित करें। रविवार की पूजा में भैरव देव को सिन्दूर से रंग कर कुशा मूल अर्पित करके उसे अपने घर ले आयें। उसे किसी तांबे के बर्तन अथवा चांदी के पात्र में रख कर अपने पूजास्थल पर स्थापित कर देना चाहिये।

रविवार की पूजा में भैरव को केशरयुक्त खीर का नैवेद्य लगाया जाता है। पंचमेवा भी प्रसाद के रूप में चढ़ाया जाता है। इसके पश्चात् भैरव मंदिर में बैठकर भैरव के निम्न बाल स्वरूप का ध्यान करना चाहिये तथा इसी मंत्र का ग्यारह बार उच्चारण करते हुये भैरव के ऊपर अथवा भैरव मंदिर की चौखट पर ग्यारह लौंग, सुपारी, इलायची युक्त अखण्डित पान अर्पित करें।

भैरव का ध्यान मंत्र है-

वन्दे बालं स्फटिक सदृशं कुण्डलोद्भासि वक्त्रम्,
दिव्या कल्पैर्नव मणि मयैः किङ्किणी नूपुराढयैः।
दीप्ताकरं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रम्,
हस्ताध्जाभ्यां बटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम्॥

ध्यान के पश्चात् भैरव जी के सामने अपनी कामनापूर्ति के लिये प्रार्थना करनी चाहिये। उनसे बार-बार अनुरोध करते हुये समस्याओं एवं दुःखों से तत्काल मुक्ति दिलाने का निवेदन करें। अन्त में भगवान भैरव से प्रार्थना करने के पश्चात् उन्हीं की आज्ञा लेकर वहीं बैठकर निम्न मंत्र का ग्यारह माला जाप करें। मंत्रजाप के लिये रुद्राक्ष की माला का उपयोग करना अतिश्रेष्ठ रहता है।

बटुक भैरव का मंत्र निम्न प्रकार है-

ॐ ह्रीं बटुक भैरवाय आपदु द्धारणाय कुरू कुरू स्वाहा।

जब आपका ग्यारह माला का मंत्रजाप पूर्ण हो जाये तो एक बार पुनः अपनी प्रार्थना को भैरव के सामने दोहरा लें तथा अपने आसन से उठने से पहले उनकी आज्ञा प्राप्त

कर लें।

अनुष्ठान के दौरान कुछ विशेष बातों का ध्यान भी रखना चाहिये जैसे कि सम्पूर्ण जपकाल के दौरान घी का दीपक भैरव के सामने अखण्ड रूप में जलते रहना चाहिये। दूसरा, धूप, गंध आदि के माध्यम से साधना स्थल के वातावरण को सुगन्धित बना लेना चाहिये। तीसरे, यह अनुष्ठान केवल रविवार के दिन ही सम्पन्न करना होता है और निरन्तर ग्यारह रविवार तक इस क्रम को जारी रखना होता है।

प्रत्येक रविवार के दिन इस प्रकार भैरव मंदिर जाकर सरसों के तेल सिन्दूर का चोला चढ़ायें। भैरव को खीर का नैवेद्य एवं पंचमेवा का भोग लगायें तथा अन्य पूजा-क्रम को वैसे ही जारी रखते हुये ग्यारह बार उनके ध्यान के मंत्र को उच्चारित करके प्रार्थना एवं मंत्रजाप के क्रम को बनाये रखें। अगर रविवार के दिन उपवास रखा जा सके, तो अवश्य ही रखना चाहिये। उपवास के दिन केवल एक बार केसरयुक्त खीर को ही भैरव के प्रसाद रूप में ग्रहण करना चाहिये। बटुक भैरव की पूजा-संध्याकाल के समय ही सम्पन्न की जाती है। अत: खीर का सेवन भी संध्याकाल को ही अनुष्ठान सम्पन्न करने के बाद करना चाहिये, जबकि साधारणत: पूरे दिन उपवास ही रखना चाहिये। जो साधक सारा दिन उपवास नहीं रख सकते तथा भैरव मंदिर में बैठकर ग्यारह माला मंत्रजाप भी नहीं कर सकते, वह साधक अपनी सामर्थ्य के अनुसार व्रत रखने का निर्णय ले सकते हैं। इसी प्रकार वह मंत्रजाप की संख्या को भी निर्धारित कर सकते हैं।

अन्य साधना, अनुष्ठानों की तरह ही भैरव अनुष्ठान में भी साधकों को पूर्ण आस्था एवं विश्वास का भाव बनाये रखना चाहिये। गहन आस्था और पूर्ण विश्वास से ही समस्त साधनाओं में अभीष्ट फलों की प्राप्ति होती है।

भैरव अनुष्ठान के दौरान एक विशेष बात भी देखने में आयी है कि अगर भैरव से संबंधित तांत्रोक्त अनुष्ठान किसी प्राचीन भैरव मूर्ति के सामने बैठकर सम्पन्न किये जाये, तो उनका प्रभाव तत्काल दिखाई देता है। परिणामस्वरूप साधक के सामने उत्पन्न हुई समस्यायें शीघ्र ही दूर हो जाती हैं। अगर भैरव की ऐसी प्रतिमा कुयें के ऊपर अथवा उसके किनारे पर स्थापित की गई है तो वह और भी प्रभावपूर्ण एवं शक्ति सम्पन्न हो जाती है। ऐसे शक्ति सम्पन्न स्थानों पर अनुष्ठान करने की बात तो दूर, वहां के दर्शनमात्र एवं संक्षिप्त पूजा-अर्चना से भी भैरव देव प्रसन्न होकर अपने भक्तों की अनेक प्रकार की समस्याओं का निराकरण कर देते हैं। इन स्थानों पर अनुष्ठान सम्पन्न करने का तो विशेष फल प्राप्त होता ही है।

हमारे देश में ऐसे अनेक शक्ति सम्पन्न भैरव मंदिर हैं, जहां बटुक भैरव की स्थापना कुयें के किनारे की गई है। इसलिये उन भैरव मंदिरों की विशेष मान्यता है। वहां भक्तों की

लम्बी-लम्बी कतारें हमेशा लगी रहती हैं। ऐसा एक भैरव मंदिर दिल्ली में नेहरू पार्क के पास स्थित है। ऐसा ही एक भैरव मंदिर काशी में कोतवाल भैरव का है। ऐसे अन्य अनेक भैरव मंदिर उज्जैन, दौसा (बालाजी हनुमान के पास), उत्तरकाशी, हरिद्वार आदि में हैं।

दिल्ली में नेहरू पार्क के पास भैरव का जो मंदिर है वह बहुत ही प्राचीन भैरव मंदिर है। मंदिर में भैरव की बहुत भारी मूर्ति की स्थापना की गई है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इस भैरव प्रतिमा की स्थापना पाण्डव पुत्र भीम के द्वारा की गई है। इस मंदिर में असंख्य लोगों की मनोकामनायें पूर्ण हुई हैं।

इस भैरव मंदिर के बारे में एक बहुत प्राचीन मान्यता है कि इस भारी भरकम प्रतिमा को किसी दूरस्थ स्थान से लाकर यहां एक कुयें के ऊपर स्थापित किया गया है। इसलिये यह भैरव मूर्ति अत्यन्त शक्ति सम्पन्न बन गई है। इतना ही नहीं, दीर्घकाल तक नियमित रूप से पूजा-उपासना का क्रम चलते रहने से यहां का सम्पूर्ण वातावरण एक अद्‌भुत आध्यात्मिक ऊर्जा सम्पन्न बन गया है। इस मूर्ति की आंखें ऐसे विशेष पत्थर से बनी हुई हैं कि उनके ऊपर अधिक समय तक अपनी आँखों को स्थिर रख पाना संभव नहीं हो पाता। अगर अधिक समय तक अपनी आंखों को भैरव प्रतिमा के ऊपर स्थिर बनाये रखा जाये तो हृदय में एक भय का संचार होने लग जाता है। इस भैरव प्रतिमा की प्रतिष्ठा विशेष तांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा की गई है, इसलिये भी यह स्थान बहुत ही उच्च ऊर्जायुक्त बन गया है।

बटुक भैरव का जो उपरोक्त अनुष्ठान है, उसमें रविवार के दिन भैरव के मंदिर जाकर वहां पर भैरव देव की विधिवत पूजा-अर्चना एवं मंत्रजाप करना होता है। इसके साथ ही घर पर भी भैरव की संक्षिप्त पूजा सम्पन्न करने एवं भैरव स्वरूप **कुशा मूल** के सामने घी का एक दीपक जलाकर रखना चाहिये। वहीं पर कम्बल का आसन बिछाकर सोमवार से शनिवार तक ग्यारह बार भैरव के उपरोक्त ध्यान मंत्र का उच्चारण करके पांच माला (अथवा अपनी सुविधानुसार संख्या में) का मंत्रजाप करते रहना चाहिये। मंत्रजाप से पूर्व कुशा मूल पर सिन्दूर का टीका अवश्य लगा लें।

इस प्रकार प्रत्येक रविवार के दिन भैरव मंदिर जाकर और शेष पाँच दिन घर पर रहकर ही विधि-विधानपूर्वक पूजा करने एवं अभीष्ट संख्या में भैरव मंत्र का जाप करते रहना चाहिये। प्रत्येक रविवार के दिन भैरव को सिन्दूर का चोला भी चढ़ाना चाहिये तथा नैवेद्य के रूप में केसरयुक्त खीर एवं पंचमेवा का प्रसाद चढ़ायें। अगर सम्भव हो तो प्रत्येक रविवार के दिन व्रत अवश्य रखें।

इस प्रकार ग्यारहवें रविवार तक यह भैरव अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है। अतः उस दिन पूजा क्रम समाप्त होने के उपरांत तीन (3 से 6 वर्ष की आयु के) बालकों को बटुक

भैरव के रूप में भोजन करवा कर दान-दक्षिणा देकर प्रसन्न करना चाहिये तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिये। इस तरह यह भैरव अनुष्ठान पूर्ण रूप से सम्पन्न हो जाता है तथा साधक की परेशानियां अपने आप ही समाप्त होने लगती हैं।

बटुक भैरव साधना का राजसिक प्रयोग :

बटुक भैरव की राजसिक उपासना का भी वही क्रम है, जो उनकी सात्विक उपासना का है। इस साधना या अनुष्ठान के दौरान भी **ॐ ह्रीं बटुक भैरवाय आपदुद्धारणाय कुरू कुरू स्वाहा** मंत्र का ही जाप करना होता है, लेकिन इस उपासना के दौरान भैरव का ध्यान थोड़ा बदल जाता है, साथ ही उनकी पूजा में कुशा मूल की जगह रजत पत्र पर निर्मित किये गये भैरव यंत्र की विधिवत स्थापना करनी पड़ती है। बटुक भैरव का यह यंत्र अगर किसी शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि को रजत पत्र पर बनवाकर विधिवत चेतना सम्पन्न कर लिया जाता है तो साधना का फल शीघ्र प्राप्त होने की संभवना बन जाती है। यद्यपि रजत यंत्र की जगह इस भैरव यंत्र को भोजपत्र के ऊपर भी अष्टगंध अथवा पंचगंध से अनार की कलम द्वारा तैयार किया जा सकता है।

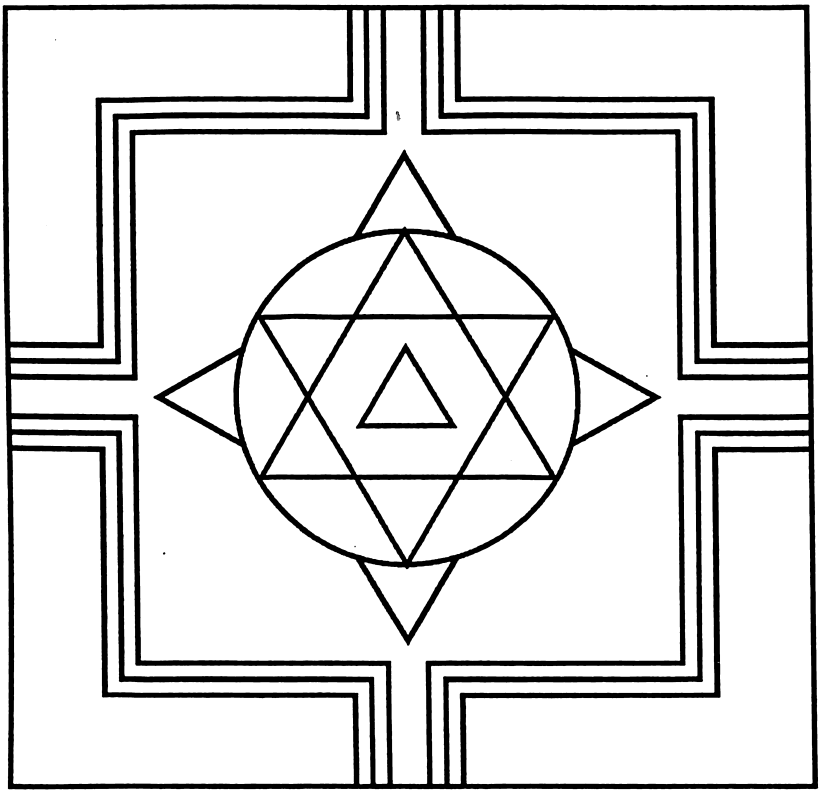

भैरव यंत्र

भैरव यंत्र को रजत पत्र अथवा भोजपत्र पर विधिवत तैयार करके, सबसे पहले षोडशोपचार पूजन से उसे चेतना सम्पन्न करना होता है और फिर अनुष्ठान के निमित्त उक्त यंत्र को काम में लाया जाता है। इस प्रकार प्राण-प्रतिष्ठित भैरव यंत्र की स्थापना से साधक अनायास पैदा होने वाली बाधाओं, शत्रु बंधनों एवं तंत्र प्रयोग से सदा से सुरक्षित रहता है। ऐसे साधक पर ही नहीं, बल्कि उस स्थान विशेष पर भी शत्रुओं के हमले एवं सभी तरह के तंत्र प्रयोग सदैव निष्फल सिद्ध होते हैं। ऐसे भैरव यंत्र की स्थापना से साधक की बहुत सी अभिलाषाएं पूर्ण हो जाती हैं। यह बटुक भैरव की अत्यधिक प्रभावी साधना है।

बटुक भैरव के इस राजसिक अनुष्ठान के दौरान साधक को प्रत्येक रविवार के दिन भैरव मंदिर जाकर भैरव को सिन्दूर का चोला चढ़ाना होता है तथा नैवेद्य के रूप में उन्हें उड़द की दाल से बनाये गये पकौड़े, इमरती, कचौरी, दही पकौड़े आदि चढ़ाया जाता है। कुत्ते को दूध पिलाना पड़ता है तथा घर पर विशेष पूजा स्थान पर भैरव यंत्र की स्थापना करनी पड़ती है।

बटुक भैरव के राजसिक स्वरूप का ध्यान मंत्र निम्न प्रकार है-

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्ग रागस्त्रजम्,
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।
नीलग्रीमुदारभूषणशतं शीतांशुखण्डोज्जलम्,
बन्धूकारुणावाससं भयहरं देवं सदा भाव्ये॥

इस ध्यान मंत्र का ग्यारह बार जाप करते हुये भैरव के सामने घी का दीपक जलाकर रखना होता है और उन्हें नैवेद्य के साथ लौंग, सुपारीयुक्त पान अर्पित करना होता है। इसके उपरांत भैरव देव से प्रार्थना करके एवं उनसे आज्ञा लेकर भैरव मंत्र का ग्यारह माला अथवा अपनी सामर्थ्य अनुसार मंत्रजाप करना चाहिये। अनुष्ठान का अन्य पूजाक्रम पूर्ण रूप से ज्यों का त्यों ही जारी रखना होता है। अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् पांच लांगुरों को भोजन करना तथा दक्षिणा आदि देकर उनका आशीर्वाद लेना होता है। इसी से अनेक प्रकार की विपत्तियां धीरे-धीरे अपने आप समाप्त होने लगती हैं।

बटुक भैरव साधना का तामसिक प्रयोग :

बटुक भैरव साधना का जो तामसिक क्रम है, वह भैरव की उपरोक्त साधनाओं से थोड़ा भिन्न है। वैसे भी, आमतौर पर भैरव के तामसिक रूप की साधना शत्रुनाश, शत्रुओं द्वारा बार-बार सताये जाने, शत्रुओं के द्वारा बार-बार झूठे मुकदमों में फंसा देना, तांत्रिक अभिचार क्रियाओं में फंस जाने आदि परिस्थितियों से मुक्ति पाने के उद्देश्य से की जाती है। अनेक बार लम्बी बीमारी में फंस जाने पर भी भैरव के तामसिक स्वरूप की साधना की जाती है। यद्यपि भैरव की इस तामसिक साधना के दौरान भी बटुक भैरव के अग्रांकित मंत्र का जाप ही करना पड़ता है और उनके अनुष्ठान की विधि भी काफी हद तक

उपरोक्त अनुसार ही रहती है।

बटुक भैरव की तामसिक साधना का मंत्र है-

ॐ ह्रीं बटुक भैरवाय आपदुद्धारणाय कुरू कुरू स्वाहा

अगर बटुक भैरव के इस अनुष्ठान को भैरव अष्टमी के दिन एक बार विधिवत पूजा-अर्चना एवं मंत्रजाप आदि के साथ सम्पन्न कर लिया जाये, तब तो इसका प्रभाव और भी चमत्कारिक रूप में सामने आता है। वैसे भी प्राचीन समय में तांत्रिकों में एक बात सर्वत्र प्रचलित रही है कि भैरव साधना के बिना तंत्र सिद्धियां प्राप्त नहीं हो पाती हैं। यद्यपि सिद्धियों से अलग हट कर अभीष्ट विपत्तियों से मुक्ति पाने के लिये इस भैरव अनुष्ठान को किसी भी रविवार के दिन से प्रारम्भ किया जा सकता है।

बटुक भैरव के इस तामसिक अनुष्ठान के लिये सबसे पहले भैरव यंत्र का विधिवत निर्माण करके उसकी स्थापना करनी पड़ती है। भैरव का यह यंत्र भैरवाष्टमी के दिन अथवा किसी भी उजले पक्ष की अष्टमी तिथि को रजत पत्र अथवा भोजपत्र पर अष्टगंध

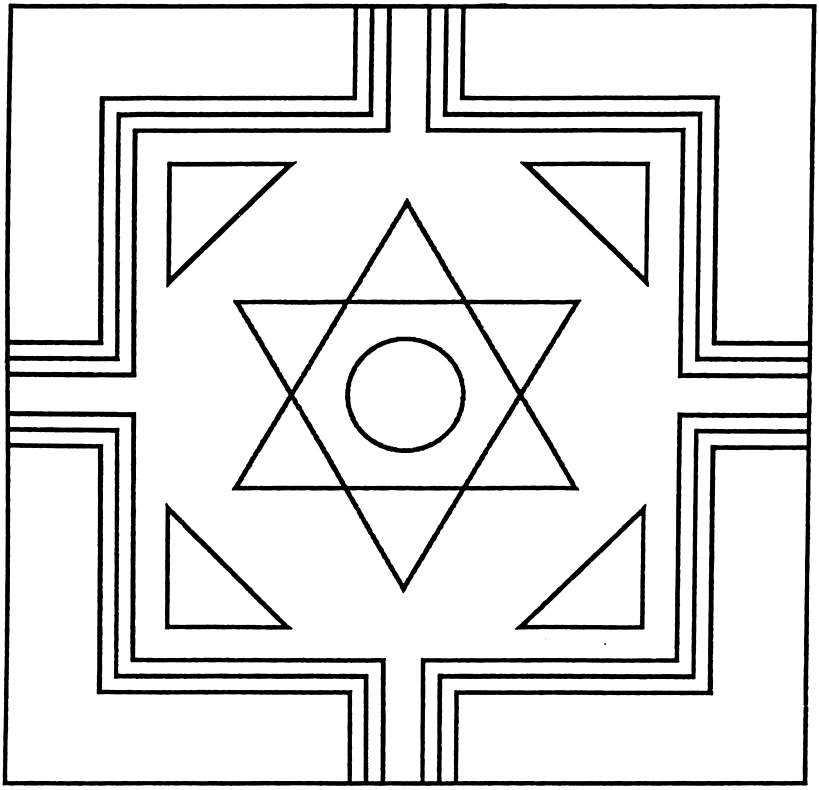

तामसिक भैरव यंत्र

या पंचगंध से अनार की कलम से तैयार करके प्राण-प्रतिष्ठित करना चाहिये। अष्टगंध अथवा पंचगंध के रूप में गोरोचन, केसर, कस्तूरी, अगर, तगर, श्वेत चन्दन, रक्त चंदन, जवाकुसुम के पुष्प काम में लाये जाते हैं।

यंत्र का निर्माण अगर किसी धातु जैसे कि स्वर्ण, रजत, ताम्र, लोहे में से किसी पर करना हो तो उसके सम्बन्ध में भी कुछ बातों का ध्यान कर लेना चाहिये। सबसे पहले इसी बात का ख्यान रखना चाहिये कि धातुयें निद्रादोष से पीड़ित न हों अर्थात् यंत्र निर्माण के लिये काम में लायी जानें वाली धातुएं न तो दान में ग्रहण की गई हो और न ही चुराई, छीनी गई हों। धातुएं शुभ मुहूर्त में पूरा मूल्य चुका कर प्रसन्नतापूर्वक खरीदी गई हों। खरीदने के बाद उन्हें विधिवत् शुद्ध किया गया हो। उन पर शुभ मुहूर्त में शुभ दिन पर शुद्ध आचार-विचार के बाद यंत्र को निर्मित करवाया गया हो। इसके पश्चात् उसकी विधिवत् प्राण-प्रतिष्ठा की गई हो। सामान्य साधक चाहें तो भोजपत्र पर अष्टगंध की स्याही से अनार अथवा पीपल वृक्ष की कलम से यंत्र का निर्माण कर सकते हैं अथवा ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण करवाया जा सकता है। आर्थिक पक्ष अगर सबल है तो रजत पत्र पर यंत्र उत्कीर्ण करवाया जा सकता है। किसी भी साधना अथवा अनुष्ठान में इस बात का महत्त्व अधिक है कि साधक की भावना कैसी है ? अगर साधक अच्छे मन से सीमित साधनों द्वारा भी साधना करता है तो उसे इसका लाभ अवश्य ही प्राप्त होगा।

अगर उपरोक्त प्रकार के यंत्र प्राप्ति में समस्या उत्पन्न हो तो उसकी जगह इस अनुष्ठान को कुर्ये की मिट्टी से निर्मित भैरव प्रतिमा अथवा भैरव मंदिर जाकर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इस तामसिक अनुष्ठान में भी सबसे पहले भैरव प्रतिमा को सिन्दूर मिश्रित सरसों के तेल का चोला चढ़ाया जाता है। भैरव के गले में जवा कुसुम के पुष्पों से निर्मित माला अथवा जो माला उपलब्ध हो, वह पहनाई जाती है। शतावरी से तैयार माला भी उन्हें अर्पित की जा सकती है। इसके बाद भैरव को घी का दीपक अर्पित किया जाता है। उन्हें उड़द की दाल से तेल में तले पकौड़े या पुए का नैवेद्य लगाया जाता है। तत्पश्चात् भैरव के अग्रांकित तामसिक ध्यान का ग्यारह बार उच्चारण करते हुये उनका आह्वान करते हैं तथा यंत्र अथवा प्रतिमा के सामने ग्यारह-ग्यारह काली मिर्च के दाने, लौंग, सुपारी, काली मुनक्का आदि अर्पित किये जाते हैं।

ध्यान मंत्रः- भैरव का तामसिक ध्यान निम्न प्रकार है-

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशम्।
दिग्वस्त्रं पिङ्ग लाक्षं डमरूमथ सृणिं खड्ग शूलाभयानि॥
नागं घंटां कपालं करसरसिरू हर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रम।
सर्पाल्पं त्रिनेत्रं मणिमयबिलत्किङ्किणीनूपुराढ्मम्॥

बटुक भैरव ध्यान के पश्चात् काले कम्बल अथवा ऊन के आसन पर बैठकर भैरव

देव के सामने अपनी प्रार्थना को रखें। शत्रुओं से पीछा छुड़ाने का अनुरोध करें, तत्पश्चात् भैरव देव की आज्ञा प्राप्त करके रुद्राक्ष माला अथवा काले मनके वाली यजमानी हकीक माला से अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप पूरा कर लें। मंत्रजाप पूर्ण हो जाने पर एक बार पुनः भैरव से प्रार्थना करें और उन्हीं की आज्ञा प्राप्त करके अपने आसन से उठें।

अनुष्ठान का यह पूरा क्रम ही पूर्ण साधनाकाल में बना रहता है। इसमें प्रत्येक मंगलवार के दिन यंत्र की सम्पूर्ण पूजा अथवा भैरव प्रतिमा पर चोला चढ़ाना, भैरव को जवा कुसुम अथवा शतावरी माला का अर्पण, उड़द की दाल से बने पुए अथवा पकौड़े का नैवेद्य अर्पित करना है। इसके अलावा भैरव का दीप दान, उनका आह्वान भी आवश्यक है। भैरव को कालीमिर्च, लौंग आदि का अर्पण और तत्पश्चात् प्रार्थना आदि के बाद अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप किये जाने चाहिये।

जिस दिन आपका अनुष्ठान सम्पन्न हो जाये उस दिन मंत्रजाप करने के उपरांत घी, पीली सरसों, जवाकुसुम, भूतकेशी, काले तिल, जौ आदि सामग्री से इसी मंत्रजाप के साथ 51 मंत्रों की अग्नि में आहुति देकर पांच लड़कों को भोजन कराना तथा दक्षिणा आदि देकर प्रसन्न करना होता है। इसके पश्चात् अगले दिन पूजा की समस्त सामग्री को किसी स्वच्छ वस्त्र में बांधकर बहते जल में प्रवाहित कर दें। इस तरह बटुक भैरव तंत्र अनुष्ठान की समाप्ति हो जाती है और साधक को भी अपनी आपात पीड़ाओं से निश्चित रूप से मुक्ति मिल जाती है। इस तामसिक अनुष्ठान से साधक के शत्रु स्वतः ही कमजोर पड़कर पीछे हट जाते हैं तथा साधक को सताना छोड़ देते हैं। इतना ही नहीं, घर-परिवार में अगर कोई लम्बी बीमारी से पीड़ित चल रहा है तो वह भी भैरव की अनुकंपा से शीघ्र ही स्वस्थ हो जाता है।

साधकों को भैरव अनुष्ठान के संबंध में एक विशेष बात भी ठीक से समझ लेनी चाहिये कि तांत्रिक अनुष्ठान एक विशेष प्रक्रिया पर आधारित रहते हैं। ऐसे तांत्रिक अनुष्ठानों को पूर्णता के साथ सम्पन्न कर पाना हर किसी के लिये सम्भव नहीं हो पाता। ऐसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये कई तरह की तांत्रिक वस्तुयें और विशेष शुभ मुहूर्तों की आवश्यकता तो पड़ती ही है, इनके अलावा भी ऐसे तांत्रिक अनुष्ठान किसी मार्गदर्शक (गुरु) के बिना सफलतापूर्वक सम्पन्न नहीं हो पाते। अतः ऐसे तांत्रिक अनुष्ठानों की जगह भैरव की कृपा प्राप्त करने तथा अपनी विभिन्न तरह की समस्याओं से मुक्ति पाने के लिये उनकी साधारण पूजा अथवा उनके मंदिर जाकर चोला चढ़ा देना तथा अपनी सुविधानुसार उन्हें नैवेद्य चढ़ा देना, पुष्प, घी का दीपक चढ़ा देना, उन्हें गंध आदि अर्पित कर देना पर्याप्त रहता है। इसी से भैरव देव प्रसन्न हो जाते हैं। वैसे भी भैरव कलियुग के प्रत्यक्ष देव है। वह अपने साधकों की प्रार्थना से तत्काल प्रसन्न होकर उनकी मनोकामनाओं की सहज ही पूर्ति कर देते हैं।

कालसर्प दोष निवारक काल भैरव अनुष्ठान

आधुनिक ज्योतिषशास्त्र में कालसर्प दोष (योग) का विशेष स्थान है। जिन लोगों के जन्मांगों में कालसर्प दोष पाया जाता है, वे अपने जीवन में अनेक प्रकार की आशंकाओं से घिरे रहते हैं। एक अव्यक्त भय हमेशा उन्हें भयभीत किये रहता है। वे समझते हैं कि कालसर्प दोष होने के कारण उनका पूरा जीवन दु:ख एवं कष्टों से बीतेगा, उन्हें बार-बार अपने जीवन में मानसिक संताप और उतार-चढ़ाव की परिस्थितियों से गुजरना ही पड़ता है। ऐसे जन्मांगों वाले बहुत से लोग अन्य विशेष योगों की उपस्थिति के कारण कुछ क्षेत्रों में तो निरन्तर उच्च सफलताएं प्राप्त करते चले जाते हैं, परन्तु जीवन के अन्य क्षेत्रों में उन्हें बार-बार असफलताओं का सामना करना पड़ता है।

ज्योतिषशास्त्र में राहू और केतु नामक छाया ग्रहों को पीड़ादायक और नीच स्वभाव के ग्रह माना गया है। यह दोनों छाया ग्रह (राहू और केतु) एक-दूसरे के बिलकुल विपरीत, आमने-सामने अर्थात् क्षितिज के विपरीत ध्रुवों पर स्थित रहते हैं। इनकी परस्पर स्थिति 180 डिग्री अंश के अन्तर पर रहती है। यह दोनों छायाग्रह जिन शुभ भावों अथवा शुभ ग्रहों के साथ बैठते हैं, उन्हें भी अपने दूषित प्रभाव से प्रतिकूल फल प्रदान करने वाला बना देते हैं। अगर इन दोनों छाया ग्रहों के मध्य एक विशेष स्थिति में अन्य सातों ग्रह आ जायें, तो वह जन्मांग कालसर्प योग से दूषित माना जाता है। ऐसी स्थिति में इन छाया ग्रहों के अशुभ प्रभाव उन अन्य ग्रहों पर और भी प्रबल रूप से पड़ता है। इन्हीं के फलस्वरूप उन लोगों को जीवन भर अनेक प्रकार के संताप भुगतने पड़ते हैं।

इन छाया ग्रहों की स्थिति अनुसार कालसर्प योग के अनेक रूप सामने आते हैं, परन्तु उनमें से बारह भावों के आधार पर कालसर्प योग के बारह प्रकार सर्वाधिक मुख्य हैं। राहू-केतु के भावगत स्थिति के आधार पर जो कालसर्प योग निर्मित होते हैं, उन्हीं के आधार पर तत्संबंधी घटनाएं लोगों के जीवन में घटित होती जाती हैं। कालसर्प दोष का प्रभाव व्यक्ति के जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र, स्वास्थ्य, शिक्षा, व्यवसाय, गृहस्थ सुख, संतान, आर्थिक स्थिति, पैत्रिक सम्पत्ति, बाल्यकाल का सुख, माँ-बाप का प्यार-दुलार, सम्पन्नता, मान-सम्मान आदि पर देखा जाता है। इसी के कारण उन लोगों के जीवन में अनेक प्रकार की समस्यायें एवं अवरोध उत्पन्न होते रहते हैं। कालसर्प योग के कारण कई तरह की विसंगतियां आमतौर पर उत्पन्न होने लगती हैं, जिनमें विवाह बाधा, कलहपूर्ण दाम्पत्य जीवन, धन हानि, आर्थिक विषमता, संतानहीनता, कमजोर स्वास्थ्य, असाध्य व्याधि, व्यवसाय में अवनति, सम्मान की क्षति, दुर्घटनाएं, अनावश्यक मुकदमेबाजी और

वैधव्य आदि कुछ प्रमुख हैं।

अनेक बार ऐसा देखने में आया है कि जिन लोगों के जन्मांग में कालसर्प योग विद्यमान रहता है, उनके जीवन में एकाएक नाटकीय मोड़ आ जाता है, जिससे उनके जीवन की धारा एकाएक बदल जाती है, क्योंकि अन्य ग्रहों की कुछ विशेष दशाओं में, उनके जीवन पर राहू अथवा केतु के क्रूर एवं दुष्प्रभाव एकाएक रूप में और भी तीव्र हो जाते हैं। इसलिये उन्हें अपने जीवन में अप्रत्याशित रूप से हानि उठानी पड़ती है या उनके जीवन की प्रगति में अवरोध उत्पन्न होने लगते हैं। इन्हीं अवस्थाओं में लोगों के मान-सम्मान को गहरी ठेस पहुंचती है। नौकरी में एकाएक बाधाएं खड़ी होने लग जाना अथवा पदोन्नति रुक जाना भी कालसर्प दोष के कारण हो सकता है। ऐसी ही स्थितियों के कारण अधिकारियों से अकारण लड़ाई-झगड़े की स्थितियां बन जाना, बार-बार नौकरी में स्थानान्तर (ट्रांसफर) का सामना करना, जीवन भर संचित किये धन का एकाएक किसी कारणवश समाप्त हो जाना, दाम्पत्य सुख में विसंगतियां पैदा होने लग जाना अथवा एकाएक कलह एवं विघटन की स्थितियां उत्पन्न हो जाना, बिना किसी कारण संतानहीनता की स्थिति बन जाना अथवा अनावश्यक रूप से विवाह आदि में विलम्ब होते चले जाना आदि कुछ ऐसी ही स्थितियां हैं, जिनके मूल में कालसर्प दोष मुख्य कारण होता है। कालसर्प दोष का सीधा व तीव्र प्रभाव व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर देखा जाता है। ऐसे लोगों की मानसिक स्थिति हमेश बेचैनी युक्त बनी रहती है। मानसिक पीड़ा के साथ ही इन लोगों को प्रायः कई तरह के शारीरिक रोगों का भी सामना करना पड़ता है। कई बार तो ऐसे रहस्यमय रोग के भी शिकार बन जाते हैं जिनका निदान तक चिकित्सक नहीं कर पाते। कालसर्प दोष के तीव्र प्रभाव के कारण एकाएक अपमानित होना, कारागार जाने की स्थिति आ जाना अथवा अकाल मृत्यु का सामना भी करना पड़ सकता है। वास्तव में ही कालसर्प दोष का प्रभाव बहुत ही पीड़ादायक रूप में सामने आता है।

कालसर्प दोष से पीड़ित असंख्य लोगों को संताप भोगते हुये देखा जा सकता है। ज्योतिषशास्त्र में कालसर्प दोष के शमन के लिये कई तरह के पूजा-पाठ और उपायों का उल्लेख हुआ है, किन्तु देखने में यह आया है कि कालसर्प दोष की अनेक विषम परिस्थितियों में **काल भैरव** की आराधना करने एवं उनके तांत्रोक्त अनुष्ठान को सम्पन्न करने से पीड़ाजन्य प्रभाव को कम करने की राह प्रशस्त होती है। काल भैरव की अनुकंपा से शीघ्र ही कालसर्प दोष के कारण उत्पन्न हुई विषम परिस्थितियां फिर से अनुकूल बनने लगती हैं तथा साधक फिर से अपने मान-सम्मान, यश, धन, स्वास्थ्य और पद आदि की प्राप्ति कर लेता है। काल भैरव अपने प्रभाव से साधक के समस्त दुःख एवं पीड़ा को समाप्त कर देते हैं। काल भैरव के तांत्रिक अनुष्ठान से लाभान्वित हुये दो मित्रों से सम्बन्धित अनुभव का यहां मैं उल्लेख करना चाहूंगा-

एक मित्र तो अमृतसर के ही हैं। इन्होंने अपने जीवन में अनेक बार उतार-चढ़ाव को निकट से देखा है। अनेक बार उन्होंने लाखों रुपया कमाया और उसी तरह अनेक बार घर-बार, दुकान आदि तक सब कुछ बेचना पड़ा।

शुरू में इन्होंने दिल्ली, चांदनी चौक स्थित अपने पिता की कैमिकल संबंधी दुकान संभाली। चार-पांच साल के भीतर ही अपनी मेहनत और युक्ति से इन्होंने अपने कारोबार को काफी ऊंचाईयों तक पहुंचा दिया। इस अवधि में इन्होंने अपने मकान को नये सिरे से बनवाया और इसी दौरान उनका विवाह भी सम्पन्न हो गया। जैसे ही पिता की मत्यु हुई, वैसे ही भाइयों में कलह की भावना उत्पन्न हो गई। दो वर्ष के भीतर ही सारा कारोबार तबाह हो गया। दुकान, घर-बार सब कुछ बेचकर इन्हें अपनी ससुराल (अमृतसर) आना पड़ा। यहां पर भी चार-पांच साल तक कई फर्मों में नौकरियां की, फिर कुछ पैसे इधर-उधर से उधार पकड़ कर प्लास्टिक की फैक्ट्री लगा ली। शुरू में तो फैक्ट्री का काम-काज ठीक-ठाक ही था, लेकिन फिर उसकी किस्मत जाग गई। अगले कुछ वर्षों में उनकी तीन प्लास्टिक की फैक्ट्रियां हो गई और कारोबार कई शहरों तक फैल गया। कई वर्ष तक बहुत अधिक सम्पन्नता बनी रही, लेकिन फिर उनके और उनकी पत्नी, दोनों के जन्मांग में मौजूद कालसर्प दोष ने अपना प्रभाव दिखाया तथा देखते-देखते फिर से वह सड़क पर आ गये। सम्पन्नता की बात तो दूर, खाने तक को लाले पड़ गये। डेढ़ साल के भीतर ही स्वयं इन्हें तीन ऑपरेशन कराने पड़े। एक ऑपरेशन पत्नी का हुआ।

पति-पत्नी में कोई दोष नहीं है, लेकिन विवाह के 30 वर्ष बाद भी वह निःसंतान हैं। इतना लम्बा-चौड़ा व्यापार करते रहने के उपरांत भी किराये के मकान में रहने पर विवश हैं। कोई भी रिश्तेदार सहायता को तैयार नहीं होता। इन्होंने जीवन भर मित्र और रिश्तेदारों की जी खोल कर मदद की, किन्तु आवश्यकता के समय इनकी मदद को कोई आगे नहीं आया। अन्ततः इनके जीवन में भी **काल भैरव अनुष्ठान** से बहुत बदलाव आया।

काल भैरव अनुष्ठान को इस सज्जन ने लगभग चार वर्ष पहले सम्पन्न किया था। उस समय इनकी बहुत ही दयनीय हालत थी। न तो पति-पत्नी, दोनों का शारीरिक स्वास्थ्य ही ठीक रहता था और न ही इन्हें बाजार में अपने उत्पादों के लिये खरीददार ही मिलते थे। जो इनका माल खरीद लेता था, वह पैसे देने में ही आना-कानी करता रहता था। परिणामस्वरूप इनके घर पर सदैव लेनदारों का तांता लगा रहता था। जैसे ही इन्होंने **काल भैरव** तांत्रिक अनुष्ठान को सम्पन्न करवाया, वैसे ही इनकी हालत में चमत्कारिक रूप में बदलाव आने लगा। इस अनुष्ठान के बाद उनकी शारीरिक व्याधियां तो दूर हुई ही, उनका कारोबार भी फिर से व्यवस्थित होता चला गया। बाजार में उसकी लाखों की जो रकम फंस गई थी, वह भी वापिस मिलने लगी। काल भैरव की कृपा दृष्टि से कुछ ही समय में

अपने मान-सम्मान, आर्थिक और सामाजिक स्थिति को प्राप्त कर लिया। आज भी यह दम्पती नियमित रूप से काल भैरव की पूजा-आराधना करने में किसी भी प्रकार की लापरवाही नहीं करते।

इसी तरह का एक अन्य उदाहरण है। इस व्यक्ति ने भी अपने जीवन में कई उतार-चढ़ाव देखे हैं। कुछ समय पहले तक वह लाखों में खेलता था। वह एक प्राइवेट फर्म में सेल्स मैनेजर की नौकरी करता था, फिर भी उसने अच्छी कमाई की थी। 10-12 साल के भीतर ही उसने शहर में महंगा मकान बनवा लिया था। बच्चे बड़े स्कूल में पढ़ते थे। उसकी एक दुकान भी थी जिसे उसकी पत्नी व नौकर देखते थे। यह वह समय था जब उसके पास भाई-बहिन, माँ-बाप के लिये एक दिन निकाल पाना भी कठिन होता था। इसके बाद काल सर्पयोग के दोष ने इस व्यक्ति के मान-सम्मान को खण्डित करके रख दिया।

इस बार भी कालसर्प दोष के प्रभाव से कुछ ऐसा घटनाक्रम घटित हुआ कि उस व्यक्ति का मान-सम्मान, घर-गृहस्थी, व्यापार आदि सब कुछ चौपट हो गया। मालिक के साथ ऐसा अविश्वास उत्पन्न हुआ कि नौकरी छोड़नी पड़ी। शारीरिक स्वास्थ्य भी कई महीनों तक खराब रहा। दुकान बन्द हो गई। अपना घर-परिवार छोड़ना पड़ा, पुलिस के चक्कर में पड़ना पड़ा। बीवी-बच्चों को छोड़कर काम की तलाश में अन्य शहरों में भटकने पर भी विवश होना पड़ा। कालसर्प दोष का प्रभाव बहुत ही विषम है, जो अपने प्रभाव से व्यक्ति को किसी भी हद तक दुःख पहुंचा सकता है, लेकिन इस व्यक्ति के जीवन में भी **काल भैरव** के तांत्रिक अनुष्ठान से फिर से मुस्कुराहट लौटते हुये देखी गई। उसे काल भैरव के अनुष्ठान से ही शान्ति, धन और मान-सम्मान की प्राप्ति हुई। काल भैरव के तांत्रिक अनुष्ठान को सम्पन्न करने के तीन महीने के भीतर ही उसे अन्य जगह पहले जैसी ही सम्माननीय नौकरी मिल गई। कम्पनी ने ही उसके रहने-ठहरने की समुचित व्यवस्था करवा दी। थोड़े ही दिनों में वह तीन वर्ष की पीड़ा का दुःख, संताप, सब कुछ भूल गया।

कालसर्प योग शान्ति की प्रक्रिया :

ज्योतिषशास्त्र में कालसर्प दोष के शमन के लिये अनेक प्रकार के विधान, विधियां और उपाय बताये गये हैं। इनमें राहू-केतु के अतिरिक्त अन्य सातों ग्रहों से सम्बन्धित पूजा-पाठ, जप, हवन आदि तो सम्मिलित हैं, इसके अतिरिक्त अन्य अनेक उपाय भी शामिल हैं। ऐसे सभी अनुष्ठानों एवं उपायों को सम्पन्न करने के लिये पर्याप्त धैर्य, शुद्धि एवं अपेक्षित समय की आवश्यकता पड़ती है। इसके साथ-साथ ऐसे सभी पूजाक्रमों को पूर्णतः एवं कुशलतापूर्व सम्पन्न कराने के लिये विद्वान आचार्यों का सहयोग लेना पड़ता है। ऐसे पूजा-पाठ का प्रभाव काल भैरव अनुष्ठान की अपेक्षा धीमी गति से ही होता है।

व्यक्तिगत अनुभवों में यह बात देखने में आयी है कि अगर कालसर्प दोष से पीड़ित चल रहे ऐसे लोग काल भैरव सम्बन्धी अग्रांकित तांत्रिक अनुष्ठान को सम्पन्न कर लें अथवा किसी आचार्य द्वारा सम्पन्न करवा लें, तो कालसर्प दोष के संताप से मुक्त हुआ जा सकता है।

काल भैरव का यह तांत्रिक अनुष्ठान बहुत ही प्रभावशाली और अद्‌भुत है। इसकी प्रभावशीलता का अनुभव अनेक बार किया जा चुका है। इसलिये यह अनुष्ठान कालसर्प दोष के लिये ही नहीं, अपितु अन्य अनेक प्रकार की समस्याओं से मुक्ति पाने के लिये भी किया जाता है।

आवश्यक सामग्री :

इस तांत्रिक अनुष्ठान के लिये सबसे पहले किसी शुभ मुहूर्त में गांव के बाहर से लाई गई अथवा किसी कुयें/तालब से निकाली गई मिट्टी की आवश्यकता पड़ती है। इसी मिट्टी से काल भैरव की एक प्रतिमा बनाकर अनुष्ठान के काम में लाई जाती है। इसके अलावा इस अनुष्ठान के लिये सिन्दूर, घी, मिष्ठान अथवा खीर, मिट्टी का एक बर्तन, पांच दीये, पुष्प, धूप, दीप, कपूर आदि सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है।

भैरव पूजा के लिये तांत्रिक अनुष्ठान किसी रविवार अथवा मंगलवार के दिन से शुरू किया जांता है। ऐसा रविवार या मंगलवार शुक्लपक्ष का हो तो और भी अच्छा है। ज्ञातव्य है कि भैरव हनुमानजी की भांति शिव के ही अंश हैं, अतः इनकी साधना के लिये रविवार का दिन तो शुभ है ही, मंगलवार का दिन भी ठीक रहता है।

काल भैरव का यह तांत्रिक अनुष्ठान कुल 31 दिन का है। इसके लिये साधक को उत्तराभिमुख होकर अनुष्ठान में बैठना पड़ता है। अनुष्ठान में बैठने के लिये काले ऊनी कम्बल के आसन की आवश्यकता पड़ती है। प्राचीन समय में मृगचर्म पर बैठ कर अनुष्ठान किया जाता था किन्तु आज मृग का वध करके उसका चर्म प्राप्त करना अपराध की श्रेणी में आता है।

अगर भैरव से सम्बन्धित ऐसे अनुष्ठान घर से बाहर किसी भैरव के मंदिर में बैठकर अथवा किसी कुये की मुंडेर के नजदीक बैठकर सम्पन्न किये जाये, तो तत्क्षण अपना असर दिखाने लगते हैं। भैरव मंदिरों में निरन्तर पूजा-अर्चना का क्रम जारी रहने से वहां का सारा वातावरण ही प्रभावपूर्ण बन जाता है। इसलिये ऐसी पवित्र एवं प्रभावपूर्ण जगह में प्रवेश करते ही लोगों में एक विशेष प्रकार की अनुभूति होने लग जाती है। ऐसे पूज्य स्थानों पर जाकर पूर्ण भक्ति भाव युक्त प्रार्थना करना एवं भैरव उपासना करना ही पर्याप्त रहता है। यहां पर भैरव के दर्शन मात्र से ही अनेक प्रकार के कष्ट स्वतः ही समाप्त हो जाते हैं। अगर ऐसे प्रभावपूर्ण स्थानों पर बैठकर अनुष्ठान सम्पन्न किये जाये तो उसका

प्रभाव शीघ्र दिखाई देने लगता है। भैरव कृपा से कोई कष्ट शेष रह ही नहीं सकता।

भैरव का वास कुयें में माना गया है, इसलिये अधिकतर भैरव मंदिरों की स्थापना कुओं के किनारे अथवा उनके ऊपर की जाती है। कुयें पर प्रतिष्ठित किये गये ऐसे भैरव मंदिर अधिक प्रभावी सिद्ध होते हैं। यहां आकर पूजा-अर्चना करने से अवश्य ही भैरव प्रसन्न होते हैं और आशीर्वाद के रूप में अपने भक्तों की अनेक पीड़ाओं का हरण कर लेते हैं।

इस भैरव अनुष्ठान को किसी मंदिर में बैठकर अथवा कुयें के निकट सम्पन्न कर पाना संभव न हो पाये, तो इसे घर पर भी पूर्ण विधान से सम्पन्न किया जा सकता है। घर पर इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये किसी एकान्त कक्ष को साधना कक्ष का रूप दिया जाता है। इसमें एक बात का विशेषतौर पर ध्यान रखा जाता है कि अनुष्ठान के पूर्ण होने तक अन्य दूसरा व्यक्ति साधना कक्ष में प्रवेश न करे, विशेष रूप से मासिक चक्र के दौरान उन स्त्रियों को साधना कक्ष से ही दूर रहने के साथ-साथ साधक के सम्पर्क में आने से भी बचना चाहिये।

भैरव साधना के लिये सर्वाधिक उपयुक्त समय संध्याकाल के छः बजे के बाद अर्थात् सूर्यास्त के बाद का समय रहता है। जिस दिन से इस अनुष्ठान की शुरूआत करनी है, उससे एक दिन पहले पूजा की समस्त सामग्रियों को एक जगह एकत्र करके रख लेना चाहिये। उस दिन सबसे पहले सायंकाल में स्नान-ध्यान करके पवित्र हो जायें। अपने शरीर पर श्वेत रंग का एक अधोवस्त्र ही रहे तो अधिक अच्छा है।

अपने साधनाकक्ष में जाकर आसन पर उत्तराभिमुख होकर बैठ जायें। अपने सामने की थोड़ी सी जगह को गाय के गोबर से लीप कर शुद्ध कर लें। उस स्थान पर एक चौकी रख कर उसके ऊपर लाल रंग का एक रेशमी वस्त्र बिछा लें। चौकी के ऊपर आक अथवा पलाश के पत्ते बिछाकर उनके ऊपर मिट्टी की बनी भैरव प्रतिमा को रख दें। इनकी जगह पर आम के पत्ते अथवा तांबे के पात्र का प्रयोग भी किया जा सकता है।

इसके उपरान्त दिशा को बांधने (दिग्बन्धन) का कार्य करें। भैरव आदि साधनाओं के दौरान आत्मरक्षा के लिये निमित्त दिशा बंधन करना बहुत आवश्यक होता है।

दिग्बन्धन करने के लिये आप अग्रांकित मंत्र बोलते हुये और अपने हाथ से **अस्त्र मुद्रा** बनाते हुये अर्थात् दाहिने हाथ की मध्यमा एवं अंगुष्ठ के द्वारा चुटकी बजाकर अन्त में दाहिने हाथ की तर्जनी, मध्यमा और बायें हाथ की हथेली से तीन बार ताली बजाते हुये भावना करें कि आपके चारों ओर आत्मरक्षार्थ एक अग्नि की लकीर खिंच गयी है।

दिग्बन्धन मंत्र है-

ॐ सर्वभूत निवारणाय सारंगाय सशराय।

सुदर्शनाय अस्त्रराजाय हूं फट् स्वाहा।

फिर निम्न मंत्र बोलते हुये निर्दिष्ट दिशा की ओर मुंह करके प्रणाम करें-

दाहिनी ओर-

ॐ आधार शक्त्यै नमः।

बायीं ओर-

ॐ गं गणपतये नमः।

अपने सामने-

ॐ श्री काल भैरवाय नमः।

अपने पीछे-

ॐ श्री नृसिंहासनाय नमः।

इसके पश्चात् भूत अदि अतृप्त आत्माओं की शान्ति के लिये निम्न क्रिया करें-

अपने बायें हाथ में थोड़ा सा जल और काले तिल लेकर दायें हाथ से ढक लें तथा निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुये उन्हें अपने चारों ओर, सभी दिशाओं में छिड़कते जायें-

अपसर्पन्तु ये भूताः ये भूता भूमि संस्थिता।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

अचक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषाभविरोधेन पूजा कर्म समारंभे॥

इसके उपरांत अपने बायें पैर की ऐड़ी को उठाकर तीन बार भूमि पर मारें (ताड़न करें)। इस शुद्धि कर्म के पश्चात् एक कांसे की कटोरी में सिन्दूर को घी में ठीक से मिला लें तथा निम्न मंत्र का तीन बार उच्चारण करते हुये मिट्टी की प्रतिमा पर लेपन कर दें। भैरव प्रतिष्ठा का मंत्र निम्न प्रकार है-

ॐ आं ह्रीं क्रीं मम प्राणा इह प्राणाः।
ॐ आं ह्रीं क्रों मम जीव इह स्थितः॥

ॐ आं ह्रीं क्रों मम वाङ्ग मनस्त्वच्चक्षुः श्रोत्रजिलाघ्राण।
पाणिपाद् पायुस्थानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥

ॐ असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्।
ज्योक्पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मूडपानः स्वस्ति॥

तत्पश्चात् घी का एक दीप जलाकर भैरव प्रतिमा के सामने रख दें। फिर निम्न मंत्र का तीन बार उच्चारण करते हुये भैरव प्रतिमा पर क्रमशः वस्त्र, पुष्प, सुपारी, लौंग, कालीमिर्च, पान, सुगन्ध, नैवेद्य आदि चढ़ाते जायें। मंत्र इस प्रकार है-

ॐ ह्रीं अः संहार भैरवाय नमः।

संहार भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

फिर काल भैरव का आह्वान करते हुये उन्हें पुनः पांच लौग, पांच कालीमिर्च के दाने और पांच इलायची समर्पित करें। नैवेद्य के रूप में उन्हें खीर का भोग लगायें और स्वयं भी अपने मस्तक पर सिन्दूर का टीका लगा लें।

इसके साथ ही पूजा क्रम सम्पूर्ण हो जाता है। अतः काल भैरव के सामने आंखें मूंदकर और पूर्ण भक्ति भाव युक्त होकर अपनी प्रार्थना करें। अगर आप पूर्ण तन्यमयता के साथ भैरव के सामने प्रार्थना करते रहेंगे, तो अगले कुछ दिनों के पश्चात् ही आपको ऐसा प्रतीत होने लगेगा कि काल भैरव स्वयं आपके सामने उपस्थित होकर आपकी प्रार्थना सुन रहे हैं। आपको अपने अन्तरमन में काल भैरव की तीक्ष्ण आंखों की रोशनी अनुभव होने लगेगी। अतः पूर्ण एकाग्रता के भाव में की गई प्रार्थना तत्क्षण अपना प्रभाव दिखाती है।

काल भैरव के सामने अपनी प्रार्थना करने के पश्चात् उन्हीं की आज्ञा लेकर उनके मंत्र का जाप पूरा करें और काल भैरव स्तोत्र का ग्यारह बार पाठ करें। चूंकि यह काल भैरव तांत्रिक अनुष्ठान, कालसर्प दोष के शमन के निमित्त किया जाता है, अतः प्रार्थना के दौरान इस बात का विशेष उल्लेख करते रहना चाहिये। काल भैरव से अनुरोध करना चाहिये कि वह अपने प्रताप से शीघ्रताशीघ्र आपको समस्त संकटों से मुक्ति दिला दें।

काल भैरव का मंत्र निम्न प्रकार है-

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं: ह्रः क्षां क्षीं क्षूं क्षः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः ध्रां ध्रीं ध्रूं ध्रः म्रां म्रीं म्रूं म्रः श्रीं श्रीं श्रीं श्री ज्रों ज्रों ज्रों हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं फट्। सर्वतो रक्ष रक्ष रक्ष काल भैरवाय हूं फट्।

इस काल भैरव का जाप लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला अथवा काली हकीक माला से किया जाता है। जप माला में 108 मनके होने चाहिये। जपोपरान्त माला को अपने गले में धारण कर लेना चाहिये। जब आपका मंत्रजाप सम्पन्न हो जाये तो उसके उपरान्त एकादश बार निम्न काल भैरवाष्टक स्तोत्र का पाठ भी कर लेना लाभदायक रहता है। अगर ग्यारह माला का मंत्रजाप एवं ग्यारह बार भैरवाष्टक स्तोत्र का पाठ करने में आपको असुविधा अनुभव हो तो इनकी संख्या को अपनी सामर्थ्य के अनुसार पांच-पांच तक भी सीमित किया जा सकता है। ग्यारह माला मंत्रजाप एवं ग्यारह बार काल भैरवाष्टक स्तोत्र का पाठ तो तांत्रिकों के लिये विशेष कार्यों को सिद्ध करने के लिये निर्धारित किया गया है। सामान्य लोगों के लिये तो जितना मंत्रजाप हो जाये और सुविधाजनक रूप से जितने पाठ सम्भव हों, उतने ही पर्याप्त रहते हैं। यद्यपि विशेष परिस्थितियों में इस प्रकार के तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न कराने के लिये विद्वान व कर्मकाण्ड करने वाले ब्राह्मणों की मदद ली जा

सकती है।

मंत्रजाप सम्पन्न हो जाने के पश्चात् एक मिट्टी के पात्र में आम, पीपल की लकड़ियां रखकर अग्नि प्रज्ज्वलित करें तथा अग्नि को घी, काले तिल, जौ, लोबान, आक के पुष्प, कमल के सूखे हुये बीज, पीली सरसों, सुगन्धबाला, तुलसी के बीज, राई और काली हल्दी के मिश्रण की आहुतियां दें। काल भैरवाष्टक स्तोत्र का पाठ करने के से पहले ग्यारह बार ही उनके निम्न काल भैरवाष्टक स्तोत्र का पाठ कर लें:-

काल भैरवाष्टकम्

देवराज सेव्यमान पावनाँघ्रि पंकजम्, व्याल यक्ष सूत्रमिन्दुशेखरं कृपा करम्।
नारदादि योगि वृन्द वन्दितं दिगम्बरं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

भानुकोटि भास्करं भवाब्धितारकं परं, नीलकण्ठमीप्सितार्थ दायकं त्रिलोचनम्।
काल कालमम्बु जाक्ष मक्ष शूल मक्षरं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

शूलटङ्कपाशदण्ड पाणिमादिकारणं, श्याम कायमादिदेवमक्ष रंनिरामयम्।
भीम विक्रमं प्रभुं विचित्र ताण्डवप्रियं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

भुक्तिमुक्ति दायकं प्रशस्त चारूविग्रहं, भक्तवत्सलस्थितं समस्तलोक विनिग्रहम्।
विनिक्वणः मनोज्ञहेमकिंकिणीलसत्कटिं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

धर्मसेतु पालकंत्व धर्ममार्ग नाशकं, कर्मपाश मोचकं सुशर्मदायकं विभुम्।
स्वर्णवर्ण शेष पाशशेभिताड़ मण्डलं, काशिकापुराधिनाथं काल भैरवं भजे॥

रत्न पादुका प्रभाभिराम पादयुग्मकं, नित्य मद्वितीयमिष्ट दैवतं निरन्जनम्।
मृत्युदर्प नाशनंकराल दंष्ट मोक्षणं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

अट्टाहास भिन्न पद्मजाडकोशसन्तति, दृष्टिपात नष्ट पाप जाल युग्र शासनम्।
अष्ट सिद्धि दायकं कपाल मालिकन्धरं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

भूतसंघनायकं विशाल कीर्तिदायकं, काशिवासलोकं पुण्य पाप शोधकं विभुम्।
नीतिमार्ग कोविदं पुरातनं जगत्पतिं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे॥

काल भैरवाष्टकं पठन्ति ये मनोहरं, ज्ञानमुक्ति साधनं विचित्र पुण्य वर्धनम्।
शोकमोह दैन्य लोभ कोपताप नाशनम्, तेप्रयान्ति काल भैरवांघ्रि सन्निधिंध्रुवम्॥

यह काल भैरवाष्टक स्तोत्र है। इस स्तोत्र पाठ के दौरान एक विशेष बात का भी ध्यान रखें कि इसके ठीक से उच्चारण न करने पर अशुद्धि दोष उत्पन्न हो जाता है। ऐसी अशुद्धि दोष से पाठ के फल में न्यूनता उत्पन्न होती है। कई बार गम्भीर अशुद्ध उच्चारण के फलस्वरूप विपरीत प्रभाव भी उत्पन्न होने लग जाते हैं। अतः अनुष्ठान में स्तोत्र का समावेश करने से पहले किसी विद्वान आचार्य से इसके शुद्ध उच्चारण को सीख लिया जाये

तो अति उत्तम रहता है। गुरु-शिष्य परम्परा में भी किसी अनुष्ठान में बैठने से पहले, अनुष्ठान की सम्पूर्ण प्रक्रिया को ठीक से समझना तो होता ही था, इस प्रकार के स्तोत्र, कवच आदि को भी गुरु के सानिध्य में कंठस्थ करना होता था।

इस स्तोत्र के साथ आप एक प्रयोग भी कर सकते हैं। गुरु अथवा किसी आचार्य से स्तोत्र का ठीक से उच्चारण सीखने के साथ, आप उनकी आवाज में स्तोत्र को टैप रिकार्डर में रिकार्ड भी कर सकते हैं और अनुष्ठान के दौरान स्तोत्र का स्वयं उच्चारण करने के साथ उसका ध्यानमग्न अवस्था में श्रवण भी कर सकते हैं। इस माध्यम से स्तोत्र पाठ में त्रुटि होने की संभावना नहीं रहती।

जब ग्यारह बार अथवा आपकी सुविधानुसार संख्या में स्तोत्र का पाठ सम्पन्न हो जाये तो एक बार पुनः ग्यारह बार मूल मंत्र का उच्चारण करते हुये अग्नि को ग्यारह बार ही समिधा की आहुतियां दें। तत्पश्चात् एक बार पुनः काल भैरव के सामने प्रार्थना करते हुये अपनी समस्याओं को दूर करने का निवेदन करें और फिर उनकी आज्ञा प्राप्त करके अपना आसन छोड़ दें।

भैरव को अर्पित किये गये नैवेद्य (खीर) को किसी काले कुत्ते को खिला दें अथवा पीपल के पेड़ के नीचे चढ़ा दें। अगर इस काल भैरव अनुष्ठान को भैरव की प्रसन्नता पाने के लिये किया जाता है, तो थोड़ा सा प्रसाद स्वयं भी ग्रहण करना होता है। भैरव का वाहन कुत्ता ही है, अतः कुत्ते को भोजन आदि कराने से भी भैरव की कृपा प्राप्त होती है। अगर खीर का थोड़ा सा अंश किसी कुयें में भी डलवा दिया जाये एवं कुयें की मुण्डेर पर रात्रि को तेल का एक दीया जलाकर रख दिया जाये, तो अतिशीघ्र भैरव कृपा की प्राप्ति होती है।

अनुष्ठान अवधि के दौरान भूमि पर शयन करना, मांस, मछली, अण्डा, मदिरा के सेवन से दूर रहना तथा विषय-विकार का त्याग कर देना, अनुष्ठान के अंग माने जाते हैं। इस प्रकार के काल भैरव अनुष्ठान का शीघ्र ही प्रभाव दिखाई देने लगता है। दैनिक जीवन में उत्पन्न होने वाली समस्याओं से मुक्ति मिलने लगती है। जीवन में निरन्तर उठ खड़े होने वाले अवरोध भी समाप्त होने लगते हैं।

काल भैरव का यह स्तोत्र बहुत ही चमत्कारिक प्रभाव रखता है। अगर तांत्रिक अनुष्ठान की पूरी प्रक्रिया किसी कारणवश संभव न हो पाये, तो भी भैरव मंदिर में जाकर अथवा स्वयं अपने घर पर ही भैरव प्रतिमा के सामने धूप, दीप आदि जलाकर इस काल भैरवाष्टक स्तोत्र का 11 या 5 या 3 बार नियमित रूप से पाठ किया जाये तो भी भैरव कृपा की प्राप्त होने लग जाती है। अनेक दुःखों का शमन पाठ करने मात्र से ही हो जाता है।

इस प्रकार 31वें दिन यह तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है। इस दिन तक कालसर्प दोष सम्बन्धी अनेक प्रकार की पीड़ाएं शान्त हो जाती हैं। फिर भी अनुष्ठान के अन्तिम दिन ग्यारह या पांच ब्राह्मणों को भोजन कराना अथवा इतनी ही संख्या में लांगुरों को भोजन कराकर एवं दान-दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिये। इस दिन काले कुत्ते को खीर खिलाना अथवा दूध पिलाना आवश्यक होता है। अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् पूजा में प्रयुक्त की गई समस्त सामग्रियों, मिट्टी की भैरव प्रतिमा के साथ किसी कुयें अथवा तालाब में छोड़ देना चाहिये। इस तरह इस अनुष्ठान की समाप्ति के साथ ही कालसर्प दोष का शमन हो जाता है।

इन तांत्रिक अनुष्ठानों के सम्बन्ध में एक विशेष बात का सदैव ध्यान रखना चाहिये कि यह अनुष्ठान भौतिक पीड़ाओं से मुक्ति पाने के साधन तो बनते ही है, अगर इन्हें कुछ विशेष रूप से सम्पन्न किया जाये तो यह उसी इष्ट की साधना के माध्यम भी बन जाते हैं। फिर ऐसी साधनाओं के दौरान साधकों को अनेक प्रकार के दिव्य अनुभव भी मिलने लग जाते हैं, यहां तक कि साधना में पूर्ण सिद्धि प्राप्त होने के साथ इष्ट का साक्षात्कार भी प्राप्त हो जाता है। तंत्रशास्त्र में इस तरह की स्थिति को सिद्धि प्राप्त करना कहा जाता है।

स्वर्णाकर्षण भैरव साधना

तंत्रशास्त्र में भैरव साधना और उनसे सम्बन्धित विविध तांत्रिक अनुष्ठानों की बहुत प्रशंसा की गई है। कलियुग में भैरव को प्रत्यक्ष देव की मान्यता प्रदान की गई है। इसके पीछे एक ही प्रमुख कारण है कि यह शीघ्र ही अपनी साधारण, सहज पूजा-अर्चना, आराधना से प्रसन्न हो जाते हैं और शीघ्र ही अपने भक्तों को विविध प्रकार की आपदाओं एवं समस्याओं से बचा लेते हैं। भैरव हैं तो रुद्र के अवतार, किन्तु उनकी उपासना के अनेक स्वरूप हैं। इसलिये तांत्रिक, अघोरी ही भैरव देव को नहीं पूजते, बल्कि शैव एवं शाक्त साधकों के साथ-साथ साधारण गृहस्थ भी पूजते हैं।

भैरव जी को भी आदिदेव गणेश की भांति ही प्रत्यक्ष देव माना गया है। इसलिये गणेशजी के साथ भैरव ही एकमात्र ऐसे देव है, जिनकी पूजा-अर्चना, उपासना एवं प्रतिष्ठा सर्वप्रथम एवं सर्वत्र की जाती है। जैसे सभी मांगलिक कार्यों से पूर्व गणेश की प्रतिष्ठा की जाती है, ठीक वैसे ही प्रत्येक शुभ एवं नये कार्य की शुरूआत से पहले भैरव की स्थापना करने एवं उनकी पूजा किये जाने का विधान है।

गांव-देहात में तो प्राचीन समय से ही भैरव देव की प्रस्तर मूर्तियां एवं मिट्टी की मूर्तियां ग्राम देवी एवं कुल देवियों के साथ प्रतिष्ठित की जाती थी। प्रत्येक गांव के पूर्व दिशा में देवी की जो सात पीण्डियां स्थापित की जाती हैं, उनके पार्श्व भाग में एक पिण्डी भैरव के रूप में प्रतिष्ठित की जाती है।

यह भी एक ज्ञातव्य तथ्य है कि प्राचीन समय से ही भैरव की स्थापना एवं उनकी पूजा-अर्चना का विशेष महत्व बना रहा है। चाहे कोई भी पूजा-पाठ, यज्ञ-हवन का कार्य हो अथवा घर-गांव में कोई शुभ, मांगलिक कार्य हो, उनमें सर्वप्रथम भैरव की ही स्थापना की जाती है। तत्पश्चात् उनका आशीर्वाद लेकर ही आगे का कार्य किया जाता है। घर की नींव रखने अथवा गृह प्रवेश से पहले भी घर में भैरव की स्थापना शुभ मानी जाती है।

भैरव के विभिन्न रूप :

तांत्रिकों में भैरव की उपासना भगवान शिव के प्रमुख गण के रूप में की जाती है। तंत्रशास्त्र में भैरव को रुद्र का द्वादश अवतार माना गया है। रुद्र का ग्यारहवां अवतार महावीर हनुमान को माना गया है। भैरव हनुमान की तरह सर्वशक्तिमान हैं। तांत्रोक्त उपासना में भैरव के 52 रूपों की उपासना का विधान रहा है। भैरव के इन 52 स्वरूपों के अलग-अलग महत्व, अनुष्ठान की अलग-अलग प्रक्रियायें प्रचलित रही हैं। भैरव के यह सभी स्वरूप अपनी पूजा-अर्चना से प्रसन्न होकर अलग-अलग प्रकार के फल प्रदान करते हैं।

52 भैरवों में से अष्ट भैरवों की साधना, उपासना का उल्लेख तो प्रायः सर्वत्र होता रहा है। इन अष्ट भरवों में से काल भैरव, उग्र भैरव, बटुक भैरव, वीर भैरव, स्वर्णाकर्षण भैरव की साधना आज के समय में श्रेष्ठ मानी गयी है। भैरव के यह स्वरूप अलग-अलग प्रकार के फल प्रदान करने वाले हैं। इनमें स्वर्णाकर्षण भैरव की साधना दरिद्रतानाश और अप्रत्याशित रूप में धन की प्राप्ति के लिये की जाती है।

भैरव के अनेक स्वरूपों की प्रतिष्ठा अलग-अलग स्थानों पर की जाती है। भैरव जी के प्रताप से वह सभी स्थान अत्यन्त पूजनीय एवं प्रसिद्ध भी होते रहे हैं। यह स्थान भैरव की नियमित पूजा-अर्चना से इतनी चेतना शक्ति सम्पन्न बन गये हैं कि भैरव के लाखों भक्तों ने उन स्थानों के दर्शन मात्र से मनोवांछित फलों की प्राप्ति की है। उनकी मनोकामनाओं को भैरव ने अतिशीघ्र पूरा किया है। इन देव स्थानों पर पूर्ण भक्ति युक्त एवं आस्था के साथ की गई प्रार्थनाएं कभी निष्फल नहीं जाती। ऐसे सैकड़ों लौगों का अनुभव रहा है। मैंने स्वयं बहुत सारे भैरव स्थानों के दर्शन किये हैं, इनमें मुझे उज्जैन के महाकाल भैरव, हरिद्वार के उग्र भैरव, वाराणसी के काल भैरव (इन्हें कोतवाल की संज्ञा दी गई है), ज्वालामुखी के रुद्र भैरव, दिल्ली के विनय मार्ग (नेहरू पार्क) स्थित बटुक भैरव, बालाजी के कोतवाल भैरव, बद्रीनाथ के स्वर्णाकर्षण भैरव, कामाक्षा के महाकाल भैरव, गोरखपुर के बटुक भैरव आदि तो बहुत ही अद्‌भुत हैं। इन स्थानों की चेतना शक्ति को तत्काल अनुभव किया जा सकता है। इन स्थानों पर भैरव की पूजा-अर्चना करने मात्र से ही अनेक प्रकार की समस्याओं से शीघ्र ही मुक्ति मिल जाती है।

स्वर्णाकर्षण भैरव साधना :

तंत्रशास्त्र का सबसे प्रसिद्ध और प्रमाणिक ग्रंथ है- **रुद्रयामल तंत्र**। इस ग्रंथ में धन प्राप्ति और लक्ष्मी की प्रसन्नता के लिये अनेक विधानों एवं तांत्रिक अनुष्ठानों का उल्लेख किया गया है। इनमें एक तंत्र विधान **स्वर्णाकर्षण भैरव साधना** से सम्बन्धित है।

रुद्रयामल तंत्र नामक यह ग्रंथ तांत्रिकों के परम आराध्य माने गये दत्तात्रेय और भगवान शिव के परम् सेवक नन्दिकेश्वर के मध्य तंत्र के विषय को लेकर हुये संवाद के फलस्वरूप अस्तित्व में आया था। ऐसा उल्लेख है कि एक समय दत्तात्रेय महाराज ने अपनी गहन साधना के माध्यम से नन्दिकेश्वर को प्रसन्न कर लिया था। दत्तात्रेय जी की प्रार्थना को स्वीकार करके नन्दिकेश्वर महाराज ने तंत्र सम्बन्धी सम्पूर्ण ज्ञान उन्हें समझा दिया था। बाद में दत्तात्रेय जी महाराज ने उस विस्तृत तंत्र ज्ञान में से लोकहितार्थ एवं लक्ष्मी प्राप्ति से सम्बन्धित सहज, सरल तांत्रिक क्रियाओं को चुनकर सर्वत्र प्रसारित कर दिया। स्वर्णाकर्षण भैरव साधना से सम्बन्धित यह जो विधान है, वह भी नन्दिकेश्वर महाराज द्वारा ही दत्तात्रेय जी को प्रदान किया गया था।

सबसे पहले दत्तात्रेय जी ने ही स्वर्णाकर्षण भैरव साधना को सम्पन्न किया था। दत्तात्रेय जी महाराज अपने समय के श्रेष्ठ आचार्य थे। वह एक कौड़ी भी किसी से दान में नहीं लेते थे, फिर भी उनका गुरुकुल सबसे अधिक साधन सम्पन्न एवं भव्य माना जाता है। उनके गुरुकुल में रह कर सहस्त्रों छात्र विविध विधाओं का अध्ययन, अध्यापन करते थे। कहते हैं कि दत्तात्रेय जी महाराज ने अपनी गायों के खुरों में सोने की नालें और सींगों पर स्वर्ण पत्र चढ़वा रखे थे। उनके लिये ऐसा सब करना भैरव की कृपा से ही संभव हो पाया था।

स्वर्णाकर्षण भैरव साधना के दो विधान हैं। एक विधान तांत्रोक्त प्रक्रिया के माध्यम से स्वर्णाकर्षण भैरव को प्रसन्न करने पर आधारित है। इस तांत्रोक्त प्रक्रिया के लिये **अघोर पद्धति** से साधना करने की प्रक्रिया अपनाई जाती है, लेकिन यह अघोर प्रक्रिया गृहस्थियों के लिये कुछ कठिन लगती है। इसलिये इस पद्धति का उल्लेख नहीं किया जा रहा है। तांत्रोक्त प्रक्रिया का दूसरा रूप तंत्र-अनुष्ठान पर आधारित है। इसके अन्तर्गत भैरव से सम्बन्धित स्तोत्र, मंत्र, रक्षा कवच आदि के विविध प्रकार से अनुष्ठान सम्पन्न किये जाते हैं। गृहस्थ लोगों के लिये यही प्रक्रियायें अधिक उपयुक्त रहती हैं। स्वर्णाकर्षण भैरव साधना से सम्बन्धित अन्य प्रक्रियायें कापालिक और वामामार्गी साधकों के लिये हैं। यह साधनाएं भैरव को सिद्ध करने के लिये की जाती हैं।

अनुभव में आया है कि स्वर्णाकर्षण भैरव के तंत्र अनुष्ठानों को सम्पन्न करते ही साधकों की कई तरह की परेशानियां, विशेषकर धन सम्बन्धी समस्यायें स्वत: ही दूर होने लगती हैं। ऐसे साधकों को पूर्ण मान-सम्मान की प्राप्ति होती है। समाज में उनका यश बढ़ता है तथा वह विभिन्न तरह की आपदाओं से निरन्तर बचे रहते हैं।

रुद्रयामल तंत्र ग्रंथ में स्वर्णाकर्षण भैरव स्तोत्र आया है, उस स्तोत्र की रचना तीन भागों में की गयी है। यह तीनों भाग अलग-अलग विशेषताओं को प्रकट करते हैं। स्तोत्र के प्रथम भाग में इसकी प्राप्ति एवं इसके महत्व पर प्रकाश डाला गया है। इसके दूसरे भाग में स्वर्णाकर्षण भैरव के साधना उपक्रम का वर्णन है। तीसरे भाग में इसके माध्यम से प्राप्त होने वाले फल आदि की जानकारी प्रदान की गई है।

स्वर्णाकर्षण भैरव की साधना बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध होती है। देखने में ऐसा आया है कि स्वर्णाकर्षण भैरव जैसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करते ही साधकों की धन सम्बन्धी सभी प्रकार की समस्यायें अपने आप समाप्त होने लगती हैं और धन आने के स्त्रोत बनने लगते हैं। उन्हें अपने जीवन में धन सम्बन्धी किसी प्रकार के अभाव का सामना नहीं करना पड़ता। ऐसे साधकों को डूबा हुआ या अकारण फंसा हुआ पैसा सहसा वापिस मिल जाता है या फिर उनके हाथ में पैत्रिक सम्पत्ति अथवा जायदाद का बड़ा हिस्सा भाग्यवश आ जाता है। अनेक बार ऐसा धन साधकों को प्राप्त हो जाता है, जिनके विषय में

उन्हें कोई जानकारी नहीं रहती अथवा जिस धन के विषय में वह एकदम भूल चुके होते हैं। आकस्मिक रूप में धन प्राप्ति की इच्छा रखने वाले लोगों के लिये स्वर्णाकर्षण भैरव साधना अत्यधिक फलदायी सिद्ध होती है।

स्वर्णाकर्षण भैरव साधना से सम्बन्धित यह उदाहरण कुछ अलग तरह का है। धनाभाव की स्थिति से उबरने के लिये भी यह साधना की जाती है। ऐसी विकट स्थितियों में भी अनेक साधकों को विस्मयकारी परिणाम मिलते हैं। एक साधक को अपने बेटे को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से आस्ट्रेलिया भेजना था। इस कार्य के लिये उन्हें तत्काल दस लाख रुपयों की आवश्यकता थी, किन्तु उनके पास इतनी बड़ी राशि की कोई व्यवस्था नहीं थी। बेटे को विदेश भेजने के लिये वह अपनी जमीन के एक टुकड़े को बेचने का प्रयास काफी समय से कर रहे थे, पर उसके लिये कोई ग्राहक तैयार नहीं हो रहा था।

इनके साथ समस्या यह थी कि जिस मूल्य पर वे अपनी जमीन बेचना चाहते थे, उस मूल्य पर खरीदने वाला नहीं मिल रहा था। जो पैसे उन्हें जमीन बेच कर मिल रहे थे, उतने से उनका काम नहीं चल रहा था। बेटे को आस्ट्रेलिया भेजना भी आवश्यक था।

जैसे-जैसे उनके बेटे के वीजा की तारीख निकट आती जा रही थी, वैसे-वैसे उनकी बेचैनी बढ़ती जा रही है। यह उनके बेटे के भविष्य की बात थी, लेकिन उन्हें कोई हल नजर नहीं आ रहा था। इस सज्जत की परेशानी को भी आखिर में भैरव ने हल कर दिया। उन्होंने अंतिम उपाय के रूप में, पूर्ण निराशा के भाव के साथ अगले रविवार से ही भैरव के मंदिर जाकर पूजा-अर्चना करनी प्रारम्भ कर दी तथा साथ ही स्वर्णाकर्षण भैरव तांत्रिक अनुष्ठान भी शुरू कर दिया। आश्चर्यजनक रूप से उनकी परेशानी का शीघ्र ही समाधान हो गया।

भैरव मंदिर जाने के कुछ दिनों के बाद ही जमीन को देखने और मौल-भाव करने वालों की संख्या में एकाएक वृद्धि हो गई। कुछ समय के पश्चात् ही इन सज्जन को इस जमीन के लिये आशा से भी कहीं अधिक पैसा मिल गया। इसके बाद उन्होंने खुशी-खुशी बेटे को आस्ट्रेलिया भेज दिया। वे इन सबके लिये भैरव का आशीर्वाद मानते थे, इसलिये भैरव मंदिर जाने का क्रम निरन्तर बनाये रखा।

स्वर्णाकर्षण भैरव अनुष्ठान की प्रक्रिया :

स्वर्णाकर्षण भैरव सम्बन्धी इस तांत्रोक्त अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये रजत पत्र अथवा तामपत्र पर विधिवत् उत्कीर्ण किये गये स्वर्णाकर्षण यंत्र की आवश्यकता पड़ती है। यंत्र के अभाव में कुयें या तालाब के अन्दर से प्राप्त की गयी मिट्टी से निर्मित भैरव की प्रतिमा भी अनुष्ठान के निमित्त काम में आ सकती है। इसके अतिरिक्त इस अनुष्ठान के लिये 11 गोमती चक्र, सिन्दूर, गाय का घी, पुष्प, दीपक, काली हरिद्रा, काले तिल,

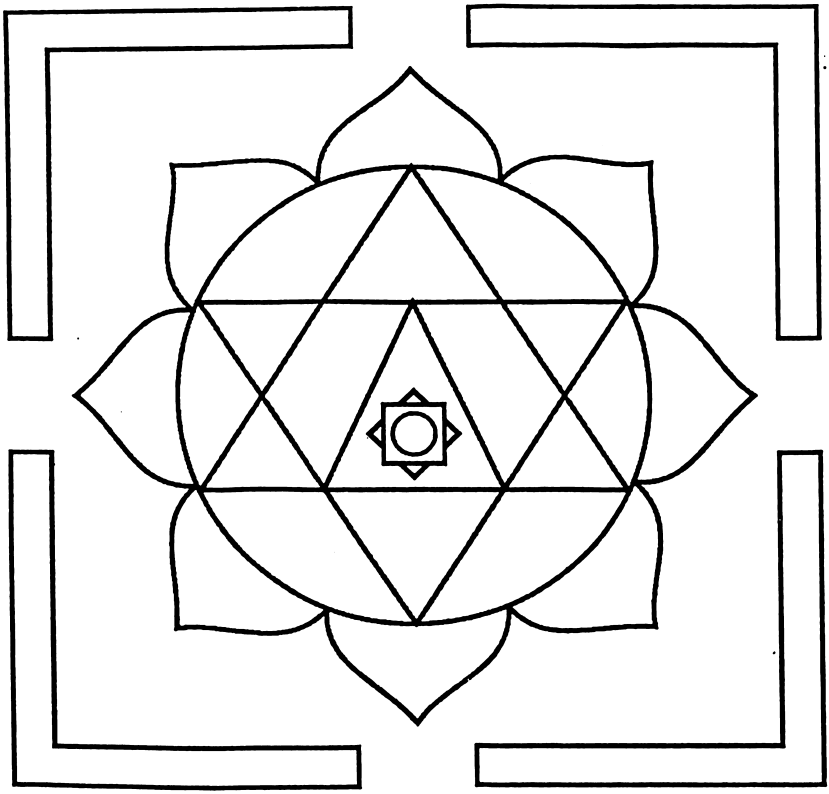

स्वर्णाकर्षण भैरव यंत्र

काली मिर्च, शुद्ध लोबान, भूतकेशी की जड़, समुद्रफेन, रक्तचन्दन, श्वेत चन्दन बुरादा, जौ, आक पुष्प और नैवेद्य के रूप में कई चीजों की आवश्यकता पड़ती है। स्वर्णाकर्षण भैरव साधना में नैवेद्य प्रत्येक दिन बदला जाता है। जैसे रविवार के दिन भैरव को दूध से बनी खीर अर्पित की जाती है, सोमवार के दिन लड्डूओं का प्रसाद लगाया जाता है। मंगलवार के दिन गुड़ और घी से बनी हुई लप्सी प्रदान की जाती है। बुधवार के दिन शक्कर युक्त दही की लस्सी चढ़ाई जाती है। बृहस्पति के दिन भैरव को बेसन के लड्डूओं का भोग लगाया जाता है। शुक्रवार और शनिवार के दिन उन्हें क्रमशः भुने हुये चने एवं उड़द की दाल से बनाये गये पकोड़े अथवा पुये प्रसाद के रूप में चढ़ाये जाते हैं। इस प्रकार के नैवेद्य से भैरव शीघ्र प्रसन्न होते हैं।

भैरव साधना में सिन्दूर का विशेष महत्व रहता है। इसी तरह अन्य लक्ष्मी सम्बन्धी साधनाओं की भांति स्वर्णाकर्षण भैरव साधना के लिये गोमती चक्रों का भी विशेष महत्व माना गया है। गोमती चक्र समुद्र से प्राप्त एक विशिष्ट तांत्रोक्त वस्तु है। तंत्र ग्रंथों में इसके अनेक चमत्कारिक प्रयोग बताये गये हैं। अगर दोष रहित असली ग्यारह गोमती चक्र प्राप्त

करके उन्हें दीपावली की रात्रि के समय लक्ष्मी पूजा में सम्मिलित कर लिया जाये और अगले दिन यम द्वितीया को यह दोपहर के समय सिन्दूर से पोत कर लाल रंग के रेशमी वस्त्र में बाधंकर अपने व्यवसाय स्थल के मुख्य द्वार की चौखट अथवा मुख्य द्वार के आसपास स्थापित कर दिया जाये और उस स्थान पर अन्य लोगों की नजर न पड़े तो यह गोमती चक्र अपार धन प्रदाता यंत्र का कार्य करने लगते हैं। ऐसे व्यावसायियों को व्यापार में अपार सफलतायें प्राप्त होने लगती हैं। इसी प्रकार गोमती चक्र गृह क्लेश एवं शत्रु पीड़ा से मुक्ति दिलाने में भी सहायक होते हैं।

देखने में ऐसा आया है कि दीपावली, दशहरा, होली आदि किसी शुभ दिन पर दो गोमती चक्र लेकर उन्हें एक डिब्बी में सूर्ख सिन्दूर के साथ लाल रंग की मौली में बांध कर रख दिया जाये और फिर उस डिब्बी को घर के भीतर ही, घर के अन्य सदस्यों को बिना बताये किसी गुप्त स्थान पर छिपा कर रख दें, तो उससे गृह क्लेश की समस्या दूर हो जाती है और घर में पूर्ण शांति एवं प्रेम का वातावरण निर्मित हो जाता है। पति-पत्नी के मध्य उत्पन्न हुये मतभेद को दूर करने में भी गोमती चक्र प्रभावशाली भूमिका निभाते हैं। अगर दीपावली की मध्य रात्रि अथवा होली की रात्रि में बारह गोमती चक्रों को शत्रु का नाम लेकर एवं उन पर लाल सिन्दूर लगाकर व लाल वस्त्र में बांधकर घर से बाहर किसी एकान्त जगह पर गहरा गड्ढा खोद कर दबा दिया जाये, तो तुरन्त ही शत्रु बाधायें दूर होने लगती हैं।

गोमती चक्र के अन्य बहुत से प्रयोग भी हैं, लेकिन इनकी सर्वाधिक उपयोगिता आर्थिक विषमताओं को दूर करने एवं लक्ष्मी की प्रसन्नता के संदर्भ में देखी जाती है। इसलिये लक्ष्मी सम्बन्धी अनेक प्रयोगों में गोमती चक्रों का उपयोग किया जाता है। स्वर्णाकर्षण भैरव संबंधी यह प्रयोग भी आर्थिक समस्याओं से मुक्ति पाने के निमित्त ही किया जाता है। अतः इस अनुष्ठान में भी गोमती चक्र विशेष भूमिका निभाते हैं।

स्वर्णाकर्षण भैरव संबंधी यह अनुष्ठान 31 दिन तक जारी रहता है। इस अनुष्ठान की शुरूआत किसी भी रविवार के दिन से अथवा मंगलवार के दिन से की जा सकती है। वैसे भी भैरव को रविवार का दिन अधिक प्रिय है। इसलिये बटुक भैरव, काल भैरव, उग्र भैरव आदि से संबंधित साधनायें प्रायः रविवार के दिन ही सम्पन्न की जाती हैं, लेकिन स्वर्णाकर्षण भैरव की साधना, पूजा-अर्चना के लिये मंगलवार का दिन ही उपयुक्त रहता है। मंगलवार को भैरव मंदिर जाना भी लाभप्रद रहता है।

अगर इस अनुष्ठान की शुरूआत दीपावली की रात्रि अथवा धन तेरस की रात्रि से की जाये, तो यह अनुष्ठान और भी चमत्कारिक प्रभाव दिखाता है। ऐसे शुभ अवसर के लिये कई बार महीनों का इंतजार करना पड़ सकता है। अतः ऐसी स्थिति में इस भैरव अनुष्ठान को किसी भी कृष्ण पक्ष के रविवार अथवा मंगलवार के दिन से शुरू कर लेना

उपयुक्त रहता है।

भैरव साधना के लिये संध्याकाल का समय अर्थात् सायं 6 से 9 बजे का समय अति उत्तम रहता है। इसी सायंकाल के समय भैरव जी की पूजा-अर्चना की जाती है। यद्यपि प्रातःकाल 4 से 7 बजे के मध्य भी भैरव की पूजा-अर्चना एवं इस अनुष्ठान को सम्पन्न किया जा सकता है। भैरव को रक्षा का देव माना गया है। रक्षा देव का समय संध्या के समय ही रहता है। इसलिये भी यह समय भैरव साधना के लिये सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। अतः भैरव अनुष्ठान के लिये रविवार का दिन और संध्याकाल का समय श्रेष्ठ मानना चाहिये।

अगर इस स्वर्णाकर्षण भैरव अनुष्ठान को किसी प्राचीन भैरव मंदिर के प्रांगण में बैठ कर सम्पन्न किया जाये तो इसका प्रभाव और भी चमत्कारिक रूप में सामने आता है, क्योंकि ऐसी अवस्था में मंदिर का ऊर्जायुक्त वातावरण साधक के ऊपर अपना अनुकूल प्रभाव डालता है। उसके फलस्वरूप साधक पूर्ण तन्यमयता एवं गहन आस्था के साथ अनुष्ठान के कार्य में संलग्न रहता है। इष्टदेव के प्रति पूर्ण समर्पित भाव अनुष्ठान अथवा किसी भी साधना की सफलता का मापदण्ड निर्धारित करता है। ऐसे ऊर्जा सम्पन्न वातावरण में रहने भर से साधक की चेतन अवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है और उसके मन में विशेष भाव निर्मित होने लगते हैं।

किसी स्थान विशेष पर किसी देवी अथवा देवता की विधिवत स्थापना करके नियमित रूप से उनकी नियमित रूप से पूजा-अर्चना की जाती है, तो वह देव सदैव प्रसन्न तो रहते ही हैं, उस स्थान विशेष को भी अपनी उपस्थिति से शक्ति सम्पन्न बनाये रखते हैं। भैरव को तो वैसे भी कलियुग का सबसे प्रमुख देव माना गया है और वह पूजा-आदि से तत्काल प्रसन्न भी हो जाते हैं। इसलिये भैरव देव की स्थापना सभी जगह, प्रत्येक देवी मंदिर में, कुओं के ऊपर, शमशानों में निर्मित किये गये शिव मंदिरों में की जाती है। बहुत से गांवों में ग्राम की रक्षा के निमित्त भी ग्राम देवता के रूप में भैरव की स्थापना गांव की सीमा रेखा पर करने की प्राचीन प्रथा रही है। अतः इस अनुष्ठान को किसी प्राचीन भैरव मंदिर में बैठकर सम्पन्न करना अति उत्तम रहता है। यद्यपि ऐसी अवस्था न बन पाने पर इस अनुष्ठान को किसी बड़े वृक्ष के नीचे अथवा घर पर भी किसी एकान्त कक्ष में सम्पन्न किया जा सकता है।

यह भैरव अनुष्ठान कुल 31 दिन का है। अतः अनुष्ठान के दौरान एक नियम बना लेना चाहिये कि पूर्ण साधनाकाल में कोई दूसरा व्यक्ति साधना कक्ष में प्रवेश न करे, खासकर स्त्रियों का प्रवेश तो अनुष्ठान की अवधि तक नहीं होना चाहिये। इसके अलावा पूर्ण साधनाकाल में साधक के आसन पर किसी दूसरे को नहीं बैठना चाहिये। पूरे अनुष्ठान काल के दौरान स्वयं साधक को ही अपने कक्ष को साफ करना चाहिये। आसन आदि को

उठाने अथवा बिछाने का कार्य साधक को ही करना चाहिये तथा पूजास्थल की पवित्रता को बनाये रखना चाहिये।

जिस दिन से इस अनुष्ठान को शुरू करने का निश्चय किया जाये उससे एक दिन पहले साधना कक्ष को धो-पौंछ कर तैयार कर लें। अनुष्ठान की समस्त सामग्रियों को एकत्रित करके अपने पास रख लें, ताकि अनुष्ठान के दौरान किसी तरह की परेशानी का सामना न करना पड़े।

इस अनुष्ठान के लिये सबसे पहले संध्या से थोड़ा पहले स्नान आदि से निवृत्त हो जायें। शरीर पर केवल एक श्वेत अथवा केसरी रंग की धोती पहन कर साधना कक्ष में अपने आसन पर बैठ जायें। इस अनुष्ठान के लिये कम्बल अथवा ऊन का आसन प्रयुक्त किया जाता है। अनुष्ठान के दौरान पूर्व अथवा दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके बैठना चाहिये।

आसन पर शांत चित्त से बैठकर अपने सामने की जगह को गाय के गोबर से लीप कर पवित्र कर लें, फिर उसके ऊपर लकड़ी की एक चौकी रख दें। चौकी पर गहरे लाल रंग का रेशमी वस्त्र बिछाकर उसके ऊपर कोई ताम्र पात्र अथवा चांदी के पात्र में स्वर्णाकर्षण यंत्र को गंगाजल से स्वच्छ करके रख दें। अगर आप इस अनुष्ठान को स्वर्णाकर्षण भैरव यंत्र के बिना सम्पन्न करना चाहते हैं, तो सबसे पहले किसी कुयें की मिट्टी लाकर उसे भैरव प्रतिमा का रूप प्रदान कर दें। भैरव प्रतिमा को घी मिश्रित सिन्दूर से लेप कर लें। भैरव जी को भी हनुमान जी की भांति सिन्दूर अत्यन्त प्रिय है। इसलिये अगर भैरव संबंधी कोई तांत्रिक अनुष्ठान सम्पन्न कर पाना अथवा करा पाना संभव न हो पाये तो भी वह भैरव जी को चोला चढ़ाकर अपनी इच्छाओं की पूरा किया जा सकता है तथा परेशानियों से मुक्ति पा सकता हैं।

चोला चढ़ाने का अर्थ है भैरव प्रतिमा पर घी मिश्रित सिन्दूर का लेप करना। फिर उन्हें घी का दीपक, गंध, नैवेद्य अर्पित करके, उनके सामने बैठकर उनके किसी मंत्र का जाप कर लेना अथवा उनके किसी स्तोत्र, रक्षा कवच या सहस्त्रनाम आदि का आवश्यकता के अनुसार पाठ कर लेना। इस प्रकार का चोला चढ़ाने के लिये रविवार का दिन सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। भैरव जी को चोला चढ़ाने के साथ वस्त्र भी चढ़ाया जा सकता है।

इस संक्षिप्त पूजा क्रम के रूप में अर्थात् भैरव मंदिर जाकर उन्हें चोला आदि समर्पित करके स्वर्णाकर्षण भैरव मंत्र अथवा स्तोत्र का सामर्थ्यानुसार संख्या में पाठ करने से चमत्कारिक परिणाम प्राप्त होते हैं। इस संक्षिप्त पूजा अर्चना से भी भैरव प्रसन्न होकर भक्तों के अनेक कष्टों का निवारण कर देते हैं। उनके तांत्रोक्त अनुष्ठान को सम्पन्न करने का तत्काल, निश्चित एवं विशेष फल प्राप्त होता है।

चौकी पर स्वर्णाकर्षण भैरव यंत्र अथवा भैरव प्रतिमा की विधिवत स्थापना करने के बाद भैरव का निम्न ध्यान के द्वारा आह्वान किया जाता है:-

ध्यान मंत्र

पीतवर्णं चतुर्बाहं त्रिनेत्रं पीत वासनम्।
अक्षय स्वर्ण माणिक्यं तड़ित्पूरित पात्रकम्॥

अभिलषितं महाशूलं तोमरं चामरद्वयम्।
सर्वाभरण सम्पन्नं मुक्ताहारोपशोभितम्॥

मदोन्मत्तं सुखासीनं भक्तानां च वरप्रदम्।
सततं चिन्तमद्वश्यं भैरवं सर्वसिद्धिदम्॥

पारिजात द्रुभ कान्तारं स्थिते मणि मण्डपे।
सिंहासनं गतं ध्याएद् भैरवं स्वर्णदायकम्॥

गांगेपात्रं डमरूं त्रिशूलं वरं करैः सन्दधितं त्रिनेत्रम्।
देव्या युतं तप्तसुवर्ण वर्ण स्वर्णाकृतिं भैरवमाश्रयामि॥

भैरव ध्यान के पश्चात् चौकी पर यंत्र को चहुं ओर नवपीठ शक्तियों का पूजन किया जाता है। नवपीठ शक्ति पूजन के लिये निम्न मंत्रों का उच्चारण करते हुये जल, अक्षत, कुमकुम, पुष्प आदि अर्पित करने चाहिये। नवपीठ शक्ति मंत्र निम्न प्रकार है-

ॐ वां वामायै नमः।
ॐ ज्यें ज्येष्ठायै नमः।
ॐ रौं रौद्रयै नमः।
ॐ कां काल्यै नमः।
ॐ कं कलविकरण्यै नमः।
ॐ बं बलविकरण्यै नमः।
ॐ बं बलप्रमथिन्यै नमः।
ॐ सं सर्वभूतदमन्यै नमः।
ॐ मं मनोन्मन्थै नमः।

इस पूजा के उपरान्त स्वर्णाकर्षण भैरव यंत्र पर घी का लेप करके उसे दुग्ध, जल आदि से स्नान कराकर सिन्दूर का तिलक अर्पित करना चाहिये तथा उसे सात बार पीत वर्ण की रौली से लपेट कर विधिवत् ताम्र या रजत यंत्र पर स्थापित कर देना चाहिये। अगर भैरव प्रतिमा का उपयोग अनुष्ठान के लिये किया जा रहा है, तो उसका भी इसी प्रकार पूजन करना चाहिये। इसके उपरांत निम्न मंत्र का तीन बार उच्चारण करते हुये भैरव

को क्रमशः पुष्प दान, धूप, दीप दान करना चाहिये। उन पर सिन्दूर लेपित ग्यारह गोमती चक्रों को चढ़ाना चाहिये।

मंत्र इस प्रकार है:-

ॐ नमो भगवते स्वर्णाकर्षण भैरवाय सकल गुणात्मशक्ति
युक्ताय अनन्ताय योग पीठात्मने नमः।

ॐ संविन्मयः परो देवः परामृतरस प्रियः
अनुज्ञां देहि भैरवः परिवारार्चनाय मे।

इसके पश्चात् भैरव यंत्र के सामने सरसों के तेल का दीपक जला कर रख दें। अक्षत, कालीमिर्च, काले तिल, गंध, पुष्प आदि का मिश्रण तैयार करके दाहिने हाथ की तर्जनी तथा अंगूठे के द्वारा यंत्र पर चढ़ाते हुये निम्न क्रम से अष्ट भैरवों की पूजा करें। अष्ट भैरवों के आह्वान मंत्र निम्न प्रकार हैं:-

ॐ ह्रीं आं असितांग भैरवाय नमः।
असितांग भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं ईं रूरू भैरवाय नमः।
रूरू भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं ॐ चण्ड भैरवाय नमः।
चण्ड भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं ऋं क्रोध भैरवाय नमः।
क्रोध भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं लृं उन्मत्त भैरवाय नमः।
उन्मत्त भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं ऐं कपाल भैरवाय नमः।
कपाल भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं औं भीषण भैरवाय नमः।
भीषण भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ह्रीं अः संहार भैरवाय नमः।
संहार भैरव श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

तत्पश्चात् निम्न मंत्र के माध्यम से स्वर्णाकर्षण भैरव को नमस्कार करें-

ॐ सत्वाय नमः। ॐ रजसे नमः। ॐ तमसे नमः।

इसके पश्चात् भैरव को दूध से बनी खीर का नैवेद्य अर्पित करके पूर्ण भक्तिभाव

युक्त होकर अपनी प्रार्थना को, अपनी पीड़ाओं को उनके सामने रख दें। भैरव से पूर्ण समर्पित भाव से प्रार्थना करें कि वह अनुष्ठान से शीघ्र प्रसन्न होकर अपनी कृपा दृष्टि प्रदान करें। आपकी आर्थिक स्थिति की समस्याओं को दूर करके आर्थिक समृद्धि प्रदान करें। तत्पश्चात् उनसे आज्ञा प्राप्त करके उनके निम्न मंत्र का जाप शुरू कर दें।

यूं तो इस अनुष्ठान के दौरान 31 दिनों में सवा लाख मंत्रों का जाप करने तथा 181 स्वर्णाकर्षण भैरव स्तोत्र का पाठ करने का विधान है, लेकिन साधक मंत्रजाप एवं स्तोत्र पाठ की संख्या को अपनी सामर्थ्य के अनुसार निर्धारित कर सकते हैं। इस तरह प्रतिदिन 21 या 11 मालाओं का मंत्रजाप एवं उसी अनुसार 21 या 11 बार स्तोत्र का पाठ कर लेना पर्याप्त रहता है। वैसे साधक अपनी इच्छानुसार केवल मंत्रजाप अथवा स्तोत्र पाठ करके भी इस अनुष्ठान को सम्पन्न कर सकते हैं। अनुष्ठान के दौरान इनकी संख्या का निर्धारण आर्थिक समस्या एवं साधक की स्थिति पर अधिक निर्भर करता है। स्वर्णाकर्षण भैरव मंत्र का जाप लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला अथवा काली हरिद्रा की माला के ऊपर करना अधिक प्रभावशाली सिद्ध होता है।

इस अनुष्ठान के दौरान **स्वर्णाकर्षण भैरव के निम्न मंत्र** का जाप करना होता है:-

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ॐ नमो भगवते स्वर्णाकर्षण भैरवाय हिरण्यं दापय दापय श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा।

यह भैरव जी का अद्‌भुत मंत्र है, जिसके अनुष्ठान को सम्पन्न करके साधक अपने समस्त शत्रुओं से निर्भय तो होता ही है, कुबेर के समान धन-धान्य और ऐश्वर्य से सम्पन्न भी हो जाता है।

जब आपका अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप सम्पन्न हो जाये, तो मिट्टी के बर्तन में गाय के कण्डे में अग्नि प्रज्ज्वलित कर लें तथा उसमें लोबान, भूतकेशी, काले तिल, काली हरिद्रा, आक पुष्प, समुद्रफेन, रक्तचंदन, श्वेत चंदन, घी आदि का मिश्रण तैयार करके ग्यारह बार भैरव मंत्र के साथ आहुतियां प्रदान करें तथा दत्तात्रेय प्रदत्त आगे वर्णित **स्वर्णाकर्षण भैरव स्तोत्र** का अभीष्ट संख्या में पाठ पूरा कर लें। प्रत्येक पाठ की समाप्ति के साथ अग्नि को आहुति प्रदान करते रहें। अभीष्ट संख्या में पाठ पूरा होने के पश्चात् पुनः ग्यारह मंत्रों के साथ ग्यारह आहुतियां देकर प्रथम दिन के कार्यक्रम को पूर्णता प्रदान कर दें।

स्वर्णाकर्षण भैरव स्तोत्र

भगवन् प्रमथाधीशं शिवतुल्य पराक्रम।
पूर्वमुक्तस्त्वया मंत्रो भैरवस्य महात्मनः॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामि तस्य स्तोत्रमनुत्तमम्।
तत्केनोक्तं पुरा स्तोत्रं पठनात् तस्य किं फलम्॥

तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि मे नन्दिकेश्वर।

नन्दिकेश्वर उवाचः-

अयं प्रश्नो महाभाग! लोकानामुप कारकः।
स्तोत्रं बटुकनाथस्य दुर्लभं भुवनत्रये॥

सर्वपाप प्रशमनं सर्वसम्पत प्रदायकम्।
दारिद्रयनाशनं पुसांमापदाय पहारकम्॥

अष्टैश्वर्यप्रदं नृणां पराजय विनाशनम्।
महाकीर्तिप्रदं पुंसामा सौन्दर्य-विनाशनम्॥

स्वर्णाद्यष्ट महसिद्धि प्रदायकमनुत्तमम्।
भुक्तियुक्तिप्रदं स्तोत्रं भैरवस्य महात्मनः॥

महाभैरव भक्तमाय सेविने निर्धनाय च।
निज भक्ताय वक्तव्यमन्यथा शापमाम्नुयात्॥

स्तोत्रमेतद् भैरवस्य ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मकम्।
श्रुणुष्व रूचितो ब्रह्मन्! सर्वकाम-प्रदायकम्॥

संकल्पः-

ॐ अस्य श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव-स्तोत्रमंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः स्वर्णाकर्षण भैरव परमात्मा देवता ह्रीं बीजं क्लीं शक्तिः सः कीलकं मम् सर्वकामसिद्धध्यर्थे पाठे विनियोगः।

पारिजात द्रुमान्तारे, स्थिते माणिक्य मण्डपे।
सिंहासनगतं वन्दे, भैरवं स्वर्णदायकम्॥

गांगेयपात्रं डमरूं त्रिशूलं, वरं करैः सन्दधतं त्रिनेत्रम्।
देव्यां युतं तप्तसुवर्णावर्ण, स्वर्णा कृषं भैरवमाश्रयामि॥

स्तोत्रः-

ॐ नमस्ते भैरवाय ब्रह्मविष्णु-शिवात्मने।
नमस्त्रैलोक्य वन्द्याय वरदाय वरात्मने॥

रत्नसिंहासनस्थाय दिव्याभरण शोभने।
दिव्य माल्य-विभूषाय नमस्ते दिव्यमूर्तये॥

नमस्ते अनेक हस्ताय अनेक शिरसे नमः।
नमस्ते अनेक नेत्राय अनेक विभवे नमः॥

नमस्ते अनेक कण्ठाय अनेकांसाय ते नमः।
नमस्ते अनेक पार्श्वाय नमते दिव्यतेजसे॥

अनेकायुध युक्ताय अनेक सुरसेविने।
अनेक गुणयुक्ताय महादेवाय ते नमः॥

नमो दारिद्रय कालाय महासम्पत्प्रदायिने।
श्री भैरवी-संयुक्ताय त्रिलोकेशाय ते नमः॥

दिगम्बर नमस्तुभ्यं दिव्याङ्गाय नमो नमः।
नमोऽस्तु दैत्यकालाय पापकालाय ते नमः॥

सर्वज्ञाय नमस्तुभ्यं नमस्ते दिव्य चक्षुषे।
अजिताय नमस्तुभ्यं जितामित्राय ते नमः॥

नमस्ते रुद्ररूपाय महावीराय ते नमः।
नमोअस्त्वनन्तवीर्याय महाघोराय ते नमः॥

नमस्ते घोरघोराय विश्वघोराय ते नमः।
नमः उग्राय शान्ताय भक्तानां शान्तिदायिने॥

गुरवे सर्व लोकानां नमः प्रणवरूपिणे।
नमस्ते वाग्भवाख्याय दीर्घकामाय ते नमः॥

नमस्ते कामराजाय योषित्कामाय ते नमः।
दीर्घमायास्वरूपाय महामायाय ते नमः॥

सृष्टि माया स्वरूपाय विसर्गसमभाय ते।
सुरलोक सुपूज्जाय आपदुद्धारणाय च॥

नमो नमो भैरवाय महादारिद्रयनाशिने।
उन्मूलने कर्मढाय अलक्ष्म्याः सर्वदा नमः॥

नमो अजामल बद्धाय नमो लोकेश्वराय ते।
स्वर्णाकर्षण शीलाय भैरवाय नमो नमः॥

मम् दारिद्रयविद्वेषणाय लक्ष्याय ते नमः।
नमो लोक त्रेयेशाय स्वानन्द निहिताय तं॥

नमः श्री बीजरूपाय सर्वकाम प्रदायिने।
नमो महाभैरवाय श्रीभैरव नमो नमः॥

धनाध्यक्ष नमस्तुभ्यं शरण्याय नमो नमः।
नमः प्रसन्नरूपाय आदिदेवाय ते नमः॥

नमस्ते मंत्ररूपाय नमस्ते रत्नरूपिणै।
नमस्ते स्वर्णरूपाय सुवर्णाय नमो नमः॥

नमः स्वर्ण वर्णाय महापुण्याय ते नमः।
नमो शुद्धाय बुद्धाय नमः संसारतारिणे॥

नमो देवाय गुह्याय प्रचलाय नमो नमः।
नमस्ते बालरूपाय परेषां बलनाशिने॥

नमस्ते स्वर्णसंस्थाय नमो भूतलवासिने।
नमः पाताल वासाय अनाधाराय ते नमः॥

नमो नमस्ते शान्ताय अनन्ताय नमो नमः।
द्विभुजाय नमस्तुभ्यं भुजत्रयसुशोभिने॥

नमोअणिमादि सिद्धाय स्वर्णहस्ताय ते नमः।
पूर्ण चन्द्रप्रतीकाशवदनाम्भोज शोभिने॥

नमस्तेअस्तु स्वरूपाय स्वर्णालङ्कारशोभिने।
नमः स्वर्णाकर्षणाय स्वर्णाभाय नमो नमः॥

नमस्ते स्वर्णकण्ठाय स्वर्णाभाम्बरधारिणे।
स्वर्णसिंहासनस्थाय स्वर्णपादाय ते नमः॥

नमः स्वर्णाभपादाय स्वर्णकार्ची सुशोभिने।
नमस्ते स्वर्णजङ्घाय भक्तकामदुधात्मने॥

नमस्ते स्वर्णभक्ताय कल्पवृक्ष स्वरूपिणे।
चिन्तामणिस्वरूपाय नमो ब्रह्मादि सेविने॥

कल्पद्रुमाधः संस्थाय बहुस्वर्ण प्रदायिने।
नमो हेमाकर्षणाय भैरवाय नमो नमः॥

स्तवेनानेन सन्तुष्टो भव लोकेश भैरव।
पश्य मां करुणाद्वष्ट्या शरणागतवत्सल॥

श्री महाभैरवस्येदं स्तोत्रमुक्तं सुदुर्लभम्।
मन्त्रात्मकं महापुण्यं सर्वैश्वर्य प्रदायकम्॥

यः पठेन्नित्यमेकाग्रं पातकैः स प्रमुच्यते।
लभते महतीं लक्ष्मीभष्टैश्वर्यभवाप्नुयात्॥

चिन्तामणिमवाप्नोति धेनुं कल्पतरूं ध्रुवम्।
स्वर्णराशिवाप्नोति शीघ्रमेव स मातवः॥

त्रिसन्ध्यं यः पठेत् स्तोत्रं दशावृत्या नरोत्तमः।
स्वप्ने श्री भैरवस्तस्य साक्षाद् भूत्वा जगद्गुरुः॥

स्वर्णराशिं ददात्यस्मै तत्क्षणं नास्ति संशयः।
अष्टा वृत्या पठेद् यस्तु संध्यायां वा नरोत्तमः॥

लभते सकलान् कामान् सप्ताहान्नात्र संशयः।
सर्वदा यः पठेत स्तोत्रं, भैरवस्य महात्मनः॥

लोकत्रयं वशीकुर्यादचलां श्रियमाप्नुयात्।
न भयं विद्यते क्वापि विषभूतादि सम्भवम्॥

म्रियन्ते शत्रवस्त्रस्य ह्यलक्ष्मी नाशमाप्नुयात्।
अक्षयं लभते सौख्यं सर्वदा मानवोत्तम्॥

अष्टपंचाशद् वर्णाढ्यो मंत्रराजः प्रकीर्तितः।
दारिद्रयदुःख शमनः स्वर्णाकर्षण कारकः॥

य एनं संजयेद् धीमान् स्तोत्रं वा प्रपठेत् सदा।
महाभैरव सायुज्यं सोअन्तकाले लभेद् ध्रुवम्॥

यह सम्पूर्ण स्वर्णाकर्षण भैरव स्तोत्र है। आर्थिक विपन्नता से मुक्ति पाने के लिये यह एक प्रभावशाली स्तोत्र है, लेकिन इस प्रकार के स्तोत्र, कवच आदि के पाठ के दौरान भी कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना होता है, तभी यह अपना पूर्ण प्रभाव दिखा पाते हैं। अतः इस सम्बन्ध में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये:-

- स्तोत्रादि का पाठ पूर्ण लयबद्ध होकर करना चाहिये। स्तोत्र का पाठ अटक-अटक कर करने से उसकी लय ही नहीं गड़बड़ाती बल्कि उसका पाठ भी खण्डित हो जाता है। इससे वह प्रभाव प्राप्त नहीं हो पाता, जो अनुष्ठान से अभीष्ट रहता है। अतः सबसे पहले इस प्रकार के स्तोत्र पाठों को किसी योग्य विद्वान या गुरु के मुंह से ग्रहण करके व उसका शुद्ध उच्चारण सीखकर कण्ठस्थ कर लेना चाहिये और उसके बाद ही अनुष्ठान की शुरूआत करनी चाहिये। यद्यपि इन्हें शीघ्र कण्ठस्थ करने के लिये अब कई तरह के उपकरण भी उपलब्ध हो चुके हैं। इन्हें टैप रिकार्डर से टैप करके भी याद किया जा सकता है तथा अनुष्ठान को सम्पन्न करने में भी टैप रिकार्डर की मदद ली जा सकती है।

- इस प्रकार के स्तोत्र आदि का पाठ श्रोता बनकर नहीं, बल्कि पूर्ण समर्पित भाव से उसमें समाहित होकर ही करना चाहिये।

- जब स्वर्णाकर्षण भैरव स्तोत्र का पाठ अभीष्ट संख्या में सम्पन्न हो जायें तो ग्यारह मंत्रों की समिधा से आहुतियों के बाद एक आहुति घी के द्वारा प्रदान की जाये तथा निम्न मंत्रोच्चार के साथ उन सबको भैरव को ही अर्पित कर देना चाहिये।

मंत्र-

ॐ नमस्ते भैरवाय ब्रह्मविष्णु शिवात्मने।
नमस्त्रैलोक्य वन्द्याय वरदाय वरात्मने॥

तदोपरान्त एक बार पुनः भैरव के सामने अपनी प्रार्थना को दोहरा लें तथा उनसे आज्ञा प्राप्त करके ही अपना आसन छोड़ें। नैवेद्य का प्रसाद स्वयं ग्रहण कर लें तथा परिवार के अन्य सदस्यों विशेषकर बच्चों में बटवा दें। इस तरह प्रथम दिन का कार्यक्रम सम्पन्न हो जाता है। इस अनुष्ठान के दौरान ब्रह्मचर्य का पालन एवं सात्विक भावना को बनाये रखना आवश्यक होता है। यद्यपि इस तांत्रोक्त अनुष्ठान को किसी अन्य कार्य के निमित्त किया जाये, तो इसमें कुछ परिवर्तन भी किये जाते हैं।

- पूरे अनुष्ठान के 31 दिनों के दौरान यही क्रम बना रहना चाहिये। प्रत्येक दिन मंत्रजाप एवं स्तोत्र पाठ से पूर्व स्वर्णाकर्षण भैरव यंत्र प्रथम दिन की भांति पूजा-अर्चना, प्रार्थना, आह्वान, नवपीठ शक्तियों का पूजन, अष्ट भैरवों के पूजन के क्रम को वैसे ही बनाये रखना चाहिये। अगर अनुष्ठान में मिट्टी की प्रतिमा की प्रतिष्ठा की गयी है तो प्रतिदिन उस पर भी सिन्दूर का लेप (चोला चढ़ाने का कार्य) करना चाहिये। भैरव से प्रार्थना करना एवं उनके सामने अपने दुख:-दर्द को खोलना भी पूजाक्रम में शामिल रहना चाहिये। भैरव से आज्ञा लेकर अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप और उनके स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। साधनाकाल के समय सरसों का अखण्ड दीपक जलते रहना चाहिये तथा स्तोत्र पाठ के समय पूर्ववत अग्नि में आहुतियां भी देते रहना चाहिये। इनके अलावा पूर्व दिन की पूजा सामग्री को किसी पात्र में एकत्रित करते रहना चाहिये। अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् इन समस्त सामग्रियों को किसी पानी वाले कुयें अथवा बहते हुये पानी में प्रवाहित कर दें।

31वें दिन जब मंत्रजाप और स्तोत्र पाठ का कार्य सम्पन्न हो जाता है, तो उसके अन्त में 108 मंत्रों के साथ उपरोक्त हवन सामग्री के साथ अतिरिक्त आहुतियां अग्नि को समर्पित की जाती हैं। अगर इस अनुष्ठान की शुरूआत रविवार के दिन से की गई है तो इसकी पूर्ण आहुति मंगलवार के दिन पड़ती है। मंगलवार के दिन भैरव को गुड़ और घी से तैयार लप्सी का नैवेद्य लगाया जाता है। अतः उस दिन भैरव को इसका नैवेद्य अवश्य लगाया जाये तथा आठ बालकों को भोजन करवा कर एवं दक्षिणा आदि देकर प्रसन्न किया जाये। इसके अलावा ग्यारह गोमती चक्रों को किसी लाल वस्त्र में बांधकर घर या आफिस के द्वार पर किसी गुप्त स्थान पर बंधवा देना चाहिये तथा भैरव यंत्र को अपने घर या ऑफिस के पूजा स्थान पर स्थापित कर लेना चाहिये।

• इस स्वर्णाकर्षण भैरव साधना को इस क्रम से सम्पन्न करने पर निश्चित ही आर्थिक समस्याओं का निवारण हो जाता हैं। बहुत से मामलों में तो यहां तक देखा गया है कि

अनुष्ठान शुरू करने के दस-ग्यारह दिन के बाद ही घटनाक्रम में बदलाव आने लगता है तथा परिस्थितियां अनुकूल बनने लगती हैं। इस स्वर्णाकर्षण भैरव अनुष्ठान को धनाभाव की स्थिति से उबरने के लिये किया जाता हैं इसके अलावा भी यह कई अन्य आकांक्षाओं की प्राप्ति के लिये भी सम्पन्न किया जाता है।

अगर इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के दौरान साधक साधना कक्ष में ही रात्रि शयन करता रहे। अनुष्ठान काल के दौरान उपवास करता रहे तथा दिन में एक दो बार केवल गाय के दूध या फल आदि का सेवन करे। मन में पूर्ण एकाग्रता का भाव बनाये रखकर भैरव भक्ति में ही डूबा रहे तो उसे अनेक तरह के दिव्य अनुभव होने लग जाते हैं। इसमें अनुष्ठान के क्रम को भी थोड़ा बदलना पड़ता है। इस सबके विषय में मैंने अन्यत्र जानकारी दी है। अत: इसके विषय में विस्तारपूर्वक वहां देख लें।

सौभाग्यप्रद गणपति साधना

भगवान गणपति की जिस साधक पर कृपा हो जाती है उस पर कभी कोई अभाव अथवा समस्या नहीं आती है। सामान्य पूजा और सच्ची श्रद्धा से वे बहुत जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं। हमारे यहां विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा, साधना अथवा अनुष्ठान आदि किसी विशेष प्रयोजन आदि के लिये किये जाते हैं जैसे कि किसी को आर्थिक समस्या है, किसी के विवाह में विलम्ब हो रहा है, किसी के विवाह आदि में बाधायें आ रही हैं अथवा अन्य किसी प्रकार की कामना पूर्ति हो। इसी अनुरूप यह प्रयोग भी उन लोगों के लिये विशेष लाभदायक है जो विभिन्न प्रकार की आर्थिक समस्याओं से ग्रस्त हैं। यह प्रयोग करने के कुछ समय बाद ही समस्याओं में कमी आने लगती है।

यह प्रयोग एक बहुत विख्यात बाबा के माध्यम से प्राप्त हुआ है। इन बाबा के अनेक भक्त हुआ करते थे। उन्हीं में से एक भक्त जब भी उनसे मिलता, तभी चेहरा उदास और परेशान सा लगता। बाबा ने उसे कभी मुस्कुराते हुये भी नहीं देखा था। एक दिन बाबा ने उससे उसकी समस्या के बारे में पूछा। तब उसने बताया कि उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। वह कपड़े की एक मिल में प्रबंधन कार्य देख रहा है। जितना पैसा वेतन के रूप में मिलता है, उससे उसका निर्वाह ठीक से नहीं होता है। उसने बाबा को एक बहुत गंभीर बात बताई कि वर्तमान की उसे चिंता नहीं है, जैसे भी कठिन दिन हैं, वह उन्हें भोग लेगा, चिंता केवल भविष्य को लेकर है। बच्चे अभी छोटे हैं, आने वाले समय में उनकी शिक्षा आदि पर खर्च करना पड़ेगा, घर के अन्य खर्च भी बढ़ेंगे, उनकी व्यवस्था कैसे होगी ? यही चिंता की बात है। उसकी बात में इतनी करुणा थी कि बाबा का दिल पसीस गया। उन्होंने उसे शाम के समय बुलाया और सौभाग्यप्रद गणपति साधना के बारे में बताया और इस प्रयोग की विधि भी बताई। उस भक्त ने बाबा के निर्देशानुसार इस प्रयोग को किया। इसके दो महीने बाद ही परिस्थितियों में परिवर्तन आने लगा था। एक अन्य बड़ी मिल ने इसकी कार्य कुशलता से प्रभावित होकर पहले वाले वेतन से तीन गुना अधिक पर अपने यहां नौकरी पर रख लिया। इसके दो साल बाद एक व्यक्ति ने इस साधक के साथ साझीदारी से मिल खोल ली। चार साल के भीतर ही इस साधक की सभी प्रकार की समस्यायें समाप्त होकर धन की वर्षा होने लगी। वास्तव में यह **सौभाग्य गणपति साधना** का फल इसके नाम के अनुरूप ही प्राप्त हुआ था।

बाद में इस साधक का मेरे साथ परिचय हुआ। इन्होंने मुझे इस साधना के बारे में बताया और आग्रह किया कि जो व्यक्ति आर्थिक समस्याओं से परेशान है और जो इस

उपाय को कर सकता है, उसे मैं अवश्य इसके बारे में बताऊं। फिर मैंने अनेक लोगों से यह उपाय सम्पन्न कराया। सभी ने इस उपाय को चमत्कारिक प्रभाव के बारे में मुझे बताया। इस उपाय को मैं अपने असंख्य पाठकों के लिये यहां बता रहा हूं। जो व्यक्ति आर्थिक समस्याओं से परेशान है, अत्यधिक श्रम करने के पश्चात् भी पैसों की परेशानी रहती है, उन सभी के लिये यह प्रयोग अत्यन्त प्रभावी एवं लाभ देने वाला है।

इस उपाय में सबसे पहले चांदी के पत्र पर अग्रांकित गणेश यंत्र उत्कीर्ण करवा कर उसे चेतना सम्पन्न कर लें। फिर उसे शुभ मुहूर्त में अपने उपासना कक्ष में स्थापित करके उसकी विधिवत उपासना करें। अगर चांदी के पत्र पर यंत्र उत्कीर्ण करना सम्भव नहीं हो तो इसी गणेश यंत्र को भोजपत्र के ऊपर पंचगंध की स्याही एवं चमेली की कलम से लिखकर उसकी भी विधिवत् पूजा-अर्चना कर लें, ताकि यंत्र चेतना सम्पन्न बन जाये। इसके पश्चात् इस यंत्र को त्रिधातु निर्मित ताबीज में भर कर अपने कंठ अथवा बाहूमूल में लाल धागे से बांध लें। इस साधना में निर्मित किया जाने वाला **गणेश यंत्र** इस प्रकार है-

गणपति यंत्र

यंत्र निर्माण के लिये पंचगंध की स्याही का प्रयोग किया जाता है। पंचगंध स्याही बनाने के लिये गोरोचन, श्वेत चंदन, केसर, ब्रह्म कमल पंखुड़ियां, अगर अथवा सुगन्धबाला की आवश्यकता होती है। सबसे पहले उपरोक्त गंधों को एकत्रित करके अच्छी तरह से घिस कर अथवा बारीक पीस कर परस्पर मिलाकर चंदन जैसा लेप बना लें। फिर किसी शुभ मुहूर्त, जैसे रवि पुष्य नक्षत्र या अमृत सिद्धि योग अथवा सर्वार्थ सिद्धि योग के अवसर पर चमेली की कलम द्वारा इस पंचगंध स्याही द्वारा विधिवत भोजपत्र के ऊपर लिख कर यंत्र तैयार कर लें।

जब गणपति यंत्र तैयार हो जाये तो इनकी उपासना के लिये अगले शुभ मुहूर्त का चुनाव करें। इस गणपित अनुष्ठान को गणेश चतुर्थदशी के दिन से अथवा किसी भी शुक्ल पक्ष की चतुर्थ तिथि के दिन भी शुरू किया जा सकता है। अतः जिस दिन इस अनुष्ठान को शुरू करने का निश्चय करें, उस दिन प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में उठकर एवं नित्यकर्म से निवृत्त होकर तैयार हो जायें। एक स्वच्छ वस्त्र पहन कर अपने पूजाकक्ष में उत्तराभिमुख होकर आराम से बैठ जायें। बैठने के लिये कम्बल आसन अथवा कुशा आसन का प्रयोग करें।

आसन पर बैठकर अपने सामने लकड़ी की एक चौकी बिछाकर उसके ऊपर एक श्वेत रंग का वस्त्र बिछा लें। चौकी पर गंगाजल छिड़क कर शुद्ध करके चांदी पर उत्कीर्ण किये गये सौभाग्यप्रद गणपति यंत्र को प्रतिष्ठित करें। इसके पश्चात् यंत्र पर पंचगंध युक्त स्याही से ग्यारह बार गंध अर्पित करते हुये **ॐ गं गणपति नमः** नामक मंत्र का उच्चारण करते रहें। चांदी के यंत्र के साथ ही भोजपत्र पर बनाये यंत्र को भी प्रतिष्ठित कर लें।

रजत पत्र पर उत्कीर्ण गणपति यंत्र को गंध लेपन के पश्चात् धूप, दीप अर्पित करें। घी का एक दीपक जलाकर चौकी पर रख दें और स्वयं गणपति को यंत्र में प्रतिष्ठित होने के लिये उनका आह्वान करें।

धूप, दीप, पुष्प, गंध आदि चढ़ाने के पश्चात् चौकी के ऊपर गणपति के लिये पंचमेवा और लड्डूओं का भोग लगाकर रखें। अंत में गणपति के सामने अपनी प्रार्थना करें। उनसे जो मांगना चाहे मांगें तथा उनकी आज्ञा प्राप्त करके अग्रांकित मंत्र की कम से कम तीन मालाओं का जाप करें। अगर अधिक संख्या में मंत्रजाप संभव हो तो वैसा कर लें। **गणपति मंत्र** इस प्रकार है-

ॐ श्रीं गं सौम्यास गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

इस मंत्र का जाप स्फटिक माला अथवा मूंगा माला के ऊपर किया जाये, यह सर्वश्रेष्ठ रहता है। यद्यपि मंत्रजाप के लिये हकीक की माला का भी उपयोग किया जा सकता है। जब आपका मंत्रजाप पूर्ण हो जाये तो उसके उपरांत गणपति से एक बार पुनः अपनी प्रार्थना कर लें तथा उनकी आज्ञा लेकर आसन से उठ जायें। गणपति को जो नैवेद्य अर्पित किया गया है, उसमें से थोड़ा सा प्रसाद स्वयं ग्रहण कर लें, शेष प्रसाद को घर के

अन्य सदस्यों में बांट दें।

इस तरह निरन्तर 21 दिन तक इस अनुष्ठान को जारी रखें। प्रत्येक दिन प्रातःकाल स्वच्छ होकर अपने पूजाकक्ष में बैठकर सौभाग्यप्रद गणपति यंत्र की पूर्जा-अर्चना करें। प्रतिदिन यंत्र को गंगाजल अथवा शुद्ध जल से धोकर पंचगंध लेपन करें। गंध लेपन के समय ग्यारह बार **ॐ गं गणपति नमः** मंत्र का जाप करते रहें। इसके पश्चात् यंत्र की धूप, दीप, पुष्प, नैवेद्य आदि से विधिवत पूजा-अर्चना करें। गणपति का आह्वान करें और उनसे प्रार्थना करके एवं उनकी आज्ञा प्राप्त करके गणपति के उपरोक्त मंत्र की कम से कम तीन माला मंत्रजाप करते रहें। जाप के पश्चात् गणपति से प्रार्थना करना एवं आसन से उठने की आज्ञा लेना नहीं भूले।

यह गणपति की नियमित पूजा का क्रम है। इस पूजा में एक बात का ध्यान रखा जा सकता है कि प्रतिदिन गणपति को पंचमेवा का नैवेद्य लगाना ही पर्याप्त रहता है। लड्डूओं का नैवेद्य प्रथम दिन और अनुष्ठान के आखिर दिन अर्थात् 21वें दिन ही लगाना होता है।

21वें दिन, जिस दिन आपका अनुष्ठान सम्पन्न होता है, उस दिन एक माला अतिरिक्त मंत्रजाप करें तथा गणपति यंत्र के आगे रखे हुये नैवेद्य को घर-परिवार के अलावा आस-पड़ौस में भी बंटवा दें। विशेषकर बच्चों में प्रसाद बंटवाना अति शुभ रहता है।

इस तरह 21वें दिन यह अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है। अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् चांदी पर निर्मित गणेश यंत्र को पूजास्थल पर ही बने रहने दें तथा नियमित रूप से उसके सामने धूप, दीप आदि अर्पित करते रहें। इसके साथ ही अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ संख्या में मंत्रजाप भी नियमित रूप से जारी रखें, जबकि दूसरा गणपति यंत्र, जो भोजपत्र पर निर्मित किया गया है और जिसे त्रिधातु से बने ताबीज के अन्दर रखा जाता है, उसे लाल रेशमी धागे से अपने गले अथवा बायें हाथ की बाजू पर बांध लें।

21 दिन के दौरान जो पूजा सामग्री चौकी के ऊपर व इसके इर्द-गिर्द इकट्ठी हो जाती है, उसको एक जगह एकत्र करके किसी जल स्रोत में अथवा किसी नदी आदि में प्रवाहित करवा दें। इस प्रकार 21 दिन का गणपति का यह अनुष्ठान पूर्णता के साथ सम्पन्न हो जाता है।

गणपति का यह 21 दिन का अनुष्ठान बहुत ही प्रभावशाली है। इसको सफलतापूर्वक सम्पन्न करने से सुख-सौभाग्य की प्राप्ति होती है। अनेक तरह की बाधायें एवं आपदायें स्वतः ही शांत हो जाती हैं। गणपति यंत्र को प्रतिष्ठित करने एवं इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने से धन आगमन के स्रोत खुलते हैं, व्यापार वृद्धि होती है, मित्र एवं पारिवारिक सदस्यों से भरपूर सहयोग प्राप्त होता है तथा आर्थिक स्थिति दिनोंदिन सुदृढ़ होती जाती है।

हनुमान जी की तंत्र साधना

रामभक्त हनुमान के पराक्रम से भला कौन परिचित नहीं है। अंजनी नंदन भगवान हनुमान जी सर्वमान्य देव हैं। उन्हें अतुलित बल के धाम, बल-बुद्धि निधान, ज्ञानियों में अग्रमान्य, ध्यानियों में ध्यानी, योगियों में योगी और अनन्त नामों से विभूषित किया गया है। पवन पुत्र हनुमान को शिव का अवतार माना गया है। तंत्र में उन्हें एकादश रुद्र माना गया है। पवन पुत्र इतने बलशाली हैं कि बाल्यकाल में ही उन्होंने सूर्य को अपने मुंह में रख लिया था।

हनुमानजी के विषय में सब जगह कई अन्य बातें प्रचलित हैं। एक बात यह है कि कलियुग में जहां भी रामकथा का गुणगान किया जाता है, वहां पूरे समय कथास्थल पर भगवान श्री हनुमानजी उपस्थित रहते हैं। यह विश्वास एक अन्य तथ्य से भी सिद्ध होता है। संसार में सात चिरंजीवी माने गये हैं। इन सात चिरंजीवियों में अश्वत्थामा, परशुराम और हनुमान तो सर्वविख्यात हैं। चिरंजीवी का अर्थ है जो मृत्यु के रूप में शरीर का परित्याग नहीं करते, बल्कि स्वेच्छा से दृश्य-अदृश्य होने की शक्ति का उपयोग करते हैं।

हनुमान जी चिरंजीवी हैं, इसलिये समय की लम्बी धारा में हजारों लोगों ने हनुमानजी का साक्षात्कार किया है। हनुमानजी का अस्तित्व त्रेतायुग से लेकर द्वापर और कलियुग तक में सदैव बना रहा है। त्रेतायुग में हनुमानजी ने अपने भक्तिभाव से राम-रावण युद्ध में सबसे प्रमुख भूमिका निभाई, तो द्वापर युग में वे महाभारत के युद्ध में श्रीकृष्ण-अर्जुन के रथ की ध्वजा (पताका) पर उपस्थित रहे थे।

हनुमानजी की प्रसिद्धि भारत में ही नहीं, अपितु दुनिया के अनेक देशों में भी उतनी ही रही है, जितनी कि भारत में। हनुमानजी की पूजा-अर्चना श्रीलंका, सिंगापुर, इण्डोनेशिया, जावा, सुमात्रा, मलेशिया जैसे अनेक देशों में बीते लम्बे समय से आज तक हो रही है। वास्तव में हनुमान जी की महिमा अपरम्पार है। इस कलियुग के समय में तो हनुमानजी ही भैरव, काली, दुर्गा, रुद्र आदि के बाद एक मात्र ऐसे देव हैं, जो अपने भक्तों को प्रत्यक्ष दर्शन देकर उनके समस्त दु:खों को मिटा सकते हैं।

हनुमानजी बल, बुद्धि, विद्या के देव माने गये हैं। हनुमानजी को शास्त्र मर्मज्ञ और विद्या शिरोमणि भी कहा जाता है क्योंकि वह वेद, पुराण, उपनिषदों के समस्त रहस्यों के ज्ञाता हैं और साथ ही सर्वश्रेष्ठ संस्कृतज्ञ भी हैं। हनुमानजी का उच्चारण अत्यन्त शुद्ध था। वे व्याकरण में भी पारंगत थे। रामायण के किष्किंधा काण्ड में एक कथा का विशेष रूप से उल्लेख आया है, जिसमें हनुमान जी की बुद्धि की पुष्टि हो जाती है। सीताजी की खोज में

जब राम और लक्ष्मण वन-वन भटक रहे थे, तब सुग्रीव ने उनकी परीक्षा लेने के लिये हनुमानजी को ही ब्राह्मण वेश बनाकर उनके पास भेजा था। स्वयं भगवान राम हनुमानजी की विद्वता, चतुराई और नीतिशास्त्र सम्बन्धी वार्तालाप से अत्यधिक प्रभावित हुये थे।

हनुमानजी को नीतिशास्त्र का भी सर्वश्रेष्ठ विद्वान माना गया है। वह उच्च कोटि के संगीतज्ञ भी थे। वह बल, बुद्धि और विद्या के देव हैं। इसलिये हनुमानजी अपने भक्तों को न तो विद्या के द्वारा, न बल के माध्यम से और न ही नीति द्वारा परास्त होने देते हैं। यही मुख्य कारण रहा है कि अनन्तकाल से ही हनुमान जी विद्यार्थियों, यौद्धाओं और मल्लयुद्ध के महारथियों के आराध्य देव के रूप में पूजनीय रहे हैं। कोई भी युद्ध कौशल की शाला अथवा पहलवानों का अखाड़ा ऐसा नहीं होगा, जहां पर हनुमानजी की प्रतिष्ठा न की गई हो। आधुनिक स्कूलों में तो हनुमानजी की पूजा-अर्चना का अधिक प्रचलन नहीं है, किन्तु पुराने जमाने में सभी गुरुकुलों में अन्य आराध्य देवों के साथ-साथ हनुमानजी की प्रमुखता से प्रतिष्ठा की जाती थी। मगध नरेश चन्द्रगुप्त के गुरु और महान कूटनीतिज्ञ कौटिल्य भी हनुमानजी के परम भक्त थे।

हनुमानजी सभी आयुधों से अवध्य हैं, क्योंकि उनमें प्रायः समस्त देवों की शक्तियां समाहित हैं। एक तरह से वे समस्त देवों की शक्ति को स्वयं संचित करके ही अवतरित हुये हैं। वरुणदेव ने उन्हें अमरत्व प्रदान किया है, जिससे वे चिरंजीवी हो सके, तो यम ने उन्हें अपने दण्ड से अभयदान प्रदान किया है। इसी प्रकार कुबेर ने उन्हें गदाघात से अप्रभावित होने का आशीर्वाद प्रदान किया, तो देवाधिदेव भगवान शंकर ने शूल और पाशुपत आदि अस्त्रों से अभय होने का वर दिया है। एकादश रुद्र तो वह स्वयं ही हैं।

अंजनी नंदन इतनी अधिक शक्तियों एवं इतने गुणों से सम्पन्न हैं कि वह अपने भक्तों की प्रत्येक समस्या का सहज ही निदान कर देते हैं। हनुमानजी के भक्तों की संख्या सर्वाधिक इस कारण से है कि उन्हें प्रसन्न करना बहुत ही सहज एवं सरल है।

प्रत्येक व्यक्ति की यह प्रबल अभिलाषा होती है कि उसके पास सुख-समृद्धि के अधिकाधिक साधन हों, आर्थिक रूप से सक्षम हो और जीवन में कभी किसी प्रकार की समस्या नहीं आये। इसके लिये वह प्रयास भी करता है। कुछ व्यक्तियों की यह कामना पूर्ण हो जाती है और कुछ की नहीं होती है। इसके साथ ही वे अनेक समस्याओं से घिर जाते हैं। दुःख एवं कष्ट जीवन में निराशा एवं अवसाद उत्पन्न करने लगते हैं। इसके अन्य अनेक कारण हो सकते हैं किन्तु कई बार ऐसे व्यक्ति दूसरों की जलन एवं ईर्ष्या के शिकार हो जाते हैं। ऐसे लोग प्रत्यक्ष रूप में कुछ कर नहीं पाते हैं किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से विभिन्न तांत्रिक अभिचार अथवा टोटकों के द्वारा व्यक्ति को कष्ट में डाल देते हैं। ऐसी घटनाओं के शिकार लोगों को अनेक प्रकार की विपरीत स्थितियों का सामना करना पड़ता है। अनेक लोगों का अच्छा खासा चलता व्यापार अचानक घाटा देने लगता है। लाभ के

स्थान पर विभिन्न रूपों में हानि होने लगती है जो उसे आर्थिक समस्याओं में धकेल देती है। अनचाहे ही व्यक्ति अदालतों के केसों में उलझा दिया जाता है। बिना बात के लोगों से शत्रुता बनने लगती है। ऐसे लोग अपनी समस्या के समाधान के लिये ज्योतिषियों, तांत्रिकों तथा मांत्रिकों के चक्कर लगाने लगते हैं किन्तु अधिकांश अवसरों पर निराशा ही हाथ लगती है।

उपरोक्त प्रकार की समस्या से पीड़ित लोगों के लिये हनुमत साधना का प्रयोग अत्यन्त लाभदायक रहेगा। वैसे भी इस बात को सभी जानते हैं कि श्री हनुमान ऐसे किसी भी व्यक्ति के कष्टों को तुरन्त दूर करते हैं जो सरल एवं सच्चे मन से उनकी साधना करता है। जिस व्यक्ति का व्यापार घाटे में चल रहा है, अकारण रूप से हानि का सामना करना पड़ रहा है, शत्रुओं की संख्या बढ़ रही हो, बनते काम बिगड़ते हों, ऐसे सभी लोगों को श्री हनुमान साधना का यह उपाय अवश्य करना चाहिये।

आगे मैं हनुमानजी से सम्बन्धित एक विशेष साधना का उल्लेख कर रहा हूं। इस साधना (उपाय) के द्वारा आपके कष्ट एवं समस्या दूर होने की स्थितियां बनने लगेंगी और कुछ समय पश्चात् ही समस्या दूर हो जायेगी। हनुमानजी की यह साधना बहुत ही सरल और सहज है, किन्तु इसके माध्यम से साधक अपनी इच्छित आकांक्षाओं की प्राप्ति सहज ही कर सकते हैं। हनुमानजी की यह साधना विद्यार्थियों के लिये भी बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती है। इस साधना से विद्यार्थियों का बौद्धिक कौशल बढ़ता है तथा परीक्षाओं में अच्छे अंक लेकर पास होते हैं। हनुमत साधना से साधकों की एकाग्रता एवं शारीरिक सामर्थ्य में भी वृद्धि होती जाती है, जिससे वे प्रतियोगिताओं, परीक्षाओं आदि में सर्वश्रेष्ठ क्षमता दिखा पाते हैं। साक्षात्कार आदि में सफल होने के लिये भी यह हनुमत साधना बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती है।

हनुमानजी की इस साधना के माध्यम से अनेक विद्यार्थियों ने परीक्षाओं में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया है।

हनुमत साधना की प्रक्रिया :

वैसे तो इस हनुमत साधना को अपनी सुविधानुसार कितने भी दिनों तक जारी रखा जा सकता है, लेकिन किसी परीक्षा अथवा स्पर्द्धा में उच्च स्थान प्राप्त करने के लिये अगर इस साधना को सम्पन्न करना हो तो उसके लिये ग्यारह दिन तक ही इस साधना को जारी रखना पर्याप्त रहता है। ग्यारह दिनों की साधना से ही साधक को इच्छित फल की प्राप्ति होने के अवसर बनने लगते हैं।

इस हनुमत साधना को अगर मंगलवार या शनिवार के दिन से शुरू किया जाये तो हनुमान जी शीघ्र प्रसन्न होते हैं। इसी प्रकार अगर इस साधना को किसी प्राचीन हनुमान

जी के मंदिर में हनुमान जी की विशेष पूजा करके सम्पन्न किया जाये तो इसका फल तत्काल रूप से मिलता है अन्यथा इस साधना को घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है।

हनुमत साधना का विधान :

मंगलवार अथवा शनिवार के दिन उपवास रखें। उपवास के दौरान एक-दो बार दूध, फलों का सेवन किया जा सकता है। संध्या के समय नहा-धोकर और स्वच्छ वस्त्र पहनकर हनुमानजी के मंदिर जायें। मंदिर में सबसे पहले हनुमानजी को घी-सिन्दूर से चोला चढ़ायें। उन्हें पुष्पमाला अर्पित करें। हनुमानजी को फल और नैवेद्य अर्पित करें। नैवेद्य के रूप में चूरमे का भोग लगाया जाये तो अति उत्तम है अन्यथा मोतीचूर के लड्डू प्रसाद रूप में अर्पित किये जा सकते हैं।

सबसे पहले हनुमानजी के सामने लाल रंग का ऊनी आसन बिछा कर बैठ जायें। हनुमानजी के चरणों में शुद्ध रक्तचंदन की माला रखें। इसके अलावा हनुमानजी के सामने एक घी का दीपक जलाकर भी रख दें। शुद्ध गुग्गुल धूप अथवा लोबान धूप जला कर रखें।

अपनी आंखें बंद करके पूर्ण एकाग्रता के साथ प्रार्थना करें। जिस निमित्त इस हनुमत साधना को सम्पन्न किया जा रहा है, उस बात का विशेष रूप से उल्लेख करें। हनुमान जी से तत्काल इच्छित अभिलाषा की पूर्ति का निवेदन करें। तत्पश्चात् हनुमानजी से मंत्रपाठ की आज्ञा प्राप्त करके अग्रांकित मंत्र का जाप प्रारम्भ करें। अगर हनुमानजी की साधना में लाल रंग के वस्त्र पहनकर अथवा लंगोट व जनेऊ पहनकर बैठा जाये तो और भी अच्छा रहता है।

मंत्रजाप शुरू करने से पूर्व हनुमानजी को समर्पित की गई रक्तचन्दन माला को अपने हाथों में ग्रहण कर लें तथा पूर्ण एकाग्रता के भाव के साथ अग्रांकित मंत्र का ग्यारह माला जाप कर लें। हनुमानजी का मंत्र इस प्रकार है-

मंत्र- **ॐ नमो हनुमन्ताय आवेशय-आवेशय स्वाहा।**

मंत्रजाप पूर्ण हो जाने के पश्चात् एक बार पुनः हनुमानजी से अपनी प्रार्थना कर लें। अनुष्ठान में पूर्ण सफलता प्राप्त करने का उनसे अनुरोध करें। इसके पश्चात् हनुमानजी की आज्ञा प्राप्त करके आसन से उठ जायें। मंत्रजाप के पश्चात् प्रसाद को अन्य लोगों में बंटवा दें।

साधनाकाल में ब्रह्मचर्य का व्रत का पालन करना तथा भूमि पर शयन करना आवश्यक है। अनुष्ठान काल में सात्विक आहार ग्रहण करना चाहिये तथा सभी तरह के व्यसनों से दूर रहना चाहिये।

यह हनुमत अनुष्ठान कुल ग्यारह दिन का है। इन ग्यारह दिनों में हनुमानजी को प्रत्येक मंगलवार और शनिवार के दिन घी-सिन्दूर का चौला चढ़ाना होता है, जबकि अन्य

दिनों में हनुमानजी को ताजा पुष्प माला, फल, ताजा नैवेद्य अर्पित करना तथा घी का दीपक प्रज्ज्वलित करना पर्याप्त रहता है, लेकिन मंत्रजाप से पहले और बाद में हनुमानजी से प्रार्थना करना बिलकुल नहीं भूलना चाहिये और न ही बिना हनुमान जी की आज्ञा प्राप्त किये आसन से उठना चाहिये। मंत्रजाप रक्तचंदन माला के ऊपर ही करना चाहिये।

ग्यारहवें दिन तक या साधकों को अपने इच्छित फल की प्राप्ति हो जाती है अथवा फल प्राप्त होने के अवसर बनने लगते हैं। अगर समस्या जटिल प्रकार की है तो भी साधकों को अधिक परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। ऐसी स्थिति में ग्यारह दिनों में अनुकूल परिणाम न मिलने पर साधना क्रम को आगे भी बनाये रखना चाहिये। निश्चित ही अगले कुछ दिनों में हनुमानजी की कृपा से अभीष्ट फल की प्राप्ति हो जाती है।

अगर आपको हनुमान मंदिर में बैठकर यह उपाय करने की सुविधा नहीं है तो इसे घर पर भी किया जा सकता है। इसके लिये साधना करने के लिये स्थान का चयन करें। उस स्थान को गोबर से लीप कर स्वच्छ एवं पवित्र कर लें। गोबर से लीपना सम्भव न हो तो गंगाजल छिड़क कर उस स्थान को शुद्ध कर लें। फिर उस स्थान पर लकड़ी की चौकी रखें। चौकी पर सवा मीटर नये लाल वस्त्र को चार तह में करके चौकी पर बिछा दें। इस पर अब श्री हनुमान जी की कोई भी एक फ्रेम की गई फोटो रख दें। इसके बाद की समस्त प्रक्रिया उपरोक्त अनुसार ही करें। चौला चढ़ाने के लिये मंगलवार अथवा शनिवार को हनुमान मंदिर जाना है। वहां श्री हनुमानजी की मूर्ति को सिन्दूर का लेप करें।

इस उपाय को यदि और भी सशक्त बनाना है तो प्रतिदिन किसी भी हनुमान मंदिर में श्री हनुमान की प्रतिमा के सामने बैठ कर हनुमान चालीसा अथवा कर सकें तो बजरंग बाण का जाप करें। शनिवार एवं मंगलवार को यह संख्या पांच बार रहेगी। उपाय करते समय मन में यह विश्वास रखें कि श्री हनुमान जी आपकी समस्या को अवश्य एवं शीघ्र ही दूर करेंगे। उपाय के साथ यह अवश्य ध्यान रखें कि आपका जो भी कार्य है, उसे पूरी निष्ठा से करते रहें। श्री हनुमान जी शीघ्र ही आप पर प्रसन्न होंगे।

विभीषणकृत हनुमद्बडवानल स्तोत्र की तंत्र साधना

हनुमानजी को महावीर भी कहा जाता है। महावीर का अर्थ है- अजेय अर्थात् जिसे बल, बुद्धि, विद्या, ज्ञान, नीति में कोई पराजित न कर पाये और जिसने समस्त शक्तियों को जीत लिया है। यह बात हनुमान जी पर बिलकुल सही बैठती है। इसलिये हनुमानजी को शास्त्रों में बल-बुद्धि और विद्या का दाता कहा गया है।

हनुमानजी के संबंध में कुछ बातें विशेष ध्यान देने की हैं। एक बात तो यह है कि हनुमानजी शिव के अंश हैं। हनुमानजी को एकादश रुद्र अवतार इसी दृष्टि से कहा गया है। इसलिये हनुमत साधना से हनुमानजी की कृपा दृष्टि तो प्राप्त होती ही है, भगवान शंकर की कृपा भी सहज ही प्राप्त हो जाती है। हनुमानजी के संबंध में दूसरी बात यह समझ लेने की है कि यह समस्त देवों की शक्ति को अपने अन्दर संचित करके अवतरित हुये हैं। इसलिये वे वीरता, पराक्रम, दक्षता, निर्भयता, निरोगता आदि के प्रतीक हैं। जो साधक हनुमानजी की सच्चे मन से साधना करता है, उसे यह समस्त गुण सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। हनुमानजी शक्ति, पौरुषता, स्फूर्ति, धैर्य, विवेक, वाक्पटुता आदि गुणों से भी सम्पन्न हैं। इसलिये हनुमानजी के साधकों को यह समस्त गुण सहज ही प्राप्त हो जाते हैं।

हनुमानजी राम, लक्ष्मण और सीता की सेवा भक्ति में सदैव समर्पित रहे हैं। उन्हें सेवा और समर्पण का भाव बहुत पसन्द है। इसलिये जो व्यक्ति गहरी आस्था और पूर्ण समर्पण भाव के साथ हनुमानजी की शरण में आ जाता है, वह सहज ही हनुमानजी का कृपापात्र बन जाता है। साधना में पूर्ण समर्पण भाव ही साधक को तत्काल फल प्रदान कराता है।

ऐसी कोई बाधा, ऐसी कोई शारीरिक या मानसिक समस्या नहीं है, जो हनुमानजी की शक्ति के सामने ठहर सके। इसी तरह ऐसी कोई व्याधि और ऐसा कोई संकट नहीं है जो हनुमत साधना से दूर न हो सके। जिस साधक पर एक बार हनुमानजी का वरदहस्त आशीर्वाद स्वरूप रख दिया जाता है, फिर उस पर कोई भी शत्रु प्रभावी नहीं हो सकता। उसके शत्रु हजारों प्रयास करें, कई तरह की तांत्रिक अभिचार क्रियायें करवा कर उसे परास्त करने का प्रयत्न करें, लेकिन हनुमत कृपा से वह उस साधक का कुछ भी नहीं बिगाड़ पाते हैं। ऐसे हनुमत साधक को भूत, प्रेतादि का डर भी नहीं रहता। सभी अशरीरी आत्माओं की शक्ति उसके सामने आते ही कमजोर पड़ जाती है। बुरे ग्रहों का प्रभाव भी हनुमत साधना से समाप्त हो जाता है।

ज्योतिष शास्त्र में शनि ग्रह को सबसे पापी और संताप देने वाला ग्रह माना गया है।

इसलिये शनि के प्रकोप से कोई नहीं बच पाता। वक्री शनि की दृष्टि, शनि की ढैय्या, शनि की साढ़ेसाती का प्रभाव तो इतना आक्रांत करता है कि इस अवधि में व्यक्ति महल से उजड़ कर सीधे सड़कों पर आ जाता है। असाध्य व्याधियों के रूप में शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा देने में भी ऐसा शनि पीछे नहीं रहता। पारिवारिक कलह का कारण भी ऐसा शनि ही बनता है। यह आश्चर्यजनक बात है कि जिस शनि के प्रताप से व्यक्ति कांप जाता है, वह शनि स्वयं हनुमानजी से भय खाते हैं। इसलिये बहुत से ज्योतिषी अपने यजमानों को शनि के पापी प्रभाव से बचने के लिये हनुमान जी की पूजा-अर्चना करने का परामर्श देते हैं। नियमित रूप से हनुमानजी के मंदिर में जाकर हनुमत कृपा प्राप्त करने का आग्रह करते हैं। अधिकांश शनि पीड़ित लोगों को हनुमानजी की पूजा-अर्चना का फल शीघ्र ही मिल जाता है।

दक्षिण भारत के तमिलनाडू राज्य में अम्बपुर नामक एक प्रसिद्ध स्थान है। उस स्थान पर हनुमानजी के उग्र स्वभाव (उग्र हनुमान) की स्थापना की गई है। यहां हनुमानजी उग्र आवेश में आकर शनि को अपने पैरों में दबाये हुये हैं। अन्यत्र कहीं भी हनुमानजी के उग्र स्वरूप की स्थापना नहीं की गई है। विश्व भर में यही एकमात्र ऐसा स्थान है, जहां हनुमानजी के विकराल स्वरूप की पूजा-अर्चना की जाती है।

मानसिक रूप से कमजोर, मंदबुद्धि और मानसिक व्याधियों से पीड़ित चल रहे लोगों के लिये हनुमान जी की साधना संजीवनी बूटी से कम नहीं होती। हनुमानजी की नियमित साधना, उपासना से शीघ्र ही मानसिक परेशानियों का समाधान हो जाता है तथा साधक स्वयं के अन्दर संतोष, शांति एवं स्फूर्ति का अनुभव करने लग जाता है।

विभीषणकृत हनुमद्बवडवानल स्तोत्रम :

बडवानल वन में लगी भीषण अग्नि को कहा जाता है। यह अग्नि थोड़े समय में ही विशाल वन को नष्ट करने की सामर्थ्य रखती है। जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु के दौरान वन में वृक्षों के परस्पर घर्षण से उत्पन्न हुई छोटी सी चिंगारी शीघ्र ही भीषण अग्नि का रूप धारणकर लेती है और जंगल में चहुं ओर फैल कर समस्त जीव-जन्तुओं को पीड़ित करने लगती है, बडवानल की इस तपस से जंगल के जीव-जन्तु ही नहीं, बल्कि सभी तरह की वनस्पतियां तक समाप्त होने लग जाती हैं, ठीक वैसे ही हनुमानजी के इस **हनुमद्बवडवानल** नामक स्तोत्र के नियमित पठन-पाठन से अनेक प्रकार के संताप स्वत: ही समाप्त होते चले जाते हैं। हनुमत स्तोत्र का प्रभाव अरिष्टकारक ग्रहों के दोषों को शांत करने, शत्रुओं के संताप से बचने, असाध्य रोगों के चंगुल में फंसने से बचने, भूत-प्रेत आदि के भय से मुक्त रहने के साथ-साथ मानसिक व्याधियों के समाधान के लिये भी किया जाता है। यह हनुमत स्तोत्र जीवन में असमय उत्पन्न होने वाली अनेक प्रकार की भीषण समस्याओं से बचने के लिये बहुत प्रभावशाली सिद्ध होता है। इसके नियमित पाठ

से हनुमानजी की अनुकम्पा सदैव अपने साधक पर बनी रहती है। इसलिये ऐसे साधकों को अपने जीवन में किसी तरह का भय नहीं सताता।

हनुमानजी की साधना हनुमद्वडवानल स्तोत्र के द्वारा किसी हनुमानजी के मंदिर में हनुमानजी की प्रतिमा के सामने बैठकर की जा सकती है अथवा अपने घर पर भी हनुमानजी की प्रतिमा स्थापित करके इसका प्रयोग किया जा सकता है। हनुमत अनुष्ठान के लिये हनुमान प्रतिमा पर गन्धादि चढ़ाने, उन्हें चूरमे का नैवेद्य अर्पित करने एवं उनके सामने घी का दीपक जलाकर रखना ही पर्याप्त होता है। इसी से हनुमानजी प्रसन्न हो जाते हैं।

अगर हनुमत अनुष्ठान के दौरान प्रत्येक मंगलवार के दिन हनुमानजी के मंदिर में जाकर अथवा घर में स्थापित की गई मिट्टी की हनुमान प्रतिमा पर घी-सिन्दूर का चौला चढ़ा दिया जाये, साथ ही हनुमानजी पर लौंग, सुपारी, पान के पांच पत्ते, चांदी के पांच वर्क चढ़ाकर उन्हें धूप, दीप करने के साथ पुष्पों की माला अर्पित करके नैवेद्य चढ़ाया जाये, तत्पश्चात् हनुमद्वडवानल स्तोत्र के 51 पाठ पूरे कर लिये जायें, तो साधक को सहज ही अनेक फलों की प्राप्ति हो जाती है। साधक की अनेक प्रकार की अभिलाषायें भी पूर्ण होने लगती हैं। इस संक्षिप्त अनुष्ठान के द्वारा साधक की आर्थिक समस्यायें धीरे-धीरे दूर होने लगती हैं। धन प्राप्ति के नये स्रोत खुलने लगते हैं।

हनुमद्वडवानल स्तोत्र का तांत्रिक अनुष्ठान भी है। हनुमानजी के तांत्रिक स्तोत्र की रचना लंकाधिपति एवं रावण के लघुभ्राता व भगवान श्रीराम के परम् भक्त विभीषण के द्वारा की गई है। रावण स्वयं तो अपने समय का प्रकांड विद्वान था ही, उसके भाई और पुत्र भी अनेक विद्याओं में पारंगत थे। रावण ने सभी शास्त्रों का गहन अध्ययन किया था। तंत्र, ज्योतिष और कर्मकाण्ड, पूजा-पद्धति का भी रावण सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता था। इसी प्रकार रावण का लघुभ्राता विभीषण भी तंत्र विद्या का श्रेष्ठ विद्वान था। उसने तंत्र से संबंधित अनेक साधनाओं को सिद्ध किया था, साथ ही अपनी क्षमताओं के बल पर अनेक तांत्रिक साधनाओं को संकलित कर उन्हें जनोपयोगी बनाया था। हनुमद्वडवानल स्तोत्र नामक इस विशिष्ट रचना का सूत्रपात विभीषण के द्वारा ही किया गया है।

इस स्तोत्र के पीछे एक कथा है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जब राम-रावण का युद्ध समाप्त हो गया, भगवान राम अपने भाई लक्ष्मण, माँ सीता एवं वानर-भालुओं की अपनी सेना के साथ लंका से वापिस अयोध्या चले गये, तो विभीषण अपने आराध्य देव भगवान राम के विछोह को सहन नहीं कर सके। विभीषण अपने समस्त परिवार की असमय मृत्यु के कारण एकाएक गंभीर मानसिक संताप की स्थिति में चले गये। विभीषण की वह हालत दयनीय रूप धारण करती जा रही थी। इसी समय एक रात्रि को उन्हें स्वप्न में शिव के दर्शन हुये। भगवान शिव ने उसे हनुमान जी की शरण में जाने और उनसे

मानसिक व्याधि से से मुक्ति देने की प्रार्थना करने को कहा। उन्होंने विभीषण को आश्वस्त किया कि एकमात्र वही तुम्हारे संताप को मिटाने की सामर्थ्य रखते हैं।

इस स्वप्न को देखने के बाद भगवान शिव की आज्ञा को शिरोधार्य करके लंकाधिपति विभीषण हनुमानजी की साधना करने लगे। उसी दौरान उन्होंने इस हनुमद्वडवानल नामक स्तोत्र की रचना की और पूर्ण-विधान के साथ उनके अनुष्ठान को सम्पन्न करके अपने इष्ट हनुमान जी की अनुकम्पा प्राप्त की।

यह हनुमद्वडवानल नामक हनुमत स्तोत्र बहुत ही अद्‌भुत है। इसके अनुष्ठान का विधिवत प्रयोग करके भौतिक एवं आध्यात्मिक, दोनों प्रकार के लक्ष्यों को एक साथ प्राप्त करना सम्भव है। इस स्तोत्र का विधिवत अनुष्ठान सम्पन्न करके साधक सहज ही अपने समस्त शारीरिक एवं मानसिक रोगों से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। इसके प्रताप से उनके सौभाग्य, ऐश्वर्य एवं मान-सम्मान में निरन्तर वृद्धि होती जाती है। राज दरबार में उनके सामने कोई भय नहीं रहता। व्यक्ति घोर संकट में फंसकर भी सम्मान सहित बाहर निकल आता है।

हनुमद्वडवानल स्तोत्र का तांत्रिक अनुष्ठान :

हनुमानजी के इस तंत्र आधारित अनुष्ठान की अनेक प्रक्रियायें हैं, जिनमें कुछ तंत्र की अघोर पद्धति पर आधारित हैं, तो कुछ तांत्रिक पद्धतियों पर आधारित हैं। अघोर पद्धति पर आधारित साधनाओं का रहस्य गुरु-शिष्य परम्परा के माध्यम से जाना जा सकता है। अतः यहां साधारण तांत्रिक प्रक्रिया पर आधारित तांत्रिक प्रयोग का रहस्योद्‌घाटन किया जा रहा है।

यह तांत्रिक अनुष्ठान यूं तो कुल 31 दिन का है, लेकिन इस अनुष्ठान को निरन्तर तीन महीने तक भी जारी रखा जा सकता है। अनुष्ठान को किसी भी मंगलवार के दिन (कुछ विशेष कार्यों के निमित्त शनिवार के दिन) से शुरू किया जा सकता है। इसके लिये प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त का समय या निशीथ काल का समय अधिक उत्तम रहता है। इस अनुष्ठान में हनुमत साधना के लिये पूर्वाभिमुख होकर बैठना होता है।

अगर इस हनुमत अनुष्ठान को किसी प्राचीन हनुमानजी के मंदिर में बैठकर सम्पन्न किया जाये तो इसका चमत्कार कुछ समय के भीतर ही दिखाई देता है। हनुमानजी के मंदिर में सबसे पहले उन्हें घी-सिन्दूर का चोला चढ़ाये लाल रंग के वस्त्र पहनायें। पुष्प माला, गंध, ग्यारह सप्तमुखी रुद्राक्ष एक माला में पिरोकर अर्पित करें। घी का दीपक जलाकर उनके सामने रखें। पंचमेवा युक्त चूरमे अथवा रोट का प्रसाद चढ़ायें। फिर विनियोग आदि करके हनुमत आज्ञा से स्तोत्र पाठ प्रारम्भ करें।

अगर इस अनुष्ठान को मंदिर में बैठकर सम्पन्न करना सुविधाजनक न लगे तो इसे

अपने घर पर अथवा किसी एकान्त स्थान पर बैठकर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इसके लिये घर में एक एकांत कक्ष की व्यवस्था कर लें ताकि अनुष्ठान में और इसकी पूरी अवधि तक कक्ष में आपके अतिरिक्त किसी अन्य का प्रवेश नहीं हो। कक्ष को धो-पौंछ कर गंगाजल छिड़क कर पवित्र कर लें। पूर्व अथवा दक्षिण की तरफ बैठकर अपने सामने एक चौकी (बाजोट) स्थापित करें। उस पर लाल रंग का सवा मीटर वस्त्र चार तह करके बिछायें। उस पर मिट्टी की हनुमान प्रतिमा स्थापित करें। अगर हनुमान प्रतिमा बनाना संभव न हो तो यह बाजार से बनी बनाई भी प्राप्त की जा सकती है। इसकी ऊंचाई छः इंच से अधिक नहीं होनी चाहिये। अब सर्वप्रथम घी-सिंदूर का चौला चढ़ायें। दीपक प्रज्ज्वलित करें। धूप-अगरबत्तियां जलायें ताकि वातावरण सुगंधमय हो जाये। पुष्प एवं नैवेद्य अर्पित करके पूजा करें। यह सब करते हुये हनुमान के नाम का मानसिक जाप करते रहें।

पूजा विधान के पश्चात् एक सुपारी पर रोली लपेट कर एवं कुंकुम आदि का टीका लगाकर **श्री गणेशाय नमः** मंत्र का एकादश जाप कर हनुमानजी के पास स्थापित कर दें। फिर अपने दाहिने हाथ में जल, अक्षत, पुष्प लेकर निम्न विनियोग करें।

विनियोग : **ॐ अस्य श्री हनुमद्वडवानल स्तोत्र मंत्रस्यश्रीरामचन्द्र ऋषिः श्री वडवानल हनुमान देवता मम समस्त रोगप्रशमनार्थं आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धयर्थं समस्तपापक्षयार्थं श्री सीताराम चन्द्रपीत्यर्थं हनुमद्वडवानलस्तोत्र पाठे विनियोगः।**

मंत्र बोल कर अपनी अंजलि को खोल कर जल को चौकी के नीचे अपने सामने पृथ्वी पर गिरा दें।

आगे लिखे मंत्र का सात बार उच्चारण करते हुये सिन्दूर का एक घेरा अपने चारों ओर रक्षाकवच के रूप में खींच लें। हनुमानजी से सम्बन्धित ऐसे तांत्रिक अनुष्ठानों में आत्मरक्षा के लिये रक्षा कवच खींच लेना अति आवश्यक है। हनुमानजी का रक्षा मंत्र इस प्रकार है-

हनुमते रुद्रात्मकाय हूं फट्

इसके उपरान्त एक त्रिकोणाकृति का हवन कुण्ड निर्मित करके अथवा किसी मिट्टी के पात्र में ग्यारह आम की लकड़ियां, तीन पीपल की लकड़ियां और तीन उपामार्ग की लकड़ियां रखकर अग्नि को प्रज्ज्वलित करें तथा हनुमानजी के उपरोक्त मंत्र के द्वारा ही 21 आहुतियां देकर स्तोत्र पाठ करें। हवन में आहुति प्रदान करने के लिये लोबान, कपूर, अगर, तगर, पीली सरसों,पारिजात के पुष्प, सुगन्धबाला, श्वेत चंदन, रक्त चंदन का बुरादा, भूतकेशी की जड़, घी आदि का मिश्रण तैयार कर लें। हनुमद्वडवानल स्तोत्र का पाठ करते हुये इस सामग्री को समिधा के रूप में अग्नि में अर्पित करते रहें।

हनुमानजी से अपनी प्रार्थना करें कि उनके दु:ख, दर्द को शीघ्रताशीघ्र मिटा मनोकामना को पूर्ण करें। तत्पश्चात् हनुमानजी की आज्ञा प्राप्त करके उनके निम्न हनुमद्वडवानल स्तोत्र का पाठ शुरू कर दें। प्रत्येक दिन साधक को इस स्तोत्र की 21 आवृत्तियां पूरी करने का विधान है। यद्यपि इनकी संख्या को गुरु आज्ञा से घटाया-बढ़ाया जा सकता है। 21 आवृत्तियां पूर्ण होने के पश्चात् भी अग्नि को उपरोक्त मंत्र से पुन: 21 आवृत्तियां प्रदान करनी होती है। हनुमद्वडवानल स्तोत्र निम्न प्रकार है-

हनुमद्वडवानल स्तोत्र

ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते श्री महाहनुमते प्रकट पराक्रम सकलिदङ्मण्डलयशोवितानधवली कृत जगत्त्रितय वज्रदेह रुद्रावतार लंकापुरीदहन उमाअमल मंत्र उदधि बन्धन दशशिर: कृतान्तक सीताश्वसन वायुपुत्र अन्जनीगर्भसंभूत श्रीरामलक्षणणा नन्दकर कपिसैन्य प्राकार सुग्रीवसाहारण्यपर्वतोत्पादन कुमारब्रह्मचारिन् गंभीर नाद सर्वपापग्रहवारण सर्वज्वरोच्चाटन डाकिनीविध्वसंन ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते महावीर वीराय सर्वदु:खनिवारणाय ग्रहमण्डल सर्वभूतमण्डल सर्वपिशचमण्डलोच्चाटान भूतज्वर एकाहिक ज्वर द्वाहिक ज्वर त्र्याहिक ज्वर चातुर्थिक ज्वर संताप ज्वर विषम ज्वर ताप ज्वर माहेश्वरवैष्णव ज्वरान् छिन्धि छिन्धि यक्ष ब्रह्मराक्षस भूतप्रेतपिशाचान् उच्चाटाय उच्चाटय ॐ ह्रां ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवते श्री महाहनुमते ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रै ह्रौं ह्रं: आं हां हां हां हां औं सौं एहि एहि एहि एहि ॐ हं ॐ हं ॐ हं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते श्रवण चक्षुर्भूतानां शाकिनी डाकिनीनां विषमदुष्टांसर्वविषं हरहरआकाशभुवनं भेदय छेदय छेदय मारय मारय शोषय शोषय मोहय मोहय ज्वालय ज्वालय प्रहारय प्रहारय सकलमायां भेदय भेदय ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते महाहनुमते सर्वग्रहोच्चाटन परबलं शोभय सकल बन्धन मोक्षणं कुरू कुरू शिर: शूल गुल्मशूल सर्वशूलान्निर्मूलय निर्मूलय नागपाशानन्त वासुकितक्षक कर्कोटककालियान् यक्षकुल जगत रात्रिंचरदिवाकर सर्वान्नि र्विंषिं कुरू कुरू स्वाहा। राजभय चोरभय परमंत्र परयंत्र परतंत्र परविद्याश्छेदय छेदय स्वमंत्र स्वयंत्र स्वतंत्र स्वविद्या: प्रकटय प्रकटय सर्वारिष्टान्नाशयनाशय सर्वशत्रुन्नाशय नाशय असाध्यं साधय साधय हुं फट् स्वाहा॥

स्तोत्र समाप्त होने तथा **हनुमते रुद्रात्मकाय हूं फट्** की 21 आहुतियां अग्नि को समर्पित करने के पश्चात् हनुमानजी के सामने एक बार पुन: ध्यानमग्न हो जायें तथा मन ही मन अपनी प्रार्थना को दोहराते रहें। तत्पश्चात् हनुमानजी से आज्ञा प्राप्त करके आसन से उठ जायें।

हनुमानजी को समर्पित किये गये नैवेद्य का थोड़ा सा अंश स्वयं ग्रहण कर लें तथा

शेष प्रसाद को घर, पड़ौस के लोगों में वितरित करवा दें।

इस हनुमत अनुष्ठान प्रयोग के दौरान कुछ विशेष बातों का भी ध्यान रखना पड़ता है। एक तो पूरे अनुष्ठानकाल के दौरान ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें। दूसरे, इस अवधि में तामसिक आहार जैसे मांस, मछली, मदिरा, प्याज, लहसुन आदि के सेवन से दूर रहें। तीसरे, इस अनुष्ठान को लाल रंग के आसन पर बैठकर और लाल ही रंग के वस्त्र पहन कर करना होता है। अगर लाल रंग के वस्त्र पहनने में परेशानी आये तो एक लाल रंग का जनेऊ गले में धारण किया जा सकता है अथवा लाल रंग की लंगोट पहनी जा सकती है। इसके अतिरिक्त पूरे अनुष्ठान काल में भूमि पर ही सोना चाहिये।

यह हनुमत अनुष्ठान 31 दिन का है। यद्यपि इसे तीन महीने या अधिक समय तक भी जारी रखा जा सकता। पूरे अनुष्ठान के दौरान साधना का क्रम पहले दिन की भांति रखना होता है। मंदिर में प्रत्येक मंगलवार के दिन अथवा घर में प्रतिदिन हनुमान प्रतिमा को घी-सिन्दूर का चोला चढ़ायें। धूप, दीप, पुष्प, नैवेद्य से पूजा करें। तत्पश्चत् विनियोग, रक्षा कवच के बाद हवन कुण्ड में उपरोक्त मंत्र की 21 आहुतियां प्रदान करें तथा हनुमद्वडवानल स्तोत्र का अभीष्ट संख्या में पाठ करें। पाठ की समाप्ति भी पूर्ववत 21 आहुतियां, प्रार्थना एवं हनुमत आज्ञा के साथ ही करें।

इस तरह आपका यह हनुमत अनुष्ठान आगे बढ़ता रहता है। इस दौरान आपको कई तरह के अनुभव भी मिल सकते हैं। स्वप्न में आपको कई तरह की आकृतियां दिखाई पड़ सकती हैं। कई तरह के दृश्य दिखाई दे सकते हैं। कई तरह की अद्भुत एवं रोमांच पैदा करने वाली आवाजें सुनाई पड़ सकती है। अन्ततः आपका यह अनुष्ठान सम्पन्न हो जाये, तो उस दिन सवा किलो आटे का विशेष चूरमा या रोट तैयार करके हनुमानजी को प्रसाद चढ़ायें। हनुमानजी के सामने पांच घी के दीपक जलायें। हनुमान जी की प्रतिमा पर सामर्थ्य अनुसार वस्त्र चढ़ायें। अनुष्ठान उपरांत पूजा में प्रयुक्त की गई समस्त सामग्री को जल में प्रवाहित करवा दें। हनुमान जी को अर्पित किये गये ग्यारह सप्तमुखी रुद्राक्ष माला को अपने पूजास्थल में रख दें। इस रुद्राक्ष माला के अलग-अलग कार्यों के निमित्त अलग-अलग उपयोग किये जाते हैं। जैसे कि मानसिक व्याधि से पीड़ित लोगों को अनुष्ठान उपरांत यह रुद्राक्ष माला स्वयं अपने गले में धारण करनी पड़ती है, जबकि अपने परिवार, घर अथवा ऑफिस आदि पर कराये गये तांत्रोक्त प्रयोग को समाप्त करने के लिये इस रुद्राक्ष माला को मुख्यद्वार के बाहर चौखट के बाहर किसी गुप्त स्थान पर रखना होता है।

हनुमानजी का यह स्तोत्र बहुत ही अद्भुत है। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने से शारीरिक, मानसिक निरोगता को प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा भौतिक सुखों के

साथ-साथ आध्यात्मिक लक्ष्यों को भी पाया जा सकता है। अगर किसी व्यक्ति को इस अनुष्ठान को किसी कारणवश स्वयं सम्पन्न करने में किसी प्रकार की समस्या आये तो उसके स्थान पर परिवार का कोई अन्य सदस्य भी इसे सम्पन्न कर सकता है अथवा इस अनुष्ठान को सम्पन्न कराने के लिये किसी विद्वान आचार्य की मदद ली जा सकती है। यद्यपि हनुमद्वडवानल स्तोत्र के संबंध में एक विशेष बात और भी देखने में आयी है कि अगर इस स्तोत्र का नियमित पूजा-अर्चना के रूप में भी हनुमानजी के मंदिर जाकर अथवा उनकी प्रतिमा अथवा चित्र के सामने बैठ कर सात, पांच, तीन अथवा ग्यारह बार पाठ करते रहा जाये तो भी इसके चमत्कारिक लाभ साधक को प्राप्त होते रहते हैं। ऐसे साधकों को न कभी आर्थिक परेशानी का सामना करना पड़ता है और न ही उन्हें किसी प्रकार के रोग सता पाते हैं। ऐसे साधक भूत-पिशाच आदि के संताप से भी बचे रहते हैं।

विवाह कारक शिव-पार्वती अनुष्ठान

वर्तमान में एक विशेष स्थिति देखने में आ रही है। जैसे-जैसे समाज का भौतिक आधार बढ़ता जा रहा है और लोगों की आर्थिक स्थिति सुधरती जा रही है, वैसे-वैसे सुख-समृद्धि और ऐश्वर्य के साधन बढ़ते जा रहे हैं। इसके साथ यह स्थिति भी देखने में आ रही है कि जैसे-जैसे लोगों का बौद्धिक स्तर बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे ही अनेक प्रकार की सामाजिक समस्यायें सामने आती जा रही हैं। शिक्षा के प्रसार, आर्थिक स्थिति के सुधार और सुख-सम्पन्नता के साधन जुटाने के साथ-साथ परस्पर विश्वास एवं निर्भरता की कड़ी कमजोर पड़ती जा रही है। इसलिये विवाह के साथ-साथ गृहस्थ जीवन, पारिस्परिक सम्बन्धों, प्रेम, अपनत्व एवं विश्वास की भावना में भी निरन्तर गिरावट आने लगी है।

शिक्षा के प्रसार और आर्थिक स्थिति सुधरने का सबसे अधिक प्रभाव वैवाहिक संबंधों में देखा जाने लगा है। अधिकतर सम्पन्न और पढ़े-लिखे परिवारों को अब अपने बेटों या बेटियों के लिये सुयोग्य वर या वधू के लिये लम्बे समय तक प्रयास व इंतजार करना पड़ता है। उनके भावी संबंध स्थायी बने रह पायेंगे अथवा नहीं, इसका भी हमेशा संशय बना रहता है। युवाओं में स्वतंत्रता एवं निर्णय लेने की भावना के बढ़ते जाने और समाज में प्रेम विवाह का प्रचलन शुरू हो जाने के उपरांत बच्चों का विवाह कार्य सम्पन्न करना एक जटिल समस्या बनता जा रहा है। चाहे वैवाहिक कार्य के समय पर सम्पन्न न हो पाने, रिश्तों का बनते-बनते रह जाना अथवा अकारण ही बीच में रिश्ता टूट जाने के पीछे अनेक कारण जिम्मेदार हो सकते हैं, पर एक बात सर्वमान्य है कि वैवाहिक विलम्ब एक सामान्य समस्या बन गयी है। विवाह बाधा अथवा विवाह विलम्ब के पीछे कोई भी कारण क्यों न हो, तंत्र के पास उसका समाधान है। तंत्र आधारित ऐसे अनुष्ठानों को सम्पन्न करते ही अनेक बार वैवाहिक कार्य तत्काल सम्पन्न होने की स्थितियां बनने लगती हैं।

इस अध्याय में शिव-पार्वती की तांत्रोक्त उपासना पर आधारित एक अनुभूत अनुष्ठान दिया जा रहा है। यह तांत्रिक अनुष्ठान अनेक लोगों द्वारा प्रयोग किया गया है। अधिकांश अवसरों पर इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने से वांछित कामनाओं की पूर्ति अतिशीघ्र होने लगती है। जिस समस्या को दूर करने की कामना से यह अनुष्ठान किया जाता है, वह समस्या दूर होने लगती है। अगर इस तांत्रोक्त अनुष्ठान को पूर्ण भक्तिभाव एवं श्रद्धायुक्त होकर सम्पन्न किया जाये तो तीन महीनों के भीतर ही वैवाहिक कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाता है।

इस अनुष्ठान की सबस बड़ी विशेषता यह है कि इसे सम्पन्न करने के पश्चात् विवाह में आने वाली बाधायें तो दूर होती ही है, साथ ही मनवांछित जीवनसाथी भी मिलता है। विवाह में यह बात बहुत महत्त्व रखती है कि विवाह में उत्पन्न होने वाली बाधायें दूर होने के बाद जीवनसाथी कैसा मिलता है। अगर किसी अनुष्ठान को करने से एक पच्चीस-छब्बीस वर्ष की आयु वाली युवती का विवाह किसी प्रौढ़ व्यक्ति अथवा किसी विदुर से होता है तो इसका क्या औचित्य है ? विवाह हमेशा ही सात जन्मों का सम्बन्ध माना गया है, अगर किसी व्यक्ति अथवा युवती के विवाह के बाद एक जन्म का साथ भी ठीक से न चल पाये, विवाह सुख की प्राप्ति के स्थान पर जीवन अनेक प्रकार की समस्याओं से भर जाये तो इसे किस प्रकार का विवाह माना जाये, इस पर विचार किया जाना आवश्यक है। अगर जीवनसाथी मन अनुरूप मिलता है तो जीवन सुख से व्यतीत होने लगता है। जीवन में कभी किसी प्रकार की समस्या अथवा परेशानियां आती हैं तो उसका मिलजुल कर सामना करके उन पर विजय प्राप्त की जाती है। इस दृष्टि से शिव-पार्वती के इस अनुष्ठान का महत्त्व बढ़ जाता है। यह अनुष्ठान करते समय कन्या किस प्रकार का वर चाहती है, इसकी कल्पना मन ही मन करे। इसी प्रकार किसी युवक को यह अनुष्ठान करना है तो उसे भी मानसिक रूप में उस कन्या का स्मरण करना होगा जिसे वह पत्नी के रूप में प्राप्त करना चाहता है। इसमें यह विशेष ध्यान रखना आवश्यक है कि अपनी स्थिति के अनुसार ही पति अथवा पत्नी की कल्पना करें। अगर एक युवक कल्पना में किसी अभिनेत्री से विवाह की कल्पना करता है तो ऐसी कामना पूर्ण नहीं होती है। यही स्थिति कन्या के साथ भी लागू होती है। ऐसी स्थिति में कामना पूर्ण न होने का दोष अनुष्ठान के परिणामों को न दें।

शिव-पार्वती अनुष्ठान की प्रक्रिया :

इस अनुष्ठान को किसी भी सोमवार के दिन से प्रारम्भ किया जाता है। अगर वह सोमवार शुक्लपक्ष का हो तो और भी अच्छा रहता है। वैसे भी शिव और माँ पार्वती की पूजा-अर्चना का दिवस सोमवार ही है।

अगर इस अनुष्ठान को किसी प्राचीन शिव मंदिर में जाकर और वहां शिव-पार्वती का पूर्ण विधि-विधानपूर्वक पूजन करके व वहीं शिवालय में बैठकर सम्पन्न किया जाये तो इसका तत्काल प्रभाव दिखाई देने लगता है। इस अनुष्ठान के दौरान अग्रांकित मंत्र का अभीष्ट संख्या में जाप करने से विवाह बाधा संबंधी समस्त समस्याओं से सहज ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

यह अनुष्ठान तीन महीने की अवधि का है। इस दौरान साधक (कन्या अथवा युवक) को नियमित रूप से ग्यारह माला मंत्रजाप की पूरी करनी होती हैं। मंत्रजाप की इस संख्या को अपनी सामर्थ्यनुसार घटाकर पांच अथवा तीन मालाओं तक भी सीमित

किया जा सकता है।

इस अनुष्ठान को किसी भी शिव मंदिर में करने से फल की प्राप्ति शीघ्र होने के बारे में कहा गया है किन्तु वर्तमान में अपने आस-पास ऐसा कोई शिव मंदिर अथवा शिवालय मिल पाना कठिन लगता है जहां बैठकर यह अनुष्ठान सम्पन्न किया जा सके। जिन्हें यह सुविधा प्राप्त है वह अवश्य शिव मंदिर में इस अनुष्ठान को सम्पन्न कर सकते हैं अन्यथा इसे घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इसके लिये आपको नमर्देश्वर शिवलिंग की आवश्यकता होगी। नर्मदेश्वर शिवलिंग को प्राण-प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता नहीं होती है। पूजा में इन्हें सीधे ही स्थान दिया जाता है। इसके लिये सामर्थ्य अनुसार पीतल, ताम्बे अथवा चांदी का स्टेण्ड चाहिये, जिस पर शिवलिंग को स्थापित किया जा सके। घर में जिस स्थान पर आपको अनुष्ठान सम्पन्न करना है, उस स्थान को गोबर से लीप कर अथवा गोबर के अभाव में गंगाजल छिड़क कर स्थान शुद्धि करें। उस पर एक लकड़ी की चौकी रखें, उस पर शिवलिंग को स्थापित कर लें। इसके बाद की सम्पूर्ण प्रक्रिया वैसी ही रहेगी जैसी आगे बताई जा रही है।

इस अनुष्ठान की प्रक्रिया इस प्रकार है-

यह अनुष्ठान सोमवार के दिन से शुरू करना है और निरन्तर तीन महीने तक जारी रखना है। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये शिव-पार्वती पूजनार्थ काले तिल, शतावरी की फली, कमल दाने (फूल डोडा), श्वेत आक के पुष्प, नागकेशर, तीन सप्तमुखी रुद्राक्ष, एक लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला, घी का दीपक, गुग्गुल युक्त धूप, जनेऊ, चुन्दरी एवं कुमकुम आदि की आवश्यकता होती है। अतः अनुष्ठान की शुरूआत करने से पहले उक्त समस्त सामग्रियों को एकत्रित करके रख लें।

जिस सोमवार के दिन से इस अनुष्ठान को शुरू करना हो, उस दिन सबसे पहले प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व नहा-धोकर तैयार हो जायें। स्वच्छ, श्वेत रंग के वस्त्र पहन लें। इसके पश्चात् एक गिलास कच्चा दूध में थोड़े से काले तिल, कमल दाने, श्वेत आक पुष्प, शतावरी, नागकेशर आदि को डालकर व अन्य पूजा सामग्री लेकर शिव मंदिर चले जायें। जो साधक यह अनुष्ठान मंदिर की अपेक्षा अपने घर पर ही सम्पन्न करना चाहते हैं, तो पूर्व में बताये अनुसार अनुष्ठान की तैयारी कर लें। शेष विधि यही रहेगी। शिवलिंग के सामने उत्तराभिमुख होकर बैठ जायें। अपने बैठने के लिये कम्बल का आसन अथवा कुशा आसन का प्रयोग करें।

सबसे पहले शिवलिंग को काले तिल युक्त व अन्य सामग्री युक्त दूध से स्नान करायें, फिर उन्हें शुद्ध जल से स्नान कराकर जनेऊ समर्पित करें। कुंकुम का टीका लगायें तथा रुद्राक्ष को जल से धोकर अग्रांकित मंत्र का उच्चारण करते हुये शिवलिंग पर अर्पित

कर दें। रुद्राक्ष को अर्पित करने का मंत्र अग्रांकित प्रकार से है-

मंत्र- **ॐ सकल दोष निवारणाय शिव पार्वतीय नमः।**

रुद्राक्ष अर्पित करने के पश्चात् शिव को आक पुष्प चढ़ावें। उन्हें पुष्पमाला व मौसमी फल अर्पित करें और अन्त में घी का दीपक जलाकर उनके सामने रख दें। इसके पश्चात् माँ पार्वती को दूध व जल से विधिवत स्नान करायें। तत्पश्चात् उन्हें कुंकुम का टीका लगाकर चुन्दरी चढ़ावें। उन्हें भी पुष्पमाला अर्पित करें।

यह शिव-पार्वती की संक्षिप्त पूजा का क्रम है। इस संक्षिप्त पूजा के पश्चात् कम्बल या कुशा आसन पर बैठकर शिव व माँ पार्वती से अपनी प्रार्थना करें। उनसे शीघ्रताशीघ्र विवाह बाधा का निवारण करके विवाह कार्य सम्पन्न कराने का अनुरोध करें। अन्त में उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करके उनके अग्रांकित मंत्र का रुद्राक्ष माला से जप पूर्ण कर लें। इस अनुष्ठान के लिये अग्रांकित मंत्र का ग्यारह माला मंत्रजाप करने का विधान है। इसकी संख्या को अपनी सुविधानुसार भी व्यवस्थित किया जा सकता है।

शिव-पार्वती मंत्र इस प्रकार है-

हे गौरि शंकरार्द्धांगि यथा त्वं शंकर प्रिय

तथा मां कुरू कल्याणि कांत कांता सुदुर्लभाम्॥

यह मंत्रजाप पंचमुखी लघु रुद्राक्ष माला के ऊपर सम्पन्न किया जाता है। जब आपका अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप पूर्ण जो जाये तो घी के दीपक के द्वारा शिव-पार्वती की ग्यारह-ग्यारह बार आरती उतार लें। तत्पश्चात् एक बार पुनः पूर्ण भक्तिभाव एवं श्रद्धायुक्त होकर अपनी प्रार्थना को दोहरा लें। आसन से उठने से पहले शिव की आज्ञा प्राप्त कर लें। एकाएक बिना आराध्य देवी की आज्ञा लिये आसन से उठ जाना, समस्त किये गये कर्म को व्यर्थ कर डालता है।

आसन से उठते समय शिव को अर्पित किए गये तीनों रुद्राक्ष को भी प्रसाद स्वरूप उठा लें तथा अपने साथ अपने घर ले आयें। घर आकर इन तीनों रुद्राक्ष को शुद्धता के साथ अपने पूजास्थल में किसी तांबे अथवा स्टील की प्लेट में रख दें। रात्रि के समय घर पर इनके सामने एक घी का दीपक जलाकर रख दिया करें।

प्रथम सोमवार के दिन अगर उपवास रखा जाये, तो अति उत्तम रहता है। यद्यपि व्रत के दौरान फल, दूध का सेवन किया जा सकता है किन्तु इस दौरान नमक का सेवन न करें। इसके अलावा अपने विचारों को शुद्धतम बनाये रखें। अनुष्ठान सम्पन्न होने तक भूमि शयन करें।

शिव-पार्वती के इस पूजा-अर्चना एवं मंत्रजाप के क्रम को निरन्तर तीन महीने तक इसी प्रकार से बनाये रखें।

निरन्तर तीन महीने तक, प्रत्येक दिन प्रातःकाल नहा-धोकर व स्वच्छ वस्त्र पहन कर, समस्त पूजा-सामग्री के साथ शिव मंदिर जायें अथवा यदि अनुष्ठान घर पर कर रहे हैं तो पूजास्थल पर पूर्वानुसार स्थान ग्रहण करें, साथ में तीनों शिवांक्षी रुद्राक्षों को भी ले जायें। शिवालय में पूजा की सम्पूर्ण प्रक्रिया प्रथम दिन की भांति ही रखनी पड़ती है। सबसे पहले शिव को स्नान करायें (कन्याओं का शिव की जगह पार्वती की सर्वप्रथम पूजा-अर्चना करनी पड़ती है), उन्हें कुंकुम, चंदन अर्पित करें व पुष्प चढ़ायें। धूप, दीप प्रदान करें। तत्पश्चात् प्रथम दिन की भांति अपनी प्रार्थना को दोहराते हुये उनकी आज्ञा प्राप्त करके, पूर्ण एकाग्रचित्त होकर अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप पूर्ण कर लें। प्रथम सोमवार के अतिरिक्त जनेऊ और चुनरी चढ़ाना अनिवार्य नहीं है, लेकिन तीनों रुद्राक्षों की प्रत्येक दिन घर से लाकर एवं पानी अथवा गंगाजल से पवित्र करके उपरोक्त मंत्र के उच्चारण के साथ शिवलिंग पर चढ़ाना अनिवार्य होता है। इसी प्रकार प्रत्येक सोमवार के दिन उपवास रखा जा सकता है।

इस अनुष्ठान की तीन माह की अवधि तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना तथा अपने में सात्विक भावना को बनाये रखना अनिवार्य होता है। इस अनुष्ठान अवधि में मांस, मछली, मदिरा आदि के सेवन से दूर रहना चाहिये। शिव-पार्वती का यह अनुष्ठान शुद्ध वैष्णव सिद्धान्त पर आधारित है।

अगर इस अनुष्ठान को शिव मंदिर में बैठकर सम्पन्न करना आपके लिये कठिन प्रतीत हो तो इस अनुष्ठान का घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है। घर पर इस अनुष्ठान को करने के लिये सबसे पहले घर के किसी कक्ष अथवा पूजा स्थल को धौ-पौंछ कर स्वच्छ करना होता है तथा अन्य पूजा सामग्री के साथ एक **वट मूल निर्मित शिवलिंग** अथवा **नमर्देश्वर शिवलिंग** की आवश्यकता होती है। इस वटमूल निर्मित शिवलिंग अथवा नमर्देश्वर शिवलिंग को सबसे पहले किसी रजतपत्र अथवा ताम्रपात्र के ऊपर स्थापित कर उसकी विधिवत पूजा-अर्चना करनी होती है। शिवलिंग के साथ सुपारी के रूप में पार्वती की स्थापना भी उनके वाम अंग में करनी चाहिये। इसके पश्चात् शिव-पार्वती, दोनों की विधिवत पूजा-उपासना करके अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप सम्पन्न करना चाहिये।

90वें दिन यह अनुष्ठान पूर्णता के साथ सम्पन्न हो जाता है। अतः इस अन्तिम दिन पूजा के क्रम में एक बार पुनः शिवलिंग पर जनेऊ के साथ शिवांक्षी रुद्राक्षों को मंत्रोच्चार के साथ चढ़ाना होता है, लेकिन अनुष्ठान की समाप्ति के बाद इन्हें वापिस घर नहीं लायें। माँ पार्वती को भी अनुष्ठान के अन्तिम दिन एक बार पुनः चुनरी चढ़ानी होती है तथा श्रृंगार की अन्य वस्तुयें जैसे बिन्दी, सिन्दूर, चूड़ियां, लिपिस्टक आदि (अगर यह अनुष्ठान कन्या के द्वारा सम्पन्न किया जा रहा है) भी चढ़ानी होती है।

इसके अतिरिक्त अनुष्ठान के अन्तिम दिन कम से कम तीन माला अतिरिक्त मंत्रजाप

करने होते हैं। उस दिन स्वयं उपवास रखकर पांच कन्याओं को स्वादिष्ट भोजन कराकर दान-दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिये। इस प्रकार यह अनुष्ठान सम्पूर्ण हो जाता है।

अगर इस अनुष्ठान को घर पर रहकर ही सम्पन्न किया गया है तो अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात्, अगले दिन समस्त पूजा-सामग्रियों को एकत्रित करके एक श्वेत व नये वस्त्र में बांधकर किसी पीपल के वृक्ष पर रख देना चाहिये अथवा बहते हुये पानी में प्रवाहित कर देना चाहिये।

इस शिव-पार्वती अनुष्ठान के दौरान अक्सर देखने में आया है कि इस अनुष्ठान को पूर्ण विधि-विधान से जारी रखने पर अधिकतर लड़के-लड़कियों के लिये दो से तीन महीनों के मध्य ही उनको मनोनुकल रिश्ता मिल जाता है।

वैवाहिक विलम्ब और तांत्रिक समाधान

हमारी वैदिक संस्कृति में जीवन को चार भागों अर्थात् चार पड़ावों में विभाजित किया गया है। जीवन के यह चार पड़ाव हैं- ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और संन्यास। जीवन का जो पूर्वार्द्ध है, वह मुख्यतः शरीर को साधने, तराशने, स्वास्थ्य रक्षा तथा जीवन को ठीक से व्यवस्थित करने का काल है। इसी अवधि में संचित किए गए ज्ञान और सामर्थ्य पर सम्पूर्ण जीवन की आशारशिला रखी जाती है। जीवन में इस अवधि का सर्वाधिक महत्व है। इस अवधि को ब्रह्मचर्य का नाम प्रदान किया गया है।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है **ब्रह्म** जैसा अर्थात् विद्वतता पूर्ण आचरण करना। इस ब्रह्मचर्य का हमारे जीवन में कितना महत्व है, इस बात का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि प्राचीन समय के सभी धर्मों, सभी सम्प्रदायों में इसे महत्वपूर्ण माना गया। हमारे सभी शास्त्रों, योग, आयुर्वेद से लेकर धर्मशास्त्र तक में ब्रह्मचर्य की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए इस आचरण को **धर्मरक्षा** की संज्ञा प्रदान की गई है। प्राचीन समय से ही यह मान्यता रही है कि अगर जीवन के प्रारम्भिक काल में ब्रह्मचर्य का ठीक से पालन किया जाए तो उसका प्रभाव शारीरिक स्वास्थ्य पर ही नहीं पड़ता, बल्कि इससे गृहस्थाश्रम से लेकर वृद्धावस्था तक का समस्त सुख नष्ट होने लगते हैं। इससे शारीरिक स्वास्थ्य एवं पौरुषता में गिरावट आती है, शरीर व्याधियों का घर बन जाता है। ऐसे लोगों की वृद्धावस्था दुःखमय व्यतीत होती है।

जीवन का जो दूसरा पड़ाव है, उस पर समाज रूपी भवन का उत्तरदायित्व रहता है। इसी काल में युवक और युवतियां वैवाहिक गठबंधन में बंधकर परिवार, समाज की श्रृंखला को आगे बढ़ाते हैं तथा संतानोत्पत्ति करके नये जीवन को जन्म देते हैं। जीवन की यह अवधि भी महत्वपूर्ण है। इस अवधि में स्त्री और पुरुष विभिन्न तरह की भूमिकाएं निभाकर अनेक प्रकार के काम-धन्धों, व्यापार, राजनीति आदि करके स्वयं अपने परिवार के साथ-साथ समाज और देश की सेवा करते हैं। जो कुछ भी ज्ञान उन्होंने ब्रह्मचर्य के दौरान ग्रहण किया था, उसको उपयोग में लाने का यही समय होता है।

जीवन के अगले दोनों पड़ाव, वानप्रस्थ और संन्यास आज के समय में अपनी उपयोगिता गंवा चुके हैं, यद्यपि प्राचीन समय में इनको विशेष महत्व प्राप्त था। वानप्रस्थ में व्यक्ति व्यक्तिगत स्वार्थों एवं घर-परिवार की जिम्मेदारियों से ऊपर उठकर सामाजिक उन्नति के कार्य में हाथ बंटाता था। उसकी सोच परिवार से उठकर विस्तृत समाज के लिये कार्य करने की बनती चली जाती थी। संन्यास की अवधि में तो व्यक्ति समाज से भी

ऊपर उठकर आध्यात्मिक पथ का अनुगामी बन जाता था।

इस तरह निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि जीवन में गृहस्थाश्रम का अपना विशेष स्थान है। गृहस्थाश्रम को इकाई के रूप में अलग-अलग परिवारों से सम्बन्धित लड़के और लड़कियां वैवाहिक बंधन में बंध कर एक नये जीवन की शुरूआत करते हैं। विवाह का कितना महत्व है, इसके विषय में मनुस्मृति में एक जगह उल्लेख आया है।

स्मृतिकार लिखता है कि जिस प्रकार समस्त जीव-जन्तु अपने जीवन के लिए प्राणवायु पर आश्रित हैं, उसी प्रकार समस्त आश्रम, गृहस्थाश्रम पर आधारित हैं, क्योंकि गृहस्थ ज्ञान तथा गृहस्थियों के अन्न से ही तीनों आश्रमों का कार्य चलता है। अत: गृहस्थाश्रम तीनों आश्रमों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ है।

प्राचीन समय से लेकर आज तक सभी समाजों में सभी माता-पिता अपने वयस्क हो चुके पुत्र-पुत्रियों को वैवाहिक सूत्र में बांधकर अपने कर्त्तव्य से उऋण हो जाना चाहते हैं। अधिकांश सम्प्रदायों में वैवाहिक सूत्र में बांधने की कन्याओं की सही उम्र 16 से 18 वर्ष और युवकों के लिए 18 से 20 वर्ष के आसपास निर्धारित की है। आज ऐसा देखने में आ रहा है कि जैसे-जैसे समाज का बौद्धिक स्तर विकसित होता जा रहा है तथा जीवन के मापदण्ड बदलते जा रहे हैं, गृहस्थाश्रम संबंधी जिम्मेदारियां रूपान्तरित हो रही है, वैसे-वैसे विवाह के अर्थ और विवाह के लिए निर्धारित की गयी उम्र भी परिवर्तित होती जा रही हैं। अधिकांश वयस्क अब जीवन में ठीक से स्थाइत्व प्राप्त कर लेने के बाद ही वैवाहिक सूत्र में बंधना पसंद करने लगे हैं। इस कारण माता-पिता के सामने भी कई तरह की समस्यायें आने लगी हैं। वैवाहिक विलम्ब की समस्या अब आम बात बनती जा रही है।

विवाह बाधा निवारक कुछ प्रमुख उपाय

जीवन के जो भी आवश्यक दायित्व हैं, जिनका निर्वाह करना सभी के लिये अत्यन्त आवश्यक समझा जाता है, अगर वह बिना किसी प्रकार की बाधा के सम्पन्न हो जाते हैं तो यह व्यक्ति के लिये अत्यन्त सौभाग्य की बात समझी जाती है। इसका कारण यह है कि किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पहले अथवा प्रारम्भ करते ही व्यक्ति के मन में अनेक प्रकार की आशंकायें घर करने लगती हैं कि कहीं किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न न हो जाये। इसका कारण यह है कि हमने स्वयं ही अपने आचरण, व्यवहार और मानसिकता के द्वारा ऐसे असंख्य अवरोध उत्पन्न कर रखे हैं जिनका अक्सर ही सामना करना पड़ सकता है। इसीलिये मन में कार्य की सफलता को लेकर शंका का उत्पन्न होना गलत नहीं है। उपरोक्त स्थिति से विवाह सम्बन्ध भी अछूते नहीं रह गये हैं। वर्तमान में लड़के तथा लड़की की माता-पिता के द्वारा अथवा लड़की-लड़के द्वारा अनेक प्रकार के

व्यवधानों की भूमिका तैयार रखी रहती है। कहीं दहेज की समस्या है तो कहीं अन्य लेन-देन की, कहीं लड़की को लड़का पसंद नहीं तो कहीं लड़के को लड़की पसंद नहीं है। इन्हीं अवरोधों के बीच विवाह के सम्बन्ध के प्रयास निरन्तर चलते रहते हैं। इसलिये कभी रिश्ते बनते हैं तो कभी टूट जाते हैं। कभी-कभी तो यह सम्बन्ध, विवाह के निश्चित दिन से कुछ दिन पहले ही टूट जाते हैं। ऐसी स्थितियों में परिवार के बड़े-छोटे सभी सदस्यों को मानसिक सन्ताप का सामना करना पड़ जाता है। ऐसी स्थितियां उत्पन्न न होने पायें, इसके लिये अनेक प्रकार के प्रयास एवं उपाय भी किये जाते हैं।

वैवाहिक बाधाओं से मुक्ति पाने के लिए हमारे ऋषि-मुनियों ने बहुत काम किया है। तंत्रशास्त्र और अन्य ग्रंथों में अनेक ऐसे उपायों एवं अनुष्ठानों का उल्लेख किया गया है, जिन्हें विधिवत् सम्पन्न कर लेने से इस प्रकार की बाधाएं दूर हो जाती हैं। इन प्रयोगों के प्रभाव से विवाह जैसे मांगलिक कार्य शीघ्र ही सम्पन्न हो जाते हैं। विवाह बाधा के लिए चाहे कोई भी स्थितियां जिम्मेदार हों, कन्या अथवा पुत्र के जन्मांग में कितने भी प्रतिकूल दोष क्यों न बने हुए हों, इन तांत्रोक्त प्रयोगों से शीघ्र ही वैवाहिक बाधाएं दूर होती जाती हैं।

आगे ऐसे ही कुछ विवाह बाधा निवारक प्रयोमों का वर्णन किया जा रहा है। इस प्रयोगों को अनेक बार अलग-अलग लोगों ने सम्पन्न किया है और सभी ने इनके चमत्कारिक प्रभावों को अनुभव किया है। यह तांत्रोक्त प्रयोग सदियों पहले महान ऋषियों के द्वारा खोजे गए हैं। उसी ऋषि परम्परा से सम्बन्धित सिद्ध पुरुषों द्वारा इन्हें समय-समय पर प्रकट किया जाता रहा है। विवाह बाधा निवारणार्थ कुछ प्रभावशाली तांत्रोक्त प्रयोग निम्न प्रकार हैं:-

कन्या विवाह बाधा निवारक उपाय नं. 1 :

सभी माता-पिता का यह प्रयास रहता है कि उनकी बेटी का विवाह समय पर, अच्छे वर के साथ और किसी अच्छे परिवार में हो जाये ताकि उसका भावी जीवन सुख के साथ व्यतीत हो। इस दृष्टि से ऐसा देखने में आया है कि अधिकांश कन्याओं में किसी न किसी प्रकार के अवरोध उत्पन्न होते रहते हैं। सोलह-सत्रह-अट्ठारह साल की आयु में जब बेटी के लिये घर और वर की तलाश की जाने लगती है तो माता-पिता को ऐसा लगता है कि सभी कार्य ठीक से सम्पन्न हो जायेंगे। अगर ऐसा हो जाता है तो वे अपने भाग्य की प्रशंसा करते हैं और ईश्वर को धन्यवाद देते हैं। जहां ऐसा नहीं हो पाता, वहां कन्या के माता-पिता पर भारी समस्यायें आने लगती हैं। दिन पर दिन जब निकलने लगते हैं और कन्या की उम्र में पहले महीन और फिर साल जब जुड़ने लगते हैं तो माता-पिता की व्याकुलता भी उसी अनुपात में बढ़ने लगती है। ऐसी स्थितियां आज ही देखने को मिल रही हैं और पहले ऐसा नहीं था, ऐसी बात नहीं है। विवाह में अवरोध पहले भी आते थे। इसलिये इन अवरोधों को दूर करने के लिये अनेक प्रकार के उपायों का उल्लेख अनेक शास्त्रों में प्राप्त होता है। यहां लड़की एवं लड़के, दोनों के विवाह में आने वाले

अवरोधों को दूर करने के उपाय बताये जा रहे हैं। पहले कन्या के विवाह में उत्पन्न होने वाली बाधाओं को दूर करने करने के उपाय बता रहा हूं-

इस तांत्रोक्त अनुष्ठान को किसी भी शुभ मुहूर्त से शुरू किया जा सकता है अथवा किसी भी शुक्लपक्ष के प्रथम बुधवार से भी शुरू किया जा सकता है। अगर इस अनुष्ठान को किसी शिव मंदिर में माँ-पार्वती के सामने बैठकर सम्पन्न किया जाए तो और भी उत्तम रहता है अन्यथा इस अनुष्ठान को घर पर बैठकर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इस अनुष्ठान के दौरान साधिका को पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख होकर कम्बल के आसन पर बैठना पड़ता है।

जिस दिन से इस अनुष्ठान को शुरू करना हो, उस दिन प्रातःकाल थोड़ा जल्दी उठकर नहा-धोकर एवं स्वच्छ वस्त्र पहन कर तैयार हो जाएं। बालों को खुला रखें। फिर शिव मंदिर अथवा अपने पूजाकक्ष में जाकर आसन पर बैठ जाएं। अपने सामने लकड़ी भी एक चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर एक चांदी की प्लेट अथवा अथवा कोरा मिट्टी का पात्र रखकर उनमें घिसे रक्तचंदन एवं अनार अथवा चमेली की कलम से एक स्वस्तिक बना दें। स्वस्तिक के ऊपर शुद्ध मिट्टी अथवा चांदी निर्मित गणेश प्रतिमा को स्वच्छ करके स्थापित कर दें।

इसके पश्चात् गणेश जी की विधिवत् पूर्जा अर्चना करें। उन्हें केसर का टीका लगाएं। अक्षत, मौली, पुष्पमाला अर्पित करें। **ॐ गं गणपतये नमः** मंत्र के उच्चारण के साथ 108 बार 108 दूर्वा घास के पत्ते जल से धोकर चढ़ाएं। घी का दीप जलाकर गणेश जी के सामने रख दें। तत्पश्चात् कपूर की आरती उतारें एवं गणेश जी को तीन ग्यारह मुखी रुद्राक्ष धारण करायें। ग्यारह मुखी रुद्राक्ष स्वयं साक्षात एकादश रुद्र के प्रतीक हैं। एकादश रुद्र भैरव को माना जाता है। भैरव स्वयं ही विघ्न विनाशक हैं। कलियुग में सर्वत्र भैरव का साम्राज्य देखा जाता है। इसलिये एकादश रुद्राक्ष के प्रभाव से सुख-समृद्धि की सहज ही प्राप्ति हो जाती है तथा सौभाग्य में वृद्धि होती है। गणपति को समर्पित किए गए रुद्राक्षों को धारण करने से भाग्य में चमत्कारिक परिवर्तन आने लगता है।

रुद्राक्ष धारण कराने के पश्चात् घी का एक दीपक जलाकर श्री गणेश जी सामने रखें। माँ पार्वती की अनेक प्रकार की श्रृंगार सामग्रियों जैसे रौली, कुंकुम, बिन्दी, चूड़ियां, काजल, चुनरी, पुष्प, धूप, सुगन्ध, फल, नैवेद्य आदि से पूजा करें। अगर यह अनुष्ठान शिवालय में सम्पन्न किया जा रहा है तो सीधे ही पार्वती प्रतिमा की पूजा करते हुए उनका श्रृंगार करें। माँ के सिर पर चुनरी चढ़ायें। माँ से प्रार्थना करें तथा उनकी आज्ञा प्राप्त करके माँ के सामने बैठकर ही निम्न मंत्र की पांच माला जाप पूरा कर लें।

मंत्र इस प्रकार है-

ॐ ह्रीं सः महागौरी रुद्रदयिते स्वाहा गौर्यै नमः, ॐ ह्रीं गौर्यै नमः।

मंत्रजाप सम्पन्न हो जाने पर माँ से आज्ञा प्राप्त करके नैवेद्य को वहीं लोगों में वितरित करवा दें। मंदिर में अनुष्ठान सम्पन्न करते समय मंत्रजाप के पश्चात् गणेश जी को अर्पित किए रुद्राक्ष की माला को घर ले आयें। मंत्रजाप की पूरी अवधि में घी का दीपक जलते रहना चाहिये। अगर साधिका के लिए संभव हो पाए तो प्रत्येक बुधवार के दिन व्रत रखना चाहिये। अगर किसी कारण से इस अनुष्ठान को स्वयं कन्या न कर सके तो उसका संकल्प लेकर उसके माता-पिता में से कोई अथवा घर का कोई अन्य सदस्य भी इसे सम्पन्न कर सकता है। इसी तरह मासिक चक्र के दौरान इस अनुष्ठान को रोक देना चाहिये। यद्यपि उस दिन साधिका की जगह कोई अन्य सदस्य अनुष्ठान को जारी रख सके तो ठीक रहता है।

इस अनुष्ठान को निरन्तर 21 बुधवार तक इसी तरह से जारी रखना पड़ता है, जबकि सप्ताह के अन्य दिनों में शिव मंदिर जाकर जल से स्नान कराकर पुष्प, धूप, दीप, फल आदि चढ़ाकर 108 बार मंत्रजाप करना ही पर्याप्त होता है। घर पर भी पूजाकक्ष में बैठकर इसी क्रम से 108 बार मंत्रजाप किए जा सकते हैं।

देखने में ऐसा आया है कि 21 बुधवार तक इस अनुष्ठान को जारी रखने पर प्रायः सभी कन्याओं की विवाह संबंधी बाधाएं दूर होने लग जाती हैं और उनके वैवाहिक संयोग की पृष्ठभूमि निर्मित हो जाती है। इस तांत्रोक्त अनुष्ठान के प्रभाव से 34 से 36 वर्ष से भी अधिक उम्र की युवतियों के विवाह सम्पन्न हुये हैं।

जिस दिन यह अनुष्ठान सम्पन्न हो जाए, उस दिन तीन छोटी कन्याओं को खाना खिलाना खिलायें। उन्हें वस्त्र, दक्षिणा आदि देकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करें। अनुष्ठान में प्रयुक्त की गई समस्त पूजा सामग्री को किसी नये वस्त्र में बांधकर नदी या तालाब में प्रवाहित कर दें अथवा पीपल वृक्ष की जड़ में रख दें। इस अनुष्ठान में मंत्रजाप के लिए लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला अथवा मूंगा माला का प्रयोग किया जाता है।

कन्या विवाह बाधा निवारक उपाय नं. 2 :

कन्याओं का शीघ्र विवाह सम्पन्न कराने के लिए तांत्रोक्त अनुष्ठान भी बहुत चमत्कारिक सिद्ध होता है। इस तांत्रिक अनुष्ठान को किसी भी शुभ मुहूर्त से अथवा दीपावली, होली, दशहरा, अमावस्या जैसे विशेष दिन से भी प्रारम्भ किया जा सकता है। बृहस्पति का दिन इस अनुष्ठान के लिए उत्तम माना जाता है।

इस तांत्रोक्त अनुष्ठान में सबसे पहले एक भोजपत्र पर अष्टगंध से अनार या चमेली की कलम से अग्रांकित यंत्र को निर्मित करना होता है और फिर उसका विधिवत् पूजन करके उसे स्थापित करना होता है। इस अनुष्ठान में पीताम्बरा देवी का यंत्र या चित्र भी विशेष तौर पर प्रयुक्त किया जाता है।

अष्टगंध की स्याही तैयार करने के लिए चन्दन, अगर, तगर, कुंकुम, गोरोचन, कूठ, कपूर, जटामांसी आदि गंधों की आवश्यकता पड़ती है, जिन्हें बारी-बारी से चन्दन के साथ घिस कर लेप तैयार किया जाता है। इसके अलावा भोजपत्र पर यंत्र निर्माण के लिए सबसे पहले आड़ी रेखाएं और फिर खड़ी रेखाएं खींच कर एक आयताकार आकृति में नौ कोष्ठक बनाये जाते हैं। उन कोष्ठकों में फिर क्रमशः 1, 2, 9, 6, 7, 3, 4, 8, 5 नम्बरों को लिखा जाता है। अनुष्ठान में प्रयुक्त किया जाने वाला यंत्र अग्रांकित रूप से निर्मित होता है-

ॐ क्लीं पीताम्बरा देव्यै नमः

(कुमारी कन्या का नाम लिखें)

६	१	८
७	५	३
२	९	४

जहां आपने यह उपाय सम्पन्न करना है, उस स्थान को गोबर से लीप कर अथवा गंगाजल से शुद्ध कर लें। फिर उस स्थान पर लकड़ी की एक चौकी अर्थात् बाजोट रखें। उस पर एक मीटर पीले नये वस्त्र को चार तह करके चौकी के ऊपर बिछा दें। तत्पश्चात् उसके ऊपर हल्दी और आटे के मिश्रण से एक वर्गाकार आकृति निर्मित करें, जिसके अन्दर तीन आड़ी और तीन तिरछी लाइनों से नौ वर्ग बनायें। इसके बीच में हल्दी से ही ॐ लिख कर उसके ऊपर एक अन्य पीले रंग का वस्त्र बिछा दें।

चौकी पर एक चांदी अथवा तांबे की स्वच्छ प्लेट रखकर उसमें भोजपत्र पर निर्मित यंत्र को रखें। यंत्र की विधिवत षोडशोपचार पूजा करें। यंत्र पर **ॐ क्लीं पीताम्बरा दैव्यै नमः** मंत्र के उच्चारण के साथ क्रमशः पीली मौली, पीले अक्षत, पीले पुष्प, धूप, दीप अर्पित करें। यंत्र पर एक लघु श्रीफल भी अर्पित करें। पूजनोपरान्त यंत्र पर छः सुपारी, छः हल्दी की गांठ, गुड़ की छः डलियां, छः केसर के रंगे हुए यज्ञोपवीत, 70 ग्राम चने की दाल, छः केसर के रंगे हुए सिक्के चढ़ा दें।

अब चौकी के सामने बैठकर तीन माला अग्रांकित मंत्र की लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला अथवा मूंगा माला की मदद से मंत्रजाप करें:-

मनवांछित वरं देहि वरं देहि श्रीं ॐ गौरा पार्वती नमः

इस सम्पूर्ण अवधि में शुद्धता का भाव बनाये रखें। 41वें दिन यंत्र सहित सम्पूर्ण समाग्री को एक पीले रंग के रेशमी वस्त्र में बांध कर घर के किसी एकान्त स्थान पर रख

देना चाहिये। पोटली रखने का स्थान ऐसा हो, जिस पर किसी अजनबी की नजर न पड़े। सामान्यत: इस तांत्रिक अनुष्ठान के प्रभाव से तीन-चार महीने के भीतर ही कन्या का विवाह कार्य सम्पन्न हो जाता है। जब अभीष्ट कार्य सम्पन्न हो जाए तो पांच कन्याओं को भोजन करवा कर, घर में रखी पोटली को पानी में प्रवाहित कर देना चाहिये।

इस तांत्रिक प्रयोग के सम्बन्ध में कुछ खास बातें ठीक से समझ लेनी चाहिये। इस प्रयोग को उसी कन्या द्वारा ही पूर्ण आस्था एवं शुद्धता के साथ सम्पन्न किया जाए जिसका विवाह होना है। प्रत्येक अभीष्ट कार्य के लिए इस अनुष्ठान को नये सिर से सम्पन्न किया जाए। किसी भी तरह के अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिए सदैव नवीन चीजें ही प्रयोग की जायें।

पुरुषों के लिए विवाह बाधा निवारक प्रयोग :

आज के समय में कन्याओं के माता-पिता को ही नहीं, बल्कि पढ़े-लिखे, नौकरी करने वाले युवकों के माता-पिता को भी अपने पुत्रों के विवाह के मामले में परेशान होना पड़ रहा है। बहुत से युवकों का बड़े प्रयास के उपरांत लम्बे समय तक विवाह सम्पन्न नहीं हो पाता। पढ़े-लिखे और अच्छी नौकरी अथवा व्यवसाय होने के उपरान्त भी ऐसे युवकों को 35-40 वर्ष तक भी कुंवारेपन का सामना करना पड़ता है।

युवकों के वैवाहिक विलम्ब के पीछे भी लगभग वैसे ही कारण जिम्मेदार देखे जाते हैं, जैसे कि कन्याओं के मामले में पाये जाते हैं लेकिन इनके मामले में भी यह देखा गया है कि कुछ विशिष्ट तांत्रोक्त उपायों के प्रयोगों से विवाह बाधा की समस्या दूर हो जाती है तथा शीघ्र ही घर में मांगलिक कार्य सम्पन्न होने की आशा बन जाती है। विवाह बाधा निवारक एक ऐसा ही तांत्रोक्त प्रयोग निम्न प्रकार है-

इस तांत्रोक्त अनुष्ठान को किसी भी कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि के दिन से शुरू किया जा सकता है। यह अनुष्ठान भी कुल 41 दिन का है। अनुष्ठान के सम्पन्न होते-होते लड़के के रिश्ते के बारे में रुकी हुई बात फिर से होने लग जाती है।

अगर इस अनुष्ठान को किसी देवी मंदिर में बैठकर अथवा शिवालय में बैठकर सम्पन्न किया जा सके, तो इसका परिणाम शीघ्र ही मिलता है। इस अनुष्ठान को घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है।

इस अनुष्ठान की सबसे मुख्य बात यह है कि मंदिर जाकर देवी प्रतिमा अथवा शिव-पार्वती को अष्टगंध युक्त टीका लगाकर उनका अक्षत, पुष्पमाला, धूप, दीप, कपूर से पूजन करें। सामर्थ्य हो तो देवी प्रतिमा को वस्त्र अर्पित करें अन्यथा उन पर चुनरी चढ़ायें। गुड़ का नैवेद्य लगाकर किसी गाय को खिला दें।

घर पर अनुष्ठान को सम्पन्न करते समय अपने पूजास्थल पर घट की स्थापना करें।

घट पर श्रीफल की स्थापना करें। श्रीफल को चुनरी चढ़ायें तथा उसके सामने घी का दीपक जलाकर मन ही मन माँ के सामने प्रार्थना करें तथा शीघ्र गृहस्थ का सुख प्रदान कराने का अनुरोध करें। तत्पश्चात निम्न मंत्र की तीन मालाएं अथवा एक माला जाप करें:-

मंत्र- **स देवि नित्यं परितप्यमान, स्त्वामेव सीतेत्यभिभाषमाणः।**
दृढ़ व्रतो राज सुतो महात्मा, तवैव लाभाय कृत प्रयत्नः॥

यह वाल्मीक रामायण का मंत्र है जो अत्यन्त अद्‌भुत और प्रभावशाली है। मंत्रजाप के दौरान अखण्ड घी का दीपक जलते रहना चाहिये। मंत्रजाप स्वयं अपने मस्तक पर अष्टगंध का लेप लगाकर करना चाहिये। श्रीफल को भी प्रतिदिन अष्टगंध का लेप करना चाहिये।

यह तांत्रिक अनुष्ठान 41वें दिन पूर्ण हो जाता है। अतः उस दिन मंत्रजाप सम्पन्न होने के पश्चात् सम्पूर्ण पूजा समाग्री को किसी नदी में प्रवाहित कर देना चाहिये अथवा भूमि में गड्ढा खोद कर दबा देना चाहिये। अनुष्ठान उपरांत स्वयं अपने मस्तक पर अष्टगंध का टीका लगाकर रखना चाहिये। इसके प्रयोग से साधक में सम्मोहन शक्ति विकसित होती है तथा किसी अज्ञात शक्ति की प्रेरणा से प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, कारोबारी या व्यवसायी हो अथवा अपरिचित ग्राहक, साधक से मेल-जोल बढ़ाने का प्रयास करने लगता है।

इस अनुष्ठान से शीघ्र ही विवाह कार्य सम्पन्न हो जाता है, साथ ही यह अनुष्ठान संतान प्राप्ति हेतु भी चमत्कारिक सिद्ध होता है। इस अनुष्ठान के दौरान एक विशेष बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि घट स्थापना के बाद साधक के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को न तो उसका स्पर्श करना चाहिये और न ही उसे अपने स्थान से हटाना चाहिये। उसका विस्थापन अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् ही होना चाहिये। घट पर रजस्वला स्त्री की छाया भी नहीं पड़े, इसका विशेष ध्यान रखना चाहिये।

प्रेम विवाह और तांत्रिक प्रयोग

नीतिशास्त्र का कथन है कि धन की आमद नित बनी रहे, शरीर निरोगी रहे, गृहस्थाश्रम पालन के लिये सुन्दर, सुशील, स्त्री पत्नी के रूप में प्राप्त हो जाये तथा संतान का सुख मिलता रहे, तो व्यक्ति का जीवन सार्थक सिद्ध हो जाता है। विवाह संस्कार को नीतिशास्त्र में गृहस्थ जीवन की आधारशिला बताया गया है। विवाह संस्कार का मुख्य आधार परस्पर अपनत्व के भाव एवं प्रेम की डोर पर निर्भर रहता है।

विवाह के बारे में सभी जानते हैं कि परिवारजनों द्वारा निश्चित किये गये सम्बन्ध ही विवाह में रूपान्तरित हो जाते हैं। इस संयोजित विवाह पद्धति का आज भी सम्मान किया जाता है। विवाह का एक अन्य रूप भी अपनी जगह बना रहा है, वह है प्रेम विवाह। अक्सर ही प्रेम विवाह परिवार के बड़े सदस्यों की सहमति के बिना, उनका विरोध करके सम्पन्न होते हैं। इस बारे में अधिकांश लोग इसके विरोध में हैं किन्तु कुछ विद्वानों का ऐसा मानना है कि अगर पहले प्रेम करके लड़का-लड़की एक-दूसरे को ठीक से समझ लेते हैं और उन्हें लगता है कि वे विवाह करके सुखी दाम्पत्य जीवन जी पायेंगे तो उनका विरोध नहीं होना चाहिये। इसके विपरीत आज भी अधिकांश अवसरों पर प्रेम विवाह का विरोध ही होता है और इसे उचित नहीं माना जाता है।

अनेक अवसरों पर प्रेम विवाह के प्रति परिवार वालों का विरोध इतना भयावह और वीभत्स होता है कि व्यक्ति उसके बारे में सुन कर ही कांपने लगता है। इसका अधिकांश विरोध कन्यापक्ष के परिवार वालों के द्वारा किया जाता है। उन्हें लगता है कि उनकी बेटी ने ऐसा कार्य करके परिवार का नाम खराब किया है। कई बार इस विरोध का परिणाम लड़के एवं लड़की की निर्मम हत्या के रूप में सामने आता है। इसके उपरांत भी प्रेम विवाह को उचित बताने वाले कम नहीं हैं। इसलिये यहां पर एक तांत्रोक्त उपाय बताया जा रहा है जिसे करने के पश्चात् प्रेम विवाह की राह में आने वाली बाधायें दूर होने लगती हैं। यह उपाय सामान्य अवश्य है किन्तु परिणाम सार्थक प्राप्त होते हैं:-

प्रेम विवाह की बाधाएं दूर करने वाला तंत्र प्रयोग :

गौरी यानी **सुलेमानी हकीक** (ओनेक्स अगेट) की एक ऐसी किस्म है, जो इन्द्रधनुष जैसी छटा बिखरने वाला सृष्टि का सबसे अद्‌भुत पत्थर माना जाता है। गौरी हकीक मानसिक शक्ति, आत्मबल, विवेक, धैर्य आदि सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रभाव की अभिवृद्धि तो करता ही है, यह धारक की आर्थिक स्थिति को भी सुदृढ़ बनाता है। प्राचीन समय से ही ऐसी मान्यता रही है कि इस पत्थर के धारण करने के पश्चात् जो पुरुषार्थ भरे

कर्म किये जाते हैं, उनमें निश्चित ही सफलता प्राप्त होती है।

पश्चिम एशिया के अनेक देशों, विशेषकर मुस्लिम जगत में प्राचीन समय से ही ऐसी मान्यता चली आ रही है कि इस पत्थर में शक्तिशाली हीलिंग क्षमता रहती है। इसलिये यह उदास मन की मलिनता एवं उदासी के भाव को तत्काल मिटा देता है। मन को प्रसन्नता से भर देता है। यह व्यक्ति के मन में सहज बोध जगाकर उन्हें सही निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करने के साथ-साथ प्रेम विवाह संबंधी बाधाओं को दूर करके उन्हें शीघ्र ही वैवाहिक बंधनों में बंध जाने में मदद करता है।

अनेक बार ऐसा देखने में आया है कि जिन युवक या युवतियों की उम्र 35-36 वर्ष से अधिक हो जाती है और उनके किसी भी तरह का वैवाहिक कार्य सम्पन्न हो पा रहा है अथवा जिन युवक या युवतियों को अपने प्यार को प्रेम विवाह में रूपान्तरित करने में कई तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, अगर ऐसे युवक या युवतियों को अभिमंत्रित गौरी नामक यह हकीक पत्थर धारण करवा दिया जाये तो उनका प्रेम विवाह शीघ्र ही सम्पन्न हो जाता है।

इसका प्रयोग बहुत आसान है। इसे शुक्लपक्ष के प्रथम गुरुवार को सम्पन्न करें तो लाभ मिलने की आशा बढ़ जाती है। इस प्रयोग को प्रातःकाल सम्पन्न करना ठीक रहता है। इसके लिये बहुत कुछ करने की आवश्यकता नहीं रहती है। जिस दिन प्रयोग करना हो, उस दिन प्रातः स्नान-ध्यान करके पवित्र एवं स्वच्छ हो जायें। सफेद रंग की स्वच्छ धोती धारण करें। पीला सूती अथवा ऊनी आसन उपाय स्थल पर बिछा लें। यज्ञ करने के लिये एक मिट्टी का बर्तन भी चाहिये। अपने सामने लकड़ी की चौकी रख लें और उस पर पीला कोरा वस्त्र एक मीटर लेकर उसकी चार तह करके चौकी पर बिछा लें। उसके ऊपर गौरी हकीक पत्थर रख दें। समिधा के रूप में लोबान का प्रयोग ही किया जाना है। इसमें आगे लिखे गये मंत्र का जाप करते हुये एक जाप के साथ एक आहुति दें। इस प्रकार कुल 108 मंत्रों का जाप करना है और इतनी बार ही लोबान की आहुति देनी है।

मंत्र इस प्रकार है-

ॐ सर्वलोक वशंकराय कुरू कुरू स्वाहा। गुरु गोरख नाथ की दुहाई।

तत्पश्चात् उस हकीक पत्थर को चांदी की अंगूठी में जड़वा कर स्वयं अपने दाहिने हाथ में धारण कर लेवें।

इस मंत्रजाप एवं पत्थर को धारण करने से विवाह बाधा की समस्या दूर होती ही है, साथ ही प्रेम विवाह की बाधा भी समाप्त होती है। अगर पुरुष गौरी के साथ एक गोदन्ता मणि एवं स्त्रियां गौरी के साथ एक लाल रंग का मूंगा भी धारण कर लें, तो उनके प्रेम विवाह को कोई नहीं रोक सकता।

वशीकरण का एक तंत्र प्रयोग :

वशीकरण प्रयोग के प्रति अनेक व्यक्ति लालायित रहते हैं। किसी को अपने प्रति आकर्षित करना और अपने स्वार्थ की सिद्धि करना इस वशीकरण प्रयोग का फल बताया गया है। वशीकरण मंत्रजाप बहुत पहले भी किये जाते रहे हैं किन्तु इन्हें कभी भी समाज में अच्छे रूप में नहीं देखा जाता। प्राय: इस प्रयोग को अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये ही किया जाता है। इस कारण से इस प्रयोग को उचित नहीं माना गया। यही कारण है कि अधिकांश लोग इस अनुष्ठान के अच्छे रूप को समझ नहीं पाते हैं।

यहां पर जो वशीकरण प्रयोग दिया जा रहा है वह अत्यन्त प्रभावी है। इसकी एक अन्य विशेषता यह भी है कि इस प्रयोग को यदि स्वार्थ की भावना से अथवा किसी अन्य को दु:खी अथवा आहत करने के लिये किया जाता है तो इसका प्रयोग निष्फल हो जायेगा। प्रयोगकर्ता चाहे जितने मंत्रजाप कर ले, उपरोक्त अनुसार यदि यह प्रयोग होता है तो कोई लाभ नहीं मिलेगा। कभी-कभी इसका विपरीत प्रभाव भी देखने में आता है। इसमें प्रयोग करने वाले को हानि का सामना करना पड़ता है।

अग्रांकित वशीकरण सम्बन्धी जिस प्रयोग का उल्लेख किया जा रहा है, वह शाबर पद्धति पर आधारित है। अगर इस शाबर प्रयोग को पहले किसी ग्रहणकाल में अथवा दीपावली या होली की रात्रि में सिद्ध कर लिया जाये तो अति उत्तम रहता है। एक बार सिद्ध करने के पश्चात् इस प्रयोग को किसी भी रविवार या मंगलवार के दिन से शुरू किया जा सकता है। यह तांत्रिक अनुष्ठान कुल 21 दिन का है।

इसमें सबसे पहले रात्रि को 10 बजे के बाद किसी एकान्त स्थान में काले कम्बल के आसन पर पश्चिम की ओर मुंह करके बैठें। इसके बाद चार लौंग लेकर उन्हें अपने चारों दिशाओं में रखें। बीच में एक चौमुहा तिल के तेल का दीपक जला कर रखें। इसके बाद मिट्टी के पात्र में अग्नि जलाकर लोबान, पीली सरसों, भूतकेशी, बालछड़, सुगन्धबाला आदि सामग्रियों को मिलाकर उसकी आहुति देते हुए अग्रांकित मंत्र का जाप करें। साधना काल में गुड़-चने का नैवेद्य भी अपने सामने रख लें।

तंत्र साधना में प्रयुक्त किया जाने वाला मंत्र इस प्रकार है-

ॐ नमो आदेश गुरु कामरू देश कामाख्या देवी, जहाँ बसे इस्माइल योगी, इस्माइल योगी ने दीन्हीं एक लोंग राती माती। दूजी लोंग दिखावे राती। तीजी लोंग रहे थहराय, चौथी लोंग मिलावे आप, नहिं आवे तो कुआं, बावड़ी, घाट फिरे रंडी कुआं, बावड़ी छिटक भरे। ॐ नमो आदेश गुरु को मेरी भक्ति गुरु की शक्ति, फुरो मंत्र ईश्वरो वाचा।

प्रतिदिन इस मंत्र का जाप पांच माला करें। मंत्रजाप के लिये हकीक माला प्रयोग में

लायें। 21 दिन में यह अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है। तत्पश्चात् सारी पूजा सामग्री को जमीन के नीचे गाढ़ देवें और हकीक माला को अपने गले में धारण कर लें। दैनिक जाप के दौरान जो नैवेद्य रखा जाता है उसे बन्दर, लंगूर आदि को खिला दें। स्वयं 21 दिन तक भूमि पर शयन करते हुये ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें।

एक बार अनुष्ठान सम्पन्न हो जाने पर लौंग पर सात मंत्र पढ़ कर जिस किसी को खिला दी जाती है वह व्यक्ति साधक के वश में हो जाता है।

तलाक की समस्या का निराकरण करने वाला एक तांत्रोक्त प्रयोग :

विज्ञान की उन्नति और औद्योगिक क्रांतियों ने समाज को अनेक उपहार प्रदान किये हैं। इन्होंने लोगों के जीवन को अधिक आरामदायक बनाया है। समाज की आर्थिक स्थिति में सुधार आया है। सुख-सुविधा के साधनों के साथ-साथ भोग-विलास के प्रति लोगों की रुचि बढ़ी है। लोगों के जीवन स्तर में भारी बदलाव आया है। कठिन, दुष्कर एवं बोझल जैसी प्रतीत होने वाली जिन्दगी अब अधिक आरामदायक एवं आनन्द देने वाली लगने लगी है, लेकिन इन सभी के साथ ही लोगों के सामाजिक रिश्तों, विशेषकर पारिवारिक रिश्तों के साथ-साथ सोच-विचार और भावनाओं के दृष्टिकोण में जबरदस्त बदलाव आया है।

आधुनिकता ने हमें सुख-सुविधाएं अवश्य प्रदान की हैं, लेकिन इनके साथ ही कई तरह की समस्याओं को भी जन्म दिया है। जैसे-जैसे समाज का बौद्धिक स्तर बढ़ता जा रहा है, शताब्दियों से प्रचलित रहे संस्कारों की डोर कमजोर पड़ती जा रही है। लोगों के मन में स्वैच्छिक उन्मुक्तता, स्वतंत्रता के साथ-साथ स्वार्थी प्रवृत्ति घर करती जा रही है। इसलिये सामाजिक रिश्ते ही नहीं अपितु पारिवारिक सम्बन्धों पिता-पुत्र, भाई-भाई और पति-पत्नी के बीच कटुता उत्पन्न होने लगी है।

प्राचीन समय में समाज को एकजुट रखने तथा परिवार के रूप में प्रेमपूर्वक रहने के लिये अनेक तरह के नियम निर्धारित किये थे। गृहस्थाश्रम को पूर्ण उत्तरदायित्वपूर्ण बनाने के लिये हिन्दू जीवन पद्धति में जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक संस्कारों का विधान रखा था, जिनमें सोलह संस्कार बहुत ही प्रमुख थे। इन संस्कारों में पितृदोष से ऋणमुक्त होने, पुत्र-पुत्री का गृहस्थ बसाने (कन्या दान) और पति-पत्नी के रूप में सदैव एकत्व का भाव रखने वाले संस्कार सबसे मुख्य हैं। वैवाहिक बंधन में बंध जाने के पश्चात् पति-पत्नी को सदैव के लिये एक-दूसरे के लिये समर्पित रहने के लिये वचनबद्ध रहना पड़ता है।

पति-पत्नी के संबंधों को किसी समय दो शरीर और एक आत्मा, दो मन और एक सोच, सात जन्मों तक साथ निभाने वाले, जैसी उपमायें दी गई थी, लेकिन अब इस पवित्र रिश्ते में भी गिरावट आती जा रही है। आज अधिकांश लोगों में उन्मुक्तता, स्वच्छन्द सोच, अहं और स्वतंत्रता की भावना बलवती होती जा रही है, वहीं दूसरी तरफ पारिवारिक

रिश्तों में अविश्वास, सन्देह, संघर्ष एवं कलह की स्थिति देखने को मिल रही है। समर्पण की जगह संघर्ष ने ले ली है। प्रेम का स्थान अविश्वास और संदेह ने ले लिया है। इन सबका परिणाम है कि पारिवारिक कलह, हिंसा, तलाक, एक-दूसरे को धोखा देने की घटनायें बढ़ती जा रही हैं। तलाक की दर भी तीव्रगति से बढ़ रही है।

तलाक का अर्थ है वैवाहिक जीवन में प्रेम, समर्पण, त्याग की जगह अविश्वास, घृणा एवं संघर्ष का इस सीमा तक बढ़ जाना कि पति-पत्नी दोनों को ही यह लगने लगे कि अब एक साथ रहना संभव नहीं है। ऐसी स्थितियों में उन दोनों का एक साथ शांतिपूर्वक रह पाना मुश्किल बन जाता है और वह शीघ्रताशीघ्र एक-दूसरे से अलग होकर स्वतंत्र हो जाना चाहते हैं। तलाक के ऐसे मामलों के लिये सामाजिक परिस्थितियां तो उत्तरदायी रहती ही हैं, कई अन्य कारण भी जिम्मेदार रहते हैं। इस प्रकार के कारणों का उल्लेख तंत्रशास्त्र एवं अन्य दूसरे ग्रंथों में विस्तारपूर्वक दिया गया है।

आमतौर पर ऐसा देखने में आता है कि जिन परिवारों में माता-पिता या अन्य बुजुर्ग सदस्यों को पूर्ण मान-सम्मान नहीं मिलता, उनकी संतानें भी सुखी नहीं रह पाती। इनकी संतानों के विवाह जैसे मांगलिक कार्यों में बहुत अधिक विलम्ब होता है, उनके गृहस्थ जीवन में भी निरन्तर उथल-पुथल मची रहती है। उनकी संतानों को गृह क्लेश का सामना करना पड़ता है, जिसकी परिणिति अनेक बार तलाक के रूप में सामने आती है। इन लोगों को संतान सुख भी प्राप्त नहीं हो पाता।

इसी तरह जिन परिवारों में कुल देवता, देवी का अपमान, निरादर किया जाता है या परिवार के किसी कमजोर सदस्य को सताया, दबाया जाता है या बार-बार अपमानित किया जाता है, उनकी संतानें उन्मुक्त स्वभाव को अपनाने वाली होती हैं। इनके पुत्र-पुत्रियां, दोनों का ही गृहस्थ जीवन सुचारू रूप से नहीं चल पाता। ऐसे अधिकतर मामलों में शीघ्र ही तलाक की स्थितियां निर्मित होने लगती हैं।

अनुभवों में ऐसा आया है कि अगर समय रहते समुचित प्रबन्ध कर लिये जायें तो तलाक जैसी स्थिति को उत्पन्न होने से रोका जा सकता है तथा टूटते हुये गृहस्थ जीवन को बचाया जा सकता है। ऐसी विषम परिस्थितियों से बचने के लिये तांत्रिक सम्प्रदाय और वैदोक्त पद्धति में अनेक उपाय एवं प्रयोग दिये गये हैं, जिनको सविधि सम्पन्न करने से माता-पिता के पापकर्मों का तो प्रायश्चित हो ही जाता है, कई अन्य तरह के दोष भी समाप्त हो जाते हैं।

तलाक स्तम्भंक शाबर प्रयोग :

यद्यपि पापकर्मों से मुक्ति पाने के लिये शास्त्रों एवं वैदोक्त प्रणाली में अनेक विधान और उपाय बताये गये हैं। इन सबका इस प्रसंग में वर्णन कर पाना सम्भव नहीं है। आगे

एक ऐसा शाबर मंत्र प्रयोग दिया जा रहा है जिसके द्वारा तलाक की स्थिति को रोका जा सकता है। यह प्रयोग वशीकरण पर आधारित है। यह प्रयोग एक बार सिद्ध हो जाता है तो उस साधक या साधिका के सामने विशेष क्षणों में जो भी सामने आ जाता है, वही वशीभूत हो जाता है।

यह शाबर प्रयोग अनेक बार अनुभूत किया हुआ है। ऐसा देखने में आया है कि अगर समय रहते पति-पत्नी में से कोई भी एक इस शाबर पद्धति पर आधारित वशीकरण प्रयोग को सफलतापूर्वक सम्पन्न कर लेता है तो वह तलाक की स्थिति को बदल सकता है तथा वह पति-पत्नी के रूप में एक परिवार के रूप में बने रह सकते हैं।

यह शाबर प्रयोग 41 दिन का है। अगर इस शाबर मंत्र को पहले दीपावली, दशहरा, होली आदि की रात्रि को किसी एकान्त स्थान में बैठकर दीपक आदि जलाकर अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप कर लिया जाये तो यह मंत्र चेतना सम्पन्न हो जाता है। तब इस मंत्र का प्रभाव अनुष्ठान शुरू करने के दूसरे सप्ताह में ही दिखाई देने लग जाता है। यद्यपि इस शाबर अनुष्ठान को किसी भी कृष्णपक्ष के शनिवार के दिन से भी शुरू किया जा सकता है।

यह शाबर अनुष्ठान शनिवार की रात्रि को दस बजे के बाद सम्पन्न किया जाता है, लेकिन इससे संबंधित थोड़ा सा विधान प्रातःकाल भी सम्पन्न करना पड़ता है। प्रातःकाल शुद्ध आटे से पांच रोटियां बनवायें। उन्हें घी से चुपड़ें। एक थाली में रोटियों के साथ थोड़ा सा देशी घी, दही, शक्कर, दो लौंग और एक बताशा रखें। एक कण्डे में आग जलाकर उस पर घी की आहुतियां प्रदान करते हुये एवं बताशे के साथ दोनों लौंगों को घी में भिगोकर अग्नि को समर्पित कर दें। साथ ही अपने देवताओं को स्मरण करते हुये उनका आह्वान करते रहें। बताशे के बाद प्रत्येक रोटी से थोड़ा-थोड़ा अंश तोड़कर क्रमशः घी, दही, शक्कर में लगाकर अग्नि को अर्पित करें। इस प्रकार पांचों रोटियों का थोड़ा-थोड़ा अंश अग्नि को चढ़ा दें। तत्पश्चात् घी की एक आहुति प्रदान करके अंगुलियों में थोड़ा सा पानी लेकर अग्नि की प्रदक्षिणा करें। अपने कुल देव या देवियों से अपने और अपने माता-पिता के अपराधों को क्षमा करने की प्रार्थना करें। बाद में उन पांचों रोटियों को क्रमशः गाय, कुत्ता, कौआ, पीपल के वृक्ष के नीचे और जल में प्रवाहित कर दें। रात्रि को घर के मुख्यद्वार पर एक दीपक जलाकर रखें। ऐसा कुल सात शनिवार तक रखना है।

रात्रि को अनुष्ठान के रूप में किसी सुनसान एकान्त स्थान, किसी प्राचीन खण्डहर अथवा किसी प्राचीन शिव मंदिर या अपने ही घर के किसी कक्ष में बैठकर इस अनुष्ठान को सम्पन्न करें। सबसे पहले रात्रि को नहा-धोकर तैयार हो जायें। संभव हो तो लाल रंग के वस्त्र पहन कर अपने साधना स्थल पर जाकर लाल ऊनी आसन पर पश्चिम या दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके बैठ जायें।

अपने सामने लकड़ी की चौकी पर लाल कपड़ा बिछाकर शुद्ध मिट्टी का ढेला रखें

और उस पर तेल-सिन्दूर का लेप करके पांच लौंग, पांच कालीमिर्च, पांच पान के पत्ते, सिन्दूर से रंगी पांच सुपारी तथा ग्यारह की संख्या में पंच-चक्रा सीप भी सिन्दूर में रंग कर अर्पित करें। इसके पश्चात् तेल का दीपक जलाकर एवं खीर का प्रसाद रखकर हकीक माला से अग्रांकित मंत्र की पांच माला जाप करें। जाप के पश्चात् खीर को स्वयं ही खा लें। अन्य किसी को न दें। अनुष्ठान में प्रयुक्त मंत्र इस प्रकार है-

हथेली पर हनुमन्त बसै भैरू बसे कपाल। नारसिंह की मोहनी मोहे सब संसार। मोहन रे मोहन ता बीर सब वीरन मैं तेरा सीर सबकी दृष्टि बांध दे मोहि सिन्दूर चढाऊँ तोहि। तेल सिंदूर कहां से आया ? कैलाश परवत् से आया। कौन लाया ? अंजनी का हनुमन्त गौरी का गणेश काला गोरा तोतला तीनों बसे कपाल बिंदा तेल सिंदूर का दुश्मन गया पाताल। दुहाई का मियासि दूर की हमें देख सीतल हो जाए हमारी भक्ति गुरु की शक्ति फुरो मंत्र ईश्वरो वाचा सत्य नाम आदेश गुरु का।

मंत्रजाप के लिये हकीक माला या पंचमुखी लघु रुद्राक्ष माला का प्रयोग करें। जाप करने से पहले स्वयं अपने मस्तष्क पर भी सिन्दूर का टीका लगा लें। अनुष्ठान अवधि में ब्रह्मचर्य पालन करने के साथ-साथ भूमि पर शयन करें। संभव हो तो साधना स्थल पर ही सोयें। इस शाबर अनुष्ठान में प्रतिदिन पूजा का क्रम यही रहता है।

अनुष्ठान के अन्तिम दिन मंत्रजाप के उपरान्त पूजा की समस्त सामग्री को किसी नये वस्त्र में बांधकर अथवा किसी कोरे मिट्टी के बर्तन में भरकर जल में प्रवाहित कर दें। पूजा में प्रयोग की गई हकीक माला या रुद्राक्ष माला को स्वयं अपने गले में पहन लें अथवा घर के पूजास्थल पर स्थापित कर दें।

अनुष्ठान समाप्त होने के पश्चात् जब आप सिन्दूर पर सात बार उपरोक्त मंत्र को पढ़ कर अपने माथे पर टीका लगाकर अपनी पत्नी या पति के सामने जाते हैं, तो उसका गुस्सा तत्काल शांत हो जाता है तथा संदेह अथवा अविश्वास की जगह आकर्षण उमड़ने लग जाता है। इसी प्रकार नाराज अधिकारी के सामने सिन्दूर लगाकर जाने से उसका भी वशीकरण होता है। वह भी आपसे शत्रुता भुलाकर सम्मान देने वाला व्यवहार करने लग जाते हैं।

शाबर अनुष्ठान और उनके तांत्रिक प्रयोग

शाबर मंत्र साधना, तंत्र की एक विशेष प्रक्रिया के रूप में रही है। शाबर मंत्र साधनाएं सामान्यजन, कम पढ़े-लिखे एवं अनपढ़ लोगों को ध्यान में रखकर विकसित की गई हैं। इसलिये इन शाबर मंत्र आधारित अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये तंत्र की अन्य प्रक्रियाओं अथवा वैदिक साधनाओं की तरह किसी जटिल विधि-विधान की आवश्यकता नहीं पड़ती और न ही इनका कोई विपरीत प्रभाव होता है। इन अनुष्ठानों को पूर्णता के साथ सम्पन्न करने के लिये एकमात्र पूर्ण श्रद्धा, मंत्रों पर गहन आस्था, प्रक्रिया के प्रति समर्पण भाव एवं गुरु पर पूर्ण विश्वास रखने की ही आवश्यकता रहती है। शाबर साधना के अटपटे से मंत्र इन्हीं के माध्यम से चमत्कार कर दिखाते हैं। अनेक आचार्यों का विश्वास है कि शाबर साधनाएं कभी निष्फल नहीं होती हैं।

शाबर साधना के मंत्र ही सहज एवं साधारण नहीं होते, अपितु इन साधनाओं को सम्पन्न करने लिये जिन तांत्रोक्त वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है, वह सब भी सहज ही आस-पड़ौस में उपलब्ध हो जाती हैं। इन अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये किसी लम्बे-चौड़े विधि-विधान को समझने की भी आवश्यकता नहीं होती। हाँ, इस प्रकार की शाबर मंत्र साधनाओं के लिये गुरु का सानिध्य मिलना आवश्यक होता है, क्योंकि इन शाबर मंत्रों की रचना में व्याकरण का तो महत्व होता नहीं है और न ही इन मंत्रों का कोई विशेष अर्थ ही निकलता है तथा उच्चारण किये जाने पर भी यह मंत्र ऊटपटांग, गांव-देहात की बोलचाल के शब्द भर ही प्रतीक होते हैं लेकिन इन मंत्रों में एक विशिष्टिता रहती है। इन शब्दों में गुरु के साथ-साथ अभीष्ट देव की शक्ति समाहित रहती है। इसलिये इन मंत्रों को किसी पुस्तक से पढ़कर प्रयोग में लाने से तो अधिक प्रभाव दिखाई नहीं देता, किन्तु अगर इन मंत्रों को किसी विद्वान साधक व्यक्ति या गुरु के मुख से ग्रहण करके साधना की जाये तो तत्क्षण उनका प्रभाव दिखाई पड़ता है। अनेक बार तो यह मंत्र वैदिक मंत्रों या तांत्रिक साधनाओं की अपेक्षा अत्यन्त प्रभावी एवं तत्क्षण फल प्रदान करने वाले सिद्ध होते हैं। गुरु मुख से मंत्र ग्रहण करके अगर यह अनुष्ठान सम्पन्न किये जायें तो निश्चित ही वह सफलतायें प्रदान करते हैं। इसीलिये प्राय: प्रत्येक शाबर मंत्र के साथ **मेरी भक्ति गुरु की शक्ति स्फुरो मंत्र ईश्वरी वाचा** जैसा पद जोड़ा जाता है।

तांत्रिक साधनाओं, तंत्र शास्त्र, वैदिक मंत्रों एवं उनकी साधनाओं पर सैंकड़ों की संख्या में विभिन्न तरह के ग्रंथ लिखे गये हैं। योग की प्रक्रियाओं, ध्यान, धारणा और समाधि पर भी अनेक ग्रंथ रचे गये, वैदिक उपासनाओं को लेकर भी वेद, पुराण, उपनिषदों

से लेकर अन्य ग्रंथ लिपिबद्ध किये गये, किन्तु शाबर मंत्रों एवं उनकी साधनाओं पर अब तक भी कोई प्रमाणिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं हो पाया है। यह साधना पद्धति अब तक मौखिक रूप में गुरु-शिष्य परम्परा के माध्यम से ही निरन्तर आगे बढ़ती रही है। इन शाबर मंत्रों एवं उनकी साधनाओं, अनुष्ठानों आदि पर जो कुछ भी जानकारियां उपलब्ध होती रही हैं उनके एकमात्र स्रोत शाबर मंत्रों के साधक ही रहे हैं। इन शाबर मंत्रों का सृजन भगवान शिव के मुख से हुआ माना जाता है, किन्तु इन्हें अपनी साधना का माध्यम नाथ सम्प्रदाय के योगियों एवं सिद्धों ने ही बनाया है। इसलिये कुछेक शाबर मंत्रों का सम्पादन और कुछेक विशिष्ट उपासनाओं का सूत्र नाथ सम्प्रदाय के योगियों द्वारा रहा है। नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्धित कुछ उच्च कोटि के साधकों के पास एवं उनके द्वारा स्थापित किये गये कुछेक प्राचीन साधना स्थलों पर शाबर मंत्रों पर लिखे गये कुछ हस्तलिखित ग्रंथ अब भी देखने को मिल जाते हैं, लेकिन इन तक पहुंचना सामान्य जिज्ञासुओं के लिये संभव नहीं है।

शाबर मंत्रों से सम्बन्धित काफी साहित्य गांव-देहात में प्रचलित ओझाओं, गुनियों, तांत्रिकों और झाड़-फूंक करने वालों के पास भी उपलब्ध है किन्तु इनके पास शाबर मंत्रों का जो ज्ञान है, उन्हें एक तरह से साधारण साधनाएं कहा जा सकता है। शाबर साधनाओं का उच्च ज्ञान नाथ योगियों के पास ही उपलब्ध है।

ओझा, गुनिया और झाड़-फूंक करने वाले लोग साधारण शाबर मंत्रों को उपयोग में लाते हैं। वह अपनी क्षमताओं का उपयोग लोगों के रोग उपचार, नजर उतारने, साधारण प्रकार की तांत्रिक क्रियाओं अर्थात् अभिचार कर्म से बचाव करने, भूत-प्रेत आदि से मुक्ति दिलाने, जीवन में उत्पन्न होने वाली अनेक प्रकार की परेशानियों से मुक्ति दिलाने आदि के लिये करते हैं। यद्यपि बहुत से ऐसे लोग अपनी शक्ति का उपयोग मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन जैसे षट्कर्मों का प्रभाव दिखाने के लिये भी करते हैं लेकिन ऐसे ओझा, गुनियों आदि के पास पराभौतिक जगत से सम्बन्धित अनुभूतियां प्रदान करने की कोई जानकारी नहीं रहती और न ही उन्हें ऐसी किसी शाबर साधना की जानकारी होती है। शाबर साधनाओं का परम लक्ष्य पराभौतिक जगत से सम्बन्धित दिव्य अनुभूतियों को जानना, अपना आत्म साक्षात्कार करना, सूक्ष्म शरीर द्वारा यात्रा करना, छाया पुरुषों को सिद्ध करना, शून्य से इच्छित वस्तु प्राप्त करने की सामर्थ्य प्राप्त करना अथवा अप्सरा आदि के साथ सम्पर्क स्थापित करने के साथ रहता है। शाबर साधनाओं का एक बड़ा भाग अलौकिक शक्तियां प्राप्त करने के साथ संबंधित रहता है। इन्हीं के माध्यम से एक साधक हारजात सिद्ध करके किसी भी प्राणी के भूत, भविष्य और वर्तमान काल में झांक कर सकता है, उसके जीवन की प्रत्येक घटना को प्रत्यक्ष देख सकता है। उसके अव्यक्त विचारों को पढ़ने, उनमें इच्छानुसार बदलाव करने तक की क्षमता भी प्राप्त कर सकता है। ऐसी

साधनाओं की जानकारी उच्च शाबर सिद्धों के पास ही सिमट कर रह गयी है।

- शाबर मंत्रों के संबंध में कई अन्य बातें भी ध्यान देने की है, जैसे कि शाबर मंत्रों में प्राय: हनुमन्त वीर, भैरव, काली, दुर्गा, गणेश आदि का उल्लेख आवश्यक रूप से होता है। यह एक अलग बात है कि इन सभी देवों की आज के समय (कलियुग) में सर्वाधिक मान्यता है। यह सभी शीघ्रता से प्रसन्न होने वाले और साधक की मनोकामना को तत्काल पूर्ण करने वाले देव हैं। इसके साथ ही अधिकतर शाबर मंत्रों के उपदेष्टा नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्धित गुरु गोरखनाथ, गुरु मच्छेन्द्रनाथ (मस्त्येंद्रनाथ) और उनकी परम्परा के अन्य योगी चौरंगी नाथ, गुरु जलंधर, भरथरी और सुलेमान आदि हैं। अत: ऐसे शाबर मंत्रों में इष्ट की शक्ति तो समाहित रहती ही है, इनके अतिरिक्त उन मंत्रों में गुरु गोरखनाथ, गुरु मच्छेन्द्रनाथ आदि की शक्ति भी समाहित रहती है। इसीलिये शाबर मंत्र तत्क्षण अपना प्रभाव दिखाने वाले सिद्ध होते हैं।

बहुत से शाबर मंत्रों में उपदेष्टा की जगह केवल गुरु शब्द का ही उल्लेख होता है। इन शाबर मंत्रों का संबंध परम्परा से चले आ रहे मंत्रों के साथ रहता है। यह मंत्र अद्‌भुत प्रभावशाली सिद्ध होते हैं, क्योंकि इनमें अनेक साधकों की साधना का फल समाहित रहता है, किन्तु इन मंत्रों की सार्थकता इन्हें गुरु के माध्यम से ही ग्रहण करने पर सुरक्षित रहती है। शाबर मंत्रों के साथ जो गुरु शब्द सलंग्न रहता है, उससे साधारण व्यक्ति विशेष का अर्थ नहीं निकालना चाहिये, बल्कि इस गुरु शब्द से बोध उस साधक के साथ रहता है, जिसने स्वयं परम्परा से इस मंत्र को ग्रहण किया होता है और जो स्वयं भी उस मंत्र की शक्ति को आत्मसात कर चुका होता है। उस साधना के अनुभव से गुजर चुका होता है। गुरु का अभिप्राय न तो व्यक्ति विशेष के साथ रहता है और न ही केवल शब्द मात्र से रहता है। गुरु का अभिप्राय: उस जीवन्त व्यक्तित्व के साथ रहता है, जो अपनी सहज उपस्थिति से ही अन्य साधकों की साधनाओं में सफलता प्रदान करवाने में सक्षम होता है। अत: शाबर साधनाओं में पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिये अभीष्ट देव पर पूर्ण आस्था रखने के साथ-साथ अपने गुरु पर भी पूर्ण विश्वास रखना आवश्यक होता है।

शाबर मंत्रों के अन्त में **शब्द सांचा पिण्ड कांचा, फुरो मंत्र ईश्वरी वाचा** नामक एक पल्लव क्रम जोड़ा जाता है। यद्यपि पढ़ने, सुनने में यह साधारण वाक्य मात्र प्रतीत होता है, पर यह साधारण बिलकुल नहीं है। यह वास्तव में मंत्र, साधक और ईश्वर के मध्य गहन संबंधों का बोध कराता है। इस शब्द से, वेदान्त में भी उसी शक्ति का बोध होता है कि 'शब्द' (नाद) ही ब्रह्म (ईश्वर) है, शब्द शाश्वत है। शब्द कभी नष्ट नहीं होता, किन्तु साधक का जो शरीर (पिण्ड) है, वह मिट्टी के पात्र की भांति कच्चा और क्षणभंगुर है, अत: यह पिण्ड अनित्य है। मंत्र ईश्वरीय वाणी है। वह ईश्वर के वचन से ही प्रभावित होता है और उसमें ईश्वरीय शक्ति निहित रहती है। अत: यह शाबर मंत्र भी सिद्ध साधकों द्वारा

प्रकाश में लाये गये ईश्वरीय शब्द हैं, जो गुरु मुख से प्रकट होने पर और भी प्रभावी बन जाते हैं। शाबर मंत्रों का आदि देव भगवान शंकर को ही माना गया है।

शाबर मंत्रों को सिद्ध कैसे करें :

शाबर मंत्र तभी अपना प्रभाव दे पाते हैं जब उन्हें सिद्ध कर लिया जाये। जिस प्रकार से शाबर मंत्र आम लोगों के लिये सामान्य बोलचाल एवं सामान्य विधि-विधान से सम्पन्न किये जाते हैं, उसी प्रकार से इन मंत्रों को सिद्ध करने की प्रक्रिया भी बहुत आसान एवं सरल है। इस बारे में विद्वान आचार्यों का मत है कि शाबर मंत्रों की साधना से पूर्व उन्हें सिद्ध अवश्य कर लेना चाहिये। इसके लिये सर्वार्थ साधना मंत्र को इक्कीस बार जप लेना पर्याप्त होता है। इसके बाद उस मंत्र की साधना करें, जिसे आप प्रयोग करना चाहते हैं। सर्वार्थ साधना मंत्र का जप करते समय ध्यान रखें कि इसका कोई भी शब्द, वर्ण या उच्चारण न तो अशुद्ध हो और न ही अपनी तरफ से किसी प्रकार का शब्द जोड़ा जाये। यह जैसा है वैसा ही ज्यों का त्यों पढ़ना चाहिये-

गुरु सठ गुरु सठ गुरु हैं वीर
गुरु साहब सुमरौं बड़ी भाँत
सिंगी टोरों बन कहौं
मन नाऊँ करतार
सकल गुरु की हर भजे
घट्टा पाकर उठ जाग
चेत सम्हार श्री परमहंस

इसके बाद गणेशजी का ध्यान करके नीचे लिखे मंत्र की एक माला जपें-

ध्यान- **वक्रतुण्ड महाकाय, कोटि सूर्य सम्प्रभम्।**
निर्विघ्नं कुरु मे देव, सर्व कार्येषु सर्वदा॥

मंत्र- **वक्रतुण्डाय हुं।**

तत्पश्चात् निम्न मंत्र से दिग्बंधन करें-

वज्र क्रोधाय महादन्ताय दश दिशो बंध बंध।
हूँ फट् स्वाहा।

इस मंत्र को जपने से दसों दिशायें बंध जाती हैं, इसका तात्पर्य यह है कि इन दिशाओं में जितने भी अनिष्ट प्रकार के प्रेत आदि, जो आपके लिये बाधायें उत्पन्न कर सकते हैं, वे आपका किसी प्रकार का अहित नहीं कर पायेंगे।

साधना प्रारम्भ करने से पूर्व इस बात का ध्यान रखें कि नाभि में दृष्टि जमाने से ध्यान बहुत शीघ्र लगता है। जब ध्यान लग जाता है तो मंत्र सिद्धि में अधिक विलम्ब नहीं

होता। इसके पश्चात् मंत्र सिद्ध करने के लिये उसका जप प्रारम्भ करें। मंत्र किस स्थान पर, कितनी संख्या में, कब करना है यह सब अनुष्ठान में प्रयुक्त होने वाले मंत्रों के साथ-साथ लिखा गया है। विशेष साधना सिद्धि के लिये सर्वोत्तम काल- नवरात्रा, दशहरा, दीपावली, होली, ग्रहण काल तथा शिवरात्रि माने गये हैं।

शाबर मंत्रों का प्रभाव :

रामचरित मानस में संत शिरोमणी तुलसीदास ने एक जगह शाबर मंत्रों के सम्बन्ध में लिखा है-

कलि विलोकि जग हित हर गिरिजा, शाबर मंत्र जाल जिहि सिरजा।
अनमिल आखर अरथ न जापू, प्रगट प्रभाव महेश प्रतापू॥

इसे सौरठा के अभिप्राय: से शाबर मंत्रों के संबंध में अनेक तथ्यों का स्वत: रहस्योद्घाटन हो जाता है। तुलसीदास जी लिखते हैं कि कलियुग के संताप भोग रहे और विभिन्न प्रकार की पीड़ाओं से विचलित हो रहे जीवों को देखकर गिरिजा कुमारी का हृदय बहुत द्रवित हुआ और इन पीड़ाओं से सहज रूप में मुक्ति पाने का उपाय बताने की प्रार्थना भगवान शिव से की है। उसी समय भगवान शिव के मुख से इन शाबर मंत्रों का सृजन हुआ। यह शाबर मंत्र ठीक वैसे ही प्रभावी हैं जैसा कि भगवान राम का नाम, जिसके जाप करने मात्र से ही निरक्षर अनामिल के सामने राम को प्रकट होना पड़ा। ठीक ऐसे ही यह शाबर मंत्र हैं। इनका जाप किसी भी रूप में क्यों न किया जाये, इनका प्रभाव होकर ही रहता है।

यह शाबर मंत्र सीधे, सरल, अपरिष्कृत और ग्राम्य भाषा के अवश्य प्रतीत होते हैं, लेकिन प्रभाव में यह तांत्रोक्त, वैदिक मंत्रों से बिलकुल भी कम नहीं हैं। इसलिये इन मंत्रों का प्रसार सर्वत्र हुआ तथा प्राय: सभी प्रान्तों की भाषा में यह स्वीकार किये गये। यह शीघ्र प्रभावी होने वाले सरलतम मंत्र हैं। इनकी साधना एवं इनका प्रयोग करना भी सहज है। फिर भी इन शाबर मंत्रों का प्रभाव हर प्रकार की समस्याओं, चाहे उनका संबंध भौतिक, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक किसी भी स्थिति के साथ क्यों न हो, पर होता अवश्य है। इनके आधार पर शीघ्र ही निराकरण भी हो जाता है। शारीरिक स्वास्थ्य लाभ के लिये तो यह मंत्र बहुत ही अनुभूत एवं चमत्कारिक सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार जिन लोगों को भूतादि की बाधाएं सताती रहती हैं अथवा जो तंत्र आधारित अभिचार कर्मों का शिकार बनते रहते हैं, उनके लिये यह शाबर मंत्र विशेष सुरक्षा कवच का कार्य करते हैं।

शाबर मंत्र शीघ्र प्रभावी होते हैं, अत: साधकों को सदैव ऐसा प्रयास करना चाहिये कि इन मंत्रों के माध्यम से किसी का अनिष्ट न होने पाये। इन मंत्रों को केवल स्वकल्याण अथवा जनकल्याण के निमित्त ही प्रयोग में लाना चाहिये। इन शाबर मंत्रों का मारण,

मोहन, वीशकरण, उच्चाटन जैसे षट्कर्मों के रूप में कदापि प्रयोग नहीं करना चाहिये, क्योंकि ऐसे तंत्र प्रयोगों से साधक की अपने स्वार्थ की पूर्ति हो जाती है, परन्तु इससे साधना का निकृष्ट रूप ही प्रकट होता है। ऐसा कर्म करने से साधक अपने साधना मार्ग से भटक जाता है।

यद्यपि यह शाबर मंत्र स्वयंसिद्ध हैं, फिर भी अगर इन मंत्रों को उपयोग में लाने से पहले किसी विशेष शुभ मुहूर्त जैसे होली, दीपावली की रात्रि अथवा शिवरात्री, दशहरा की रात्रि अथवा सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण के समय विधिवत् सिद्ध कर लिया जाये, तो यह और अधिक जाग्रत हो जाते हैं। ऐसे चेतना सम्पन्न मंत्र प्रयोग के समय शीघ्र फलदायी होते हैं। इन मंत्रों का प्रयोग रोगों के निवार्णनार्थ अथवा अन्य प्रकार की शारीरिक समस्याओं से मुक्ति दिलाने के उद्देश्य से किया जाता है।

एक बार होली, दीपावली की रात्रि को चेतना सम्पन्न किये मंत्रों को प्रयोग करते समय मोरपंख से झाड़ा देते हुये सात बार मंत्र उच्चारण करना ही पर्याप्त रहता है।

शाबर मंत्रों को जब होली, दीपावली या दशहरा आदि की रात्रियों को सिद्ध करना होता है तो उसके लिये भी एक विशेष प्रक्रिया प्रयोग में लायी जाती है। इस साधना प्रक्रिया में साधक को सबसे पहले गुरु मुख से मंत्र ग्रहण करके उसे स्मरण करना होता है और फिर गुरु आज्ञा लेकर निम्न तरह से साधना को सम्पन्न करना होता है।

जिस दीपावली, दशहरा अथवा होली या फिर अन्य किसी रात्रि को किसी शाबर मंत्र को सिद्ध करना हो तो उस दिन सबसे पहले स्नान-ध्यान कर शरीर शुद्धि कर लें। पूजा के लिये घर में ही कोई स्थान निश्चित कर लें। अगर यह स्थान घर के पूजास्थल के पास है तो उत्तम है अन्यथा अन्य सुविधाजनक स्थान का चयन कर लें। उस स्थान को गोबर से लीप कर स्वच्छ एवं शुद्ध कर लें। उस स्थान पर चौकी रख दें। चौकी के सामने ऊनी अथवा सूती कम्बल का आसन रखें और शांतचित्त होकर बैठ जायें। अब चौकी पर लाल रंग का वस्त्र बिछा ले। इतना ध्यान रखें कि आपको दक्षिण अथवा पश्चिम दिशा की ओर मुंह करके बैठना है।

इसके पश्चात् चौकी पर आटे के द्वारा तीन आड़ी और तीन तिरछी रेखाएं खींचते हुये नौ वर्गों की एक आकृति निर्मित कर लें। इस आकृति के ऊपरी तीनों खानों में, जिस मंत्र का जाप करना है उसका एक-एक बार उच्चारण करते हुये तीन गुड़ की ढेलियां रख दें। इसी प्रकार बीच वाले तीनों खानों में एक-एक बार मंत्र का जाप करते हुये एक-एक हल्दी की गांठ रख दें। नीचे के तीनों खानों में तीन-तीन बार मंत्रोच्चारण करते हुये क्रमशः तीन-तीन इलायची, लौंग और सुपारियां रख दें। अन्त में इनके मध्य घी का एक दीपक जलाकर रखना होता है।

इसके पश्चात् अभीष्ट देव का स्मरण करते हुये गुरु द्वारा प्रदत्त मंत्र का अभीष्ट संख्या में जाप पूरा करना होता है। सामान्यत: इस प्रकार की शाबर साधनाओं में ग्यारह माला अथवा पांच माला मंत्रजाप पूरा करने से ही मंत्र चेतना सम्पन्न हो जाता है।

इस प्रकार की शाबर साधनाओं में मंत्रजाप के लिये या तो रुद्राक्ष की माला काम में लायी जाती है अथवा हकीक या स्फिटिक माला का प्रयोग किया जाता है।

जब अभीष्ट संख्या में मंत्रजाप सम्पन्न हो जाता है तो उसके पश्चात् समस्त पूजा सामग्री को एकत्रित करके या तो जमीन के अन्दर गाढ़ दें अथवा बहते पानी में प्रवाहित करवा दें।

इस प्रकार शाबर मंत्र सिद्ध हो जाता है, जिसका प्रयोग कभी भी आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। यद्यपि प्रत्येक वर्ष इसी प्रकार मंत्र को चेतना सम्पन्न करने के लिये यही साधनाक्रम दोहराना पड़ता है।

शाबर मंत्रों और उनसे सम्बन्धित साधनाओं के चमत्कार सैंकड़ों बार देखने को मिले हैं। कई बार तो ऐसी विषम परिस्थितियों में भी शाबर अनुष्ठानों को प्रभावशाली होते हुये देखा है, जिनमें किसी विशेष कार्य का होना लगभग असंभव ही प्रतीत होता था या फिर उन कार्यों को पूरा करने में अन्य सभी उपाय प्रभावहीन सिद्ध हो चुके होते हैं। ऐसी स्थिति में शाबर मंत्रों के प्रयोग से वांछित लाभ की प्राप्ति हुई। इन प्रभावी प्रयोगों का उल्लेख नीचे किया जा रहा है-

उच्छिष्ट गणपति शाबर साधना

समय के साथ-साथ अनेक परिवर्तन अपने आप होते चले जाते हैं। यह परिवर्तन अक्सर लोगों की मानसिकता में आने वाले बदलाव के परिणामस्वरूप परिलक्षित होते हैं। आज ऐसा समय है जहां जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बहुत अधिक प्रतिस्पर्द्धा देखने में आ रही है। इस स्थिति का जो ठीक से सामना कर पाते हैं, वे निरन्तर उन्नति करते चले जाते हैं। अनेक लोगों से बहुत आगे निकल जाते हैं। जो पीछे रह जाते हैं, वे आगे निकले लोगों के प्रति ईर्ष्या से भर जाते हैं। ऐसे में उनका एकमात्र प्रयास रहता है कि किसी भी प्रकार से उन्हें चोट पहुंचाना, उन्हें परेशान करना। इसके लिये अनेक हत्थकण्डे अपनाये जाते हैं। इन्हीं में एक हत्थकण्डा यह भी है कि किसी को झूठे केस में फंसा कर अदालतों के चक्कर काटने को विवश कर देना। अनेक लोग इन्हीं कारणों से अदालतों में फंसे नजर आते हैं। कभी-कभी तो व्यक्तिगत शत्रुता निकालने के लिये भी ऐसा गलत कार्य कर देते हैं। ऐसी स्थिति में अक्सर आम व्यक्ति ही फंसता है। कभी-कभी तो ऐसे लोग भी फंस जाते हैं जिन्होंने कभी किसी अदालत का मुंह तक नहीं देखा था।

ऐसा लोगों के लिये उच्छिष्ट गणपति साधना बहुत लाभदायक सिद्ध होती है। भगवान

गणपति को समस्त प्रकार के सुख एवं वैभव देने वाले तथा कष्टों का हरण करने वाले देव के रूप में माना जाता है। इसलिये इस साधना के प्रभाव से अदालत में झूठे केसों में फंसे लोगों की समस्याओं का समाधान होने लगता है। इस साधना को अनेक साधकों द्वारा सम्पन्न किया गया है। उनमें से अधिकांश को अदालत ने सम्मान सहित बरी किया है। पाठकों के लिये इस साधना का उल्लेख कर रहा हूं।

इस शाबर गणपति अनुष्ठान के लिये सबसे पहले एक वट मूल (बरगद की जड़) निर्मित गणेश प्रतिमा, पांच गोमती चक्र और एक श्वेत चन्दन माला की आवश्यकता होती है। अनुष्ठान के लिये बैठने के लिये लाल रंग का ऊनी आसन, सिन्दूर, घी, धूप, दीप, लोबान, लाल कनेर के पुष्प, लाल रेशमी वस्त्र, स्वयं के पहनने के लिये एक लाल या श्वेत रंग की धोती, केसर से रंगा जनेऊ आदि वस्तुओं की आवश्यकता रहती है।

सबसे पहले किसी विशेष शुभ मुहूर्त जैसे कि होली, दीपावली, दशहरा अथवा ग्रहण आदि के समय किसी वट वृक्ष की जड़ खोदकर घर ले आयें और उसे गणपति प्रतिमा का रूप प्रदान करके अपने पास रख लें। उसी शुभ मुहूर्त में इस वट गणेश प्रतिमा की विधिवत् षोडशोपचार पूजा-अर्चना करके चेतना सम्पन्न कर लेना चाहिये। ऐसी चेतना सम्पन्न प्रतिमा ही अनुष्ठान को सम्पन्न करने के काम में लायी जाती है।

यह शाबर अनुष्ठान लगातार ग्यारह बुधवार को किया जाता है। इसे किसी शुक्लपक्ष की चतुर्थी तिथि अथवा शुक्लपक्ष के किसी भी बुधवार से प्रारम्भ किया जा सकता है। अगर इस शाबर अनुष्ठान को किसी प्राचीन गणेश मंदिर में बैठकर रात्रि के समय सम्पन्न किया जाये तो तत्काल इसका प्रभाव दिखाई देने लग जाता है। यद्यपि इस अनुष्ठान को किसी तालाब के किनारे स्थित वट वृक्ष के नीचे बैठकर अथवा घर पर भी किसी एकान्त कक्ष में सम्पन्न किया जा सकता है। अनुष्ठान काल में अन्य सदस्यों का प्रवेश इस कक्ष में वर्जित रहे।

इस शाबर अनुष्ठान के लिये रात्रि का समय उपयुक्त रहता है। इसे प्रातःकाल चार से सात बजे के मध्य भी किया जा सकता है। जिस दिन से इस अनुष्ठान को शुरू करना हो, उस दिन रात्रि के नौ बजे के आसपास स्नान करके शरीर शुद्धि कर लें। स्वच्छ श्वेत या लाल रंग की धोती शरीर पर धारण कर लें। शरीर का शेष भाग निवस्त्र ही रहे। इसके पश्चात् अपने पूजाकक्ष में जाकर लाल ऊनी आसन बिछाकर पूर्वाभिमुख होकर बैठ जायें। अगर यह अनुष्ठान गणेश मंदिर में बैठकर सम्पन्न करना हो तो उस स्थिति में पूर्वाभिमुख होकर बैठना आवश्यक नहीं है। उस स्थिति में गणेश प्रतिमा के सामने मुंह करके बैठना ही पर्याप्त रहता है।

आसन पर बैठने के पश्चात् अपने सामने लकड़ी की एक चौकी रख कर उसके ऊपर लाल रंग का रेशमी वस्त्र बिछा लें। चौकी पर चांदी या तांबे की एक प्लेट रख कर

उसमें केसर से एक स्वस्तिक की आकृति बनायें और उस पर चेतना सम्पन्न वट मूल निर्मित गणपति प्रतिमा को स्थापित कर दें।

एक कांसे की कटोरी में घी और सिन्दूर को ठीक से मिला लें तथा अग्रांकित गणपति मंत्र का ग्यारह बार उच्चारण करते हुये पहले गणेश प्रतिमा को गंगाजल के छींटें दें और फिर उस पर सिन्दूर का लेप कर दें।

गणपति मंत्र है-

ॐ वट वरदाय विजय गणपतये नमः।

सिन्दूर लेपन के पश्चात् उपरोक्त मंत्र का उच्चारण करते हुये गणेश प्रतिमा पर 21 लाल कनेर के पुष्प चढ़ावें। उन्हें अक्षत, पान, सुपारी और दूर्वा अर्पित करें। फिर गणेश जी पर इसी मंत्र का उच्चारण करते हुये एक-एक करके पांचों गोमती चक्र भी अर्पित कर दें। गोमती चक्रों को अर्पित करने से पहले एक-एक लौंग, इलाइची और थोड़े से अक्षत अर्पित करें। इनके साथ ही गणपति के सामने घी का दीपक प्रज्ज्वलित करके रखें। गणपति को नैवेद्य के रूप में गुड़ और थोड़े से भुने हुये चने रखे जाते हैं।

चौकी पर ही गणेश प्रतिमा के बायीं तरफ एक मिट्टी के बर्तन में गाय का जला हुआ कण्डा रखकर उसमें लोबान, सुगन्धबाला, सूखे हुये लाल गुलाब की पंखुड़ियां एवं घी की बार-बार धूनी दें। तत्पश्चात् अपनी आंखें बंद करके तथा हाथों से ज्ञानमुद्रा (हथेलियों को खुला रख कर अंगुष्ठा मूल की ओर तर्जनी के प्रथम पोर का स्पर्श करना) बनाकर पूर्ण भक्तिभाव से अपनी प्रार्थना को बार-बार दोहराते रहें।

वट मूल निर्मित यह गणपति प्रतिमा इतनी चेतना सम्पन्न बन जाती है कि जब साधक पूर्ण तन्यमयता के साथ अपनी प्रार्थना करता है, तो अनुष्ठान के प्रारम्भिक दिनों में ही वह एक विशेष प्रकार का कम्पन शरीर में अनुभव करने लग जाता है।

इस अनुष्ठान के दौरान अन्तिम ग्यारहवें बुधवार तक गणपति के सवा लाख मंत्रों का जाप करना होता है। अतः प्रत्येक रात्रि को कितने मंत्रों का जाप करना है, इसका निर्णय आप ही करें। इस अनुष्ठान में मंत्रजाप के लिये श्वेत चंदन माला का प्रयोग किया जाता है। चंदन माला की जगह स्फटिक माला का प्रयोग भी किया जा सकता है। इस प्रकार के अनुष्ठानों में कभी भी पहले पूजा-पाठ के काम में लायी गई वस्तुओं का पुनः प्रयोग नहीं करना चाहिये। इसका कारण यह बताया जाता है कि किसी भी तरह के अनुष्ठानों में प्रयुक्त की जाने वाली तांत्रोक्त वस्तुएं विशेष शक्ति सम्पन्न रहती हैं और उनकी यह शक्तियां पूजा-पाठ, अनुष्ठानों के दौरान प्रभावित होती रहती हैं। अतः प्रत्येक अनुष्ठान में सदैव नवीन चीजों को ही प्रयोग में लाना चाहिये।

इनके अलावा भी कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना चाहिये। जैसे कि पूरे जपकाल

के दौरान घी का दीपक निरन्तर जलते रहना चाहिये तथा मिट्टी के बर्तन में भी निरन्तर लोबान, घी आदि की समिधा अर्पित करते रहना चाहिये।

जब प्रथम दिन का मंत्रजाप पूर्ण संख्या में सम्पन्न हो जाये तो एक बार पुनः अपनी प्रार्थना को गणपति के सामने दोहरा लेना चाहिये। तत्पश्चात् ही गणपति की आज्ञा लेकर आसन से उठना चाहिये।

गणपति को जो गुड़ और भुने चने का नैवेद्य चढ़ाया जाता है। जप के पश्चात् उसमें से थोड़ा सा अंश निकाल कर मिट्टी के बर्तन की अग्नि को अर्पित करना चाहिये। उसका थोड़ा सा अंश कौये अथवा काले कुत्ते को खिला देना चाहिये तथा थोड़ा सा अंश स्वयं ग्रहण करके शेष को पानी में प्रवाहित कर देना चाहिये।

इस शाबर गणपति अनुष्ठान का यह क्रम निरन्तर 31 दिन तक इसी प्रकार ही बनाये रखना चाहिये। यद्यपि इस अनुष्ठान के दौरान अपने सभी घरेलू अथवा व्यवसाय संबंधी कार्यों को पूर्ण रूप से जारी रखा जा सकता है, नौकरी आदि पर भी जाया जा सकता है, लेकिन पूरे अनुष्ठानकाल में पूर्ण सदाचार का पालन अवश्य करना चाहिये। दिन में केवल एक समय सुपाच्य भोजन ग्रहण करें। ब्रह्मचर्य का पालन करें, अनुष्ठान के बीच-बीच में भी अपने अनुभवों पर गुरु के साथ विचार-विमर्श करते रहें।

पूरे अनुष्ठान काल के दौरान मंत्रजाप के पश्चात् तेल का एक दीया जलाकर घर की मुण्डेर पर अथवा किसी वट/पीपल (बेरी वृक्ष) के नीचे अवश्य रख दें। इस दीये का इस अनुष्ठान में विशेष महत्व होता है।

इस साधना क्रम को अगले ग्यारह बुधवार तक इस प्रकार से बनाये रखना चाहिये।

प्रत्येक रात्रि को स्नान करके स्वच्छ श्वेत या लाल धोती पहन कर ही अनुष्ठान में बैठना चाहिये। चौकी पर एकत्रित हुई पूजा सामग्री को तथा मिट्टी के बर्तन की राख को किसी पात्र में भर कर एकत्रित करते रहना चाहिये। प्रत्येक दिन वटमूल निर्मित गणेश प्रतिमा को गंगाजल के छींटे मारकर घी मिश्रित सिन्दूर का लेपन करना चाहिये। मंत्रोच्चार के साथ नियमित रूप से 21 लाल कनेर के पुष्प, अक्षत, पान, सुपारी और पांचों गोमती चक्रों को पूर्ववत् अर्पित करते रहना चाहिये। इसके पश्चात् दीपदान करके गुड़ और भुने चने का नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। तत्पश्चात् प्रथम दिन की भांति मिट्टी के बर्तन में आग जलाकर लोबान, लाल गुलाब की पंखड़ियां, सुगंधबाला और घी मिश्रित समिधा अर्पित करनी चाहिये।

इसके बाद अपनी आंखें बन्द करके और हाथों से ज्ञानमुद्रा बनाकर पूर्ण एकाग्रता के साथ अपनी प्रार्थना को बार-बार दोहराना चाहिये तथा गणपति से आज्ञा लेकर चंदन अथवा स्फटिक माला पर 4000 मंत्रजाप पूर्ण कर लेने चाहिये।

जपोपरान्त की सम्पूर्ण प्रक्रिया को भी पूर्ववत् ही बनाये रखना चाहिये। आसन से उठने से पहले अपनी प्रार्थना को पुनः दोहरा लेना चाहिये तथा गणपति की आज्ञा लेकर ही आसन से उठना चाहिये। गणपति को अर्पित किये गये नैवेद्य का उपयोग भी पूर्ववत् करना चाहिये। साथ ही आसन से उठने के बाद तेल का एक दीप जलाकर घर की मुण्डेर अथवा वट या पीपल या बेरी वृक्ष के नीचे रख देना चाहिये।

अनुष्ठान का यही क्रम है जो पूरे अनुष्ठान काल में बना रहता है। जिस दिन यह अनुष्ठान पूर्ण होने वाला होता है उस दिन नैवेद्य के रूप में गुड़ और भुने चनों के साथ मोतीचूर के लड्डू भी गणेश को अर्पित किये जाते हैं, साथ ही उस दिन मंत्रजाप पूर्ण हो जाने के पश्चात् 51 मंत्रों से घी की आहुतियां मिट्टी के बर्तन में दी जाती है। पांच कन्याओं को मिष्ठान आदि के साथ भोजन करवा कर एवं दान-दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाता है।

अनुष्ठान समाप्ति के पश्चात् गणपति प्रतिमा को छोड़कर शेष समस्त सामग्रियों को नये लाल रंग के वस्त्र में बांध करके बहते हुये पानी में प्रवाहित कर दिया जाता है, जबकि गणपति प्रतिमा को अपने पूजास्थल पर प्रतिष्ठित कर लिया जाता है।

इस प्रकार इस शाबर गणपति अनुष्ठान को सम्पन्न करने से निश्चित ही मुकदमे के निर्णय को अपने अनुकूल बदला जा सकता है। जब तक मुकदमे की कार्यवाही पूर्ण न हो जाये, तब तक मुकदमे की प्रत्येक तारीख पेशी से पहले पड़ने वाले बुधवार को उक्त गणेश प्रतिमा के सामने बैठकर अपना यथाशक्ति (पांच या तीन माला) मंत्रजाप के क्रम को बनाये रखना चाहिये। न्यायालय की कार्यवाही के दौरान मानसिक रूप से मंत्र का जाप करते रहना चाहिये। यह शाबर पद्धति पर आधारित एक अद्‌भुत एवं प्रभावशाली अनुष्ठान है, जिसका प्रभाव अवश्य ही सामने आता है।

एक सबसे महत्त्वपूर्ण बात की तरफ आपका ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है। उच्छिष्ट गणपति की यह साधना केवल वही साधक करे जो बिना किसी विशेष कारण से अदालत में किसी मुकदमे में फंसा दिया गया हो। ऐसे व्यक्ति की ही गणपति सहायता करते हैं और उसे अवश्य समस्याओं और दुःखों से उभार लेते हैं। जो व्यक्ति जानबूझ कर किसी अपराध में लिप्त हुआ हो अथवा कोई आदतन अपराधी प्रवृत्ति का है, वह इस साधना को न करे। अगर ऐसे व्यक्ति यह साधना करते हैं तो उन्हें लाभ प्राप्त नहीं होगा।

नौकरी पाने के लिये शाबर प्रयोग

शाबर साधनाएं मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, विद्वेषण जैसे षट्कर्मों से ही रक्षा प्रदान नहीं करती और न ही यह केवल रोग निवारण आदि तक सीमित हैं, अपितु यह साधकों को जीवन में ठीक से व्यवस्थित होने और जीवन में सफलता के शिखर तक

पहुंचाने में भी सहायता प्रदान करती हैं। इन शाबर साधनाओं के माध्यम से एक साधक अपने व्यापार को अधिक विस्तृत रूप तक फैला सकता है। बंद और घाटे में चल रहे व्यवसाय की स्थिति में सुधार ला सकता है। बिक्री को बढ़ा सकता है। यहां तक कि ऐसी साधनाओं के माध्यम से अपने अनुकूल आजीविका (नौकरी) भी प्राप्त कर सकता है। शाबर मंत्रों की साधनाएं ऐसी सभी स्थितियों में काफी लाभकारक सिद्ध होती हैं।

आमतौर पर ऐसा देखने में आता है कि बहुत से युवक और युवतियों के पास अच्छी योग्यता, प्रतिभा और क्षमता होने के उपरांत उन्हें अपने अनुकूल नौकरी प्राप्त नहीं हो पाती है। ऐसे लोगों को विवशतावश साधारण नौकरियों पर समझौता करना पड़ता है अथवा उन्हें अपनी शैक्षिक योग्यता एवं प्रतिभा को फाइलों तक समेट कर छोटा-मोटा काम-धन्धा करने के लिये मजबूर होना पड़ता है। हमें अक्सर अपने आस-पास, परिवार, आस-पड़ौस में ऐसे युवा देखने को मिल जायेंगे, जिन्होंने अपने जीवन के प्रथम 20-25 वर्ष तक तो शिक्षा आदि के क्षेत्र में कई तरह के कीर्तिमान स्थापित किये होते हैं, कई तरह की व्यावसायिक शैक्षिणक योग्यता में उच्च दक्षता प्राप्त की होती है, किन्तु वह व्यावहारिक जीवन में एक तरह से हार जाते हैं। अथक् प्रयासों के उपरान्त जो अपने अनुकूल नौकरी या व्यवसाय नहीं ढूंढ पाते, वे एक तरह से निराशा, हताशा और अभाव का जीवन जीने को अभिशप्त हो जाते हैं। हताश युवाओं की संख्या हमारे देश में करोड़ों में है।

जीवन में सफलता प्राप्त करना अथवा लाख प्रयासों के उपरांत भी निरन्तर असफल रहना प्रारब्ध के अधीन है। ऐसे बेरोजगार लोगों के लिये शाबर पद्धति में ऐसी अनेक उपयोगी प्रक्रियायें एवं अनुष्ठान हैं जिन्हें विधि-विधान के साथ सम्पन्न कर लेने पर अनुकूल आजीविका की व्यवस्था शीघ्र हो जाती है। यह शाबर साधनाएं मनोनुकूल नौकरी प्राप्त करने में काफी सहायक सिद्ध होती हैं। इन साधनाओं का लाभ असंख्य लोगों ने उठाया भी है। आगे इसी प्रकार के एक शाबर अनुष्ठान का उल्लेख किया जा रहा है।

अनुष्ठान की विधि :

आजीविका प्राप्त करने, आर्थिक अभाव की स्थिति को दूर करने के साथ भाग्योदय के लिये यह एक अद्‌भुत शाबर अनुष्ठान है। यह अनुष्ठान कुल 40 दिन का है। इस अनुष्ठान के रूप में गौमाता के रूप में **पद्मावती देवी** साधना सम्पन्न की जाती है। देवी पद्मावती प्रसन्न होकर शीघ्र ही साधक को मनोनुकूल नौकरी की व्यवस्था करवा देती हैं।

आवश्यक सामग्री :

इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये सात सप्तमुखी रुद्राक्ष, श्वेत चन्दन अथवा स्फटिक की माला, चमेली के तेल का दीपक, गाय का कच्चा दूध, अक्षत, कम्बल का आसन, नैवेद्य के रूप में गुड़, केसर, गाय का घी, समुद्रफेन, गुगल, मिट्टी का बड़ा बर्तन

आदि वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है।

इस अनुष्ठान को शुरू करने के लिये शुक्लपक्ष का मंगलवार अथवा शनिवार का दिन अति शुभ रहता है। अगर इस अनुष्ठान को रात्रि के नौ बजे के बाद से सम्पन्न किया जाये तो उत्तम रहता है अन्यथा इसे प्रातःकाल के पांच बजे के आस-पास से भी शुरू किया जा सकता है। इस अनुष्ठान के दौरान साधक को पूर्वाभिमुख होकर बैठना पड़ता है।

अगर यह अनुष्ठान किसी प्राचीन देव मंदिर में बैठकर अथवा किसी बड़े वृक्ष के नीचे बैठकर सम्पन्न किया जाये तो और भी अच्छा रहता है अन्यथा इसे अपने घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है। घर पर अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये किसी एकान्त कमरे का चुनाव साधना के लिये किया जाता है। इस कक्ष को अनुष्ठान शुरू करने से पहले ठीक से स्वच्छ एवं पवित्र कर शुद्ध कर लेना चाहिये। ऐसा प्रयास करना चाहिये कि अनुष्ठान सम्पन्न होने तक इसमें परिवार का अन्य कोई सदस्य प्रवेश न करे।

अनुष्ठान शुरू करने के लिये सबसे पहले स्नान एवं नित्यकर्म आदि से निवृत्त हो जायें। अनुष्ठान में बैठने के लिये श्वेत रंग की धोती धारण करना आवश्यक है। शरीर का ऊपरी भाग निर्वस्त्र बना रहे तो अच्छा है अन्यथा धोती के एक सिरे को मोड़ कर कंधों के ऊपर तक लपेटा जा सकता है।

इसके बाद साधक को शांत भाव से साधना स्थल पर जाकर कम्बल के आसन के ऊपर पूर्व की ओर मुंह करके बैठ जाना चाहिये। अपने मन को शांत एवं प्रसन्नचित्त बनाये रखने का प्रयास करना चाहिये। मन में डर या भय का भाव न उठे, इस बात का भी विशेष ध्यान रखना चाहिये।

आसन पर बैठकर अपने सामने की जमीन को गाय के गोबर से लीप कर शुद्ध कर लें। उस पर आटे से एक स्वस्तिक बनाकर उसके मध्य चावलों की एक ढेरी बना लें। इस चावल की ढेरी पर चमेली के तेल का एक दीपक जलाकर रख दें। इस दीपक के सामने एक-एक करके सातमुखी रुद्राक्ष पंचामृत अथवा गंगाजल के छींटें मारकर रख दें। यह सप्तमुखी रुद्राक्ष सप्त मातृकाओं के प्रतीक हैं, जो लक्ष्मी, वैभव, ऐश्वर्य और आरोग्यता प्रदान करती हैं। पद्मावती की पूजा-अर्चना में इनका विशेष स्थान रहता है। अतः सातों रुद्राक्षों को अर्पित करते समय क्रमशः निम्न मंत्रों का उच्चारण करते रहना चाहिये।

सर्वप्रथम **ॐ कुलेश्वयै नमः** के साथ **कुलेश्वरी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** मंत्र बोलते हुये पहला रुद्राक्ष अर्पित करें।

फिर **ॐ वागीश्वयै नमः** के साथ **वागीश्वरी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** मंत्र का उच्चारण करते हुये दूसरा रुद्राक्ष माँ को अर्पित करें। इसके उपरान्त क्रमशः -

ॐ उमायै नमः के साथ **उमा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः,**

ॐ श्रियै नमः के साथ **श्रीं श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः,**

ॐ चण्डायै नमः के साथ **चण्डा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः,**

ॐ धूम्रायै नमः के साथ **धूम्रा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः**

और अन्त में **ॐ रुद्रकाल्यै नमः** के साथ **रुद्रकाली श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** मंत्र का उच्चारण करते हुये सातवें रुद्राक्ष को भी दीपक के सामने रख दें।

इसके पश्चात् चमेली के दीपक पर पद्मावती देवी का आह्वान करते हुये एक मिट्टी के पात्र में गाय का कच्चा दूध, थोड़ा सा गुड़ और केसर डाल कर रख दें।

मिट्टी का एक अन्य बर्तन लेकर उसमें गाय के कण्डे की सुलगती हुई आग रख कर उसे घी, गुगल, श्वेत चन्दन बुरादा, समुद्रफेन आदि के मिश्रण से तैयार की गई समिधा की आहुति देते हुये स्फटिक या श्वेत चन्दन माला पर अग्रांकित मंत्र की दस मालाओं का जाप सम्पन्न कर लें।

माँ पद्मावती का जाप शुरू करने से पहले पूर्ण श्रद्धाभाव के साथ माँ के सामने अपनी प्रार्थना को दोहरा लेना चाहिये तथा उन्हीं की आज्ञा प्राप्त करके मंत्रजाप शुरू करना चाहिये।

पद्मावती देवी का मंत्र इस प्रकार है-

ॐ नमः भगवती पद्मावती ऋद्धि सिद्धि दायिनी, दुःख दारिद्रय हारिणी श्री श्री ॐ नमः कामाक्षायै नमः ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।

जब दस मालाओं का मंत्रजाप पूर्ण हो जाये तो पूर्ण श्रद्धा एवं समर्पित भाव से मानसिक रूप से देवी को प्रणाम करें। मंत्रजाप से पहले पद्मावती देवी के सामने जो प्रार्थना की गयी थी, उसे एक बार पुनः दोहरा लें। आसन छोड़ने से पहले देवी की आज्ञा अवश्य प्राप्त कर लें। साथ ही पूजा में गुड़ के रूप में रखे गये नैवेद्य को किसी गाय को खिला दें। मिट्टी के पात्र में रखा दूध कुत्ते को पिला दें अथवा पीपल वृक्ष की जड़ पर चढ़ा दें।

इस प्रकार प्रथम दिन का अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है। अनुष्ठान का यही क्रम निरन्तर अगले 40 दिन तक इसी प्रकार बनाये रखना चाहिये। इसमें प्रत्येक दिन चमेली का दीपक प्रज्ज्वलित करके चावल की ढेरी पर रखना और उसके सामने प्रथम दिन की भांति ही सात मातृकाओं के मंत्रोच्चार के साथ क्रमशः एक-एक करके सातों रुद्राक्ष को गंगाजल अथवा पंचामृत से स्नान कराकर रखते जाना चाहिये। प्रत्येक दिन मिट्टी के बर्तन में गाय का कच्चा दूध और गुड़ का नैवेद्य अवश्य रखना चाहिये। मिट्टी के दूसरे बर्तन में अग्नि प्रज्ज्वलित कर गूगल आदि की धूनी देनी चाहिये।

इनके अलावा प्रतिदिन देवी पद्मावती के सामने अपनी प्रार्थना को दोहराकर उन्हीं की आज्ञा लेकर मंत्रजाप पूर्ण करना चाहिये। आसन छोड़ने से पहले भी उनकी आज्ञा प्राप्त

कर लेनी चाहिये तथा पुनः अपनी प्रार्थना को दोहरा लेना चाहिये। इसके साथ ही गुड़ गाय को और दूध कुत्ते अथवा पीपल वृक्ष की जड़ पर चढ़ा देनी चाहिये।

इस शाबर अनुष्ठान के समय अधिक संयम की आवश्यकता होती है। अगर अनुष्ठान के दौरान पूर्ण पवित्रता का ध्यान रखा जाये और साधना कक्ष में ही शयन किया जाये तो अनेक प्रकार की आलौकिक अनुभूतियां भी साधकों को होने लग जाती हैं। अनेक साधकों ने स्वप्न के दौरान देवी के दर्शन होने की बात स्वीकार की है।

40वें दिन, जब यह शाबर अनुष्ठान निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हो जाये तो दो रुद्राक्षों को छोड़कर शेष समस्त पूजा सामग्री को एक नये श्वेत वस्त्र में बांधकर किसी कुयें में डलवा दें अथवा भूमि में गहरा गाढ़ दें। शेष दो रुद्राक्षों को लाल रेशमी धागे में पिरोकर अपने शरीर पर धारण कर लें। अनुष्ठान समाप्ति के दिन और उसके भी ग्यारह दिन बाद तक एक गाय को गुड़ खिलाते रहें। इसी तरह जिस दिन नौकरी की परीक्षा अथवा साक्षात्कार (इंटरव्यू) आदि के लिये जायें तो उस दिन भी अपनी सुविधानुसार मंत्रजाप करके, गाय को गुड़ देकर जायें। नौकरी मिलने की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं। यह शाबर अनुष्ठान असंख्य लोगों द्वारा परीक्षित है।

नौकरी प्राप्त करने के लिये सामान्य एवं उपयोगी अन्य मंत्र :

जो व्यक्ति लम्बे समय से नौकरी प्राप्ति के लिये प्रयास कर रहा है लेकिन उसे कहीं पर सफलता प्राप्त नहीं हो रही है तो उसे अग्रांकित मंत्र का प्रयोग करके लाभ लेना चाहिये-

ॐ नमो आदेश गुरु को। धरती में बैठ्या लोहे का पिण्ड, राख लगाता गुरु गोरखनाथ। आवन्ता-जावन्ता-धावन्ता हाँक देत, धार-धार मार-मार। शब्द साँचा पिण्ड काँचा। फुरो मंत्र, ईश्वरो वाचा।

यह मंत्र अत्यन्त प्रभावी सिद्ध होता है। इसे शुक्लपक्ष की द्वितीया तिथि से जप करना प्रारम्भ करें। इसके लिये सूती अथवा ऊनी आसन का प्रयोग किया जाना चाहिये। प्रतिदिन इस मंत्र का 108 बार जाप करें। यदि सम्भव हो तो उपरोक्त मंत्र जाप के साथ खीर से 10 आहुतियां अग्नि में भी दें। इससे अर्थाभाव में कमी आयेगी और मनवांछित नौकरी प्राप्त होने के अवसर बढ़ेंगे। इसमें एक विशेष बात यह ध्यान रखें कि उपाय करने के साथ-साथ आप नौकरी प्राप्त करने के लिये भरपूर प्रयास करते रहें। आप जितने अधिक कर्म इस दिशा में करेंगे उतने ही नौकरी प्राप्ति के अवसर बढ़ेंगे।

एक अन्य मंत्र :

यह मंत्र भी नौकरी प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुआ है। असंख्य साधक इस मंत्र का प्रयोग कर नौकरी प्राप्त करने में सफल रहे हैं।

पाठकों के लिये इस मंत्र का यहां उल्लेख कर रहा हूं। यह मंत्र भी अन्य मंत्रों की तरह सहज एवं सरल है तथा इसकी विधि भी बहुत आसान है। मंत्र इस प्रकार है-

ॐ नमो नगन चीटी महावीर, हूं पूरो तोरी आश, तूं पूरो मोरी आश।

इस मंत्र का जाप 40 दिनों तक निरन्तर करना होता है। मंत्रजाप का श्रेष्ठ समय प्रात:काल माना गया है। इस उपाय में मंत्रजाप की संख्या आपकी क्षमता एवं इच्छा पर आधारित है। प्रतिदिन प्रात:काल नित्य कर्म से निवृत्त होकर उपरोक्त मंत्र का जितना संभव हो सके, उतना जाप करें।

इसके साथ ही एक अन्य उपाय भी इस प्रकार से करें- भुने हुये चने, शर्करा एवं घृत को यथाशक्ति प्राप्त करके उन्हें पिसवा लें। इस पिसे हुये मिश्रण को थोड़ी मात्रा में लेकर प्रात:काल चींटी के बिलों के आस-पास डालें। ऐसा करते समय भी उपरोक्त मंत्र का मानसिक जाप करते रहे। इस मंत्र के प्रयोग से आपकी समस्त मनोकामनायें शीघ्र पूर्ण होंगी। अगर आपके कार्यों में कोई ग्रह बाधा डाल रहे हैं तो वह बाधायें भी दूर होंगी। जो व्यक्ति नौकरी की तलाश में हैं उन्हें शीघ्र ही नौकरी प्राप्त होने के अवसर प्राप्त होने लगेंगे। इस मंत्र एवं विधि के प्रभाव से जिन व्यक्तियों का भाग्य सोया हुआ है, उनका भाग्य उदय होगा। परिणामस्वरूप वे तीव्रता के साथ उन्नति के पथ पर अग्रसर होंगे।

विवाह बाधा निवारक प्रयोग

कामनाओं की सिद्धि एवं कष्टों से मुक्ति पाने में मंत्रों की शक्तियों को सभी लोग स्वीकार करते हैं। यहां बात शाबर मंत्रों की जा रही है। अन्य मंत्रों की भांति ही शाबर मंत्रों का प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर प्रभावी सिद्ध होता है। विवाह जैसे मांगलिक कार्यों में आने वाली बाधाओं को दूर करने में भी यह अति प्रभावी सिद्ध होते हैं।

विवाह को जीवन की एक ऐसी आवश्यकता माना गया है जिसकी अनदेखी एवं उपेक्षा कोई नहीं कर सकता। माता-पिता का यह दायित्व रहता है कि वे अपने बेटे अथवा बेटी का विवाह अच्छे घर में करें ताकि उनका गृहस्थ जीवन सुख एवं आनन्द के साथ व्यतीत हो सके। इसके बाद पति-पत्नी पर यह दायित्व आता है कि वे अपने दाम्पत्य जीवन को बिना किसी प्रकार के तनाव अथवा कलह के आनन्द और प्रेम के साथ व्यतीत करें। इसके बाद उन पर भी अपने माता-पिता जैसा दायित्व आ जाता है जहां वे अपने बच्चों के विवाह के लिये प्रयास करते देखे जाते हैं। सुखद जीवन और दायित्वों के बोध के लिये विवाह को आवश्यक माना है।

प्रत्येक व्यक्ति का प्रारब्ध उसके भाग्य के रूप में उसके साथ-साथ आता है जिसके अच्छे और बुरे प्रभावों को भोगना ही पड़ता है। यही कारण है कि कभी-कभी किसी-किसी के विवाह में असंख्य बाधायें उभरने लगती हैं। विवाह के सम्बन्ध बनते नहीं,

अगर बनते हैं तो किसी कारण से बनने से पहले टूट जाते हैं, अगर सम्बन्ध बन भी जाते हैं तो दाम्पत्य जीवन में कलह और तनाव बना रहता है। सम्बन्धों में इतनी कटुता भर जाती है कि वैवाहिक जीवन की सार्थकता ही गुम होने लगती है। यह सभी प्रकार का समय इतना अधिक विचलित करने वाला होता है कि माता-पिता से लेकर पति-पत्नी तक इनके निवारण एवं समाधान का मार्ग तलाश करने लगते हैं। ज्योतिषियों से परामर्श लेने से लेकर विभिन्न प्रकार के पूजा-अनुष्ठान, विभिन्न प्रकार के उपाय और कभी-कभी तो अधिक परेशान व्यक्ति, टोना-टोटका तक करने को विवश हो जाते हैं। इस प्रकार के उपाय करने का केवल एक ही मन्तव्य रहता है कि किसी प्रकार से उनके बेटे अथवा बेटी का विवाह एक अच्छे घर में हो जाये। हमारे प्राचीन धर्मग्रंथों में प्राय: जीवन में आने वाली किसी भी समस्या के समाधान का विधान उल्लेखित है। यह विधान अधिकांशत: वैदिक मंत्रों पर आधारित हैं जिनकी भाषा संस्कृत होने के कारण आम व्यक्ति इनका वांछित प्रयोग नहीं कर पाता है। ऐसे लोगों के लिये **शाबर मंत्रों** का प्रयोग विशेष फलदायी माना गया है।

पूर्व में स्पष्ट किया जा चुका है कि शाबर मंत्रों की भाषा सामान्य बोल-चाल जैसी है, शब्दों का संयोजन भी काफी अटपटा सा लगता है किन्तु यदि सच्ची आस्था और पूर्ण विश्वास के साथ शाबर मंत्रों का विधि-विधान से प्रयोग किया जाये तो इसका सकारात्मक प्रभाव शीघ्र देखने को मिलता है। यहां मैं एक ऐसे ही शाबर अनुष्ठान के प्रयोग का उल्लेख कर रहा हूं। इस अनुष्ठान के प्रभाव से विवाह विलम्ब तथा दाम्पत्य कलह जैसी स्थितियों का निवारण होने लगता है। अनेक ऐसी स्त्रियां हैं जिनका पहले किसकी अच्छे घर में रिश्ता नहीं हो रहा था किन्तु इस शाबर अनुष्ठान के पश्चात् न केवल अच्छे घर में रिश्ता हुआ, वरन पति भी ऐसा मिला जिसके बारे में वे सपने देखा करती थी। ऐसी ही स्थिति अनेक युवकों के साथ भी देखने में आई है। एक बात मैं विशेष रूप से बता दूं कि इस प्रयोग से बहुत से साधकों को शीघ्र ही सार्थक परिणाम प्राप्त होने लगते हैं किन्तु इनमें से अनेक ऐसे भी हैं जिन्हें परिणाम तुरन्त प्राप्त नहीं होते हैं अर्थात् उनकी कामना पूरी होने में कुछ समय लग जाता है। ऐसे साधकों से मेरा यह निवेदन है कि वे निराश न हों और न इस अनुष्ठान के प्रति गलत विचारधारा बनायें। वे पूरे मनोयोग के साथ यह प्रयोग करते रहें। निश्चित ही उनकी मनोकामना भी अवश्य पूरी होगी।

आवश्यक सामग्री :

इस शाबर अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये सबसे महत्वपूर्ण चीज है कात्यायनी यंत्र। यह यंत्र चांदी पर उत्कीर्ण अथवा भोजपत्र पर अष्टगंध या पंचगंध से तैयार किया गया हो सकता है। यंत्र चेतना सम्पन्न हो तो लाभ शीघ्र मिलता है। इसके अलावा कुम्हार के घर से लायी गई कच्ची मिट्टी की हंडिया, सात मिट्टी के दीये, एक पंचमुखी रुद्राक्ष,

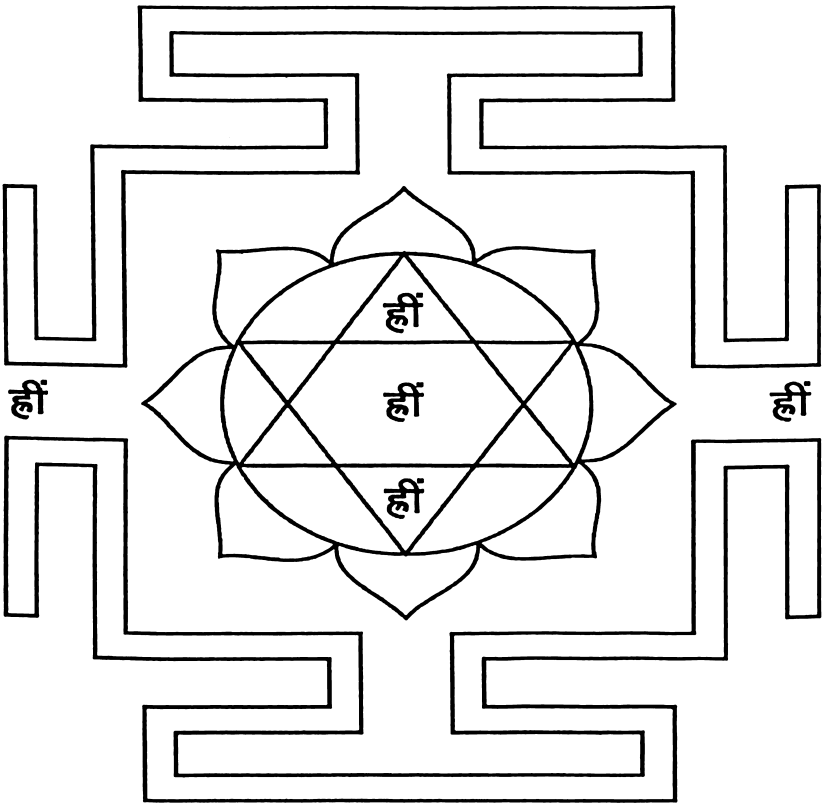

कात्यायनी यंत्र

एक मोती सीप, लाल रंग के वस्त्र, लोबान, समुद्रफेन, राई, मंत्रजाप के लिये लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला और बैठने के लिये लाल या श्वेत रंग के ऊनी अथवा कुशा आसन की आवश्यकता है।

यह अनुष्ठान यद्यपि 40 दिन का है, लेकिन इसे तब तक जारी रखा जा सकता है, जब तक कि अभीष्ट कार्य (विवाह कार्य अथवा कलह का अन्त) सम्पन्न न हो जाये।

इस शाबर अनुष्ठान को किसी भी शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि से अथवा अपनी सुविधानुसार शुक्लपक्ष को किसी भी मंगलवार के दिन से प्रारम्भ किया जा सकता है। इस अनुष्ठान को स्वयं युवक अथवा युवती सम्पन्न करें तो अति उत्तम है अथवा उनकी जगह पर घर का कोई अन्य सदस्य भी संकल्प लेकर सम्पन्न कर सकता है। अनुष्ठान को सम्पन्न करने से पहले शाबर साधनाओं के किसी विद्वान अथवा संत का मार्गदर्शन प्राप्त कर लेना इस प्रयोग को निश्चित सफलता प्रदान करता है।

इसी प्रकार अगर इस शाबर अनुष्ठान को किसी प्राचीन शिवालय में बैठकर अथवा जलस्रोत के किनारे स्थित किसी वट या आंवले के वृक्ष के नीचे बैठकर सम्पन्न किया

जाये तो और भी प्रभावशाली सिद्ध होता है। यद्यपि विवशतावश इस अनुष्ठान को घर पर भी सम्पन्न किया जा सकता है। घर पर अनुष्ठान करने से पहले साधनाकक्ष को शुद्ध एवं पवित्र कर लें तथा उस स्थान को गोबर से लीप लें।

सबसे पहले इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये दिन सुनिश्चित कर लें तथा सभी आवश्यक वस्तुएं एकत्रित कर लें। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये प्रातःकाल पांच बजे के आसपास का समय अधिक उपयुक्त रहता है। इस ब्रह्म मुहूर्त में सारा वातावरण शांत बना होता है, साथ ही शाबर साधकों के उपास्य देव का पहरा भी चल रहा होता है। वैसे भी शाबर साधनाओं में मांगलिक कार्यों को लक्ष्य में रखकर किये जाने वाले कार्य इसी समय पर ही सम्पन्न किये जाते हैं।

जिस दिन अनुष्ठान प्रारम्भ करना हो, उस दिन सबसे पहले नित्यकर्म आदि से निवृत्त होकर अपने पूजास्थल पर जाकर पूर्वाभिमुख बैठ जायें। बैठने के लिये लाल या श्वेत रंग के कम्बल आसन अथवा कुशा आसन का प्रयोग करें। अपने सामने की थोड़ी सी जगह को गाय के गोबर में थोड़ी सी हल्दी डालकर उससे लीप लें। इसके ऊपर कुंकुम के मध्य में दो विपरीतमुखी त्रिकोण निर्मित करें। इनके मध्य के त्रिकोण में चावलों की एक ढेरी बना दें। ढेरी के ऊपर चांदी या स्टील की प्लेट में गंगाजल से धोकर चेतना सम्पन्न कात्यायनी यंत्र को प्रतिष्ठित करना होता है अथवा भोजपत्र पर अष्टगंध से बनाये एवं प्राण-प्रतिष्ठित किये कात्यायनी यंत्र को स्थन देना होता है। इसके बाद छः मिट्टी से बने तेल के दीये लेकर उन्हें त्रिकोणों के बाहरी कोनों के अन्दर रखना होता है। एक तीनमुखी घी का दीपक जलाकर त्रिकोणों के मध्य बिन्दू व यंत्र के सामने रखना होता है।

इसके अलावा किसी शुभ मुहूर्त में कुम्हार के घर से लाकर रखी कच्ची मिट्टी की हण्डियां को भी यंत्र के दायीं ओर त्रिकोणों से थोड़ी दूर एक अलग चावलों की ढेरी पर रख दें। एक लाल रंग के वस्त्र में सात काली मिर्च के दाने, सात नमक की डलियां और सात सुपारियों के साथ एक-एक पंचमुखी रुद्राक्ष एवं एक मोती सीप बांध कर हंडिया के अंदर रख दें। हंडिया के मुंह को एक अन्य लाल वस्त्र से बांध दें तथा उसके बाहर निम्न मंत्र को बोलते हुये कुंकुम की सात बिन्दियां लगा दें।

कुंकुम लगाने का मंत्र इस प्रकार है-

ॐ नमो आदेश, गुरु जी को आदेश। ॐ कुंकुम-कुंकुम। कहौ, कुंकुम कहां से आया ? गिरि पर्वत से आया। कहौ, कुंकुम को कौन ले आया ? गौरी का पुत्र गणेश ही ले आया। हृदय तो हनुमन्त बसै, भैंरों बसे कपाल। माथे बिन्दी कुंकुम की, देवी करे निहाल।

इसके अतिरिक्त एक मिट्टी के बर्तन में आग सुलगाकर लोबान, समुद्रफेन और राई की धूनी देते हुये अग्रांकित मंत्र का जाप शुरू कर दें। जाप शुरू करने से पहले कात्यायनी

माँ से अपनी प्रार्थना को अवश्य दोहरा लें तथा उन्हीं की आज्ञा लेकर मंत्रजाप शुरू करें। मंत्रजाप करने से पहले स्वयं साधक या साधिका भी अपने माथे पर कुंकुम का टीका लगा लें। इसके अलावा माँ को फूल-मखाने का प्रसाद अर्पित करना न भूलें।

निम्न मंत्र का रोजाना तीन माला अथवा एक माला मंत्रजाप करना होता है। जाप सम्पन्न होने के पश्चात् एक बार पुनः माँ के सामने अपनी प्रार्थना को दोहराना होता है और माँ की आज्ञा लेकर ही आसन से उठना होता है। मंत्रजाप के लिये लघु पंचमुखी रुद्राक्ष माला काम में लायी जाती है। जप के पश्चात् फूल मखाने का प्रसाद घर के सदस्यों में बंटवा दें।

अगर प्रत्येक मंगलवार के दिन उपवास कर लिया जाये तो और भी उत्तम रहता है। उपवास के दिन दूध और फलों का सेवन करें। इसके अतिरिक्त अन्य शेष सभी चीजों का सेवन वर्जित होता है। इसके अलावा प्रत्येक मंगलवार के दिन किसी कन्या को दूध एवं मिष्ठान का सेवन कराना तथा एक गाय को घी से चुपड़ी हुई रोटी गुड़ के साथ खिलाना फलदायक रहता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मंगलवार की रात्रि को घर के दरवाजे पर अथवा किसी वृक्ष के नीचे तेल का एक दीपक जलाकर रखें।

मंत्र इस प्रकार है-

ॐ हूं हूं शरणागत-दीनार्त-परित्राण परायणे।
सर्वस्याति हरे-देविः नारायणि नमोस्तुते ॐ हूं हूं॥

सम्पूर्ण अनुष्ठान का यही क्रम अगले 40 दिनों तक जारी रखना होता है लेकिन बीच-बीच में प्रत्येक सोमवार के दिन जप के पश्चात् यंत्र और मिट्टी के बर्तन के नीचे के चावल को हटाकर किसी वृक्ष के नीचे अथवा छत के ऊपर बिखेर कर पक्षियों को खिला देना चाहिये। अगले दिन मंगलवार को प्रथम दिन की भांति अनुष्ठान की सम्पूर्ण प्रक्रिया को दोहरा लेना चाहिये। मंगलवार के दिन अनुष्ठान की पुनः शुरूआत गाय के गोबर में हल्दी के लेपन, त्रिकोण निर्माण, यंत्र प्रतिष्ठा एवं हंडिया स्थापना के रूप में पूर्ववत् ही की जाती है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक सोमवार के दिन मिट्टी की हंडिया के सामने लोबान, समुद्रफेन और राई की धूनी देते हुये एवं तेल का एक दीपक जलाकर निम्न मंत्र का पांच माला और जाप कर लेना चाहिये।

हंडिया पर पढ़ने का मंत्र निम्न प्रकार है-

ॐ गौरी आवे। शिव भी आवे। शिव जो ब्यावे। अमुक..... का विवाह शीघ्र सिद्ध करै। देर न करे। जो देर होए, तो शिव का क्रोध होए, तुझे गुरु गोरखनाथ की दुहाई फिरै।

'अमुक' के स्थान पर उसका नाम बोलें जिसके निमित्त यह प्रयोग किया जा रहा है। अगर स्वयं साधक अथवा साधिका यह प्रयोग कर रहे हैं तो 'अमुक' के स्थान पर अपना नाम बोलें।

जब सम्पूर्ण अनुष्ठान पूर्णता के साथ सम्पन्न हो जाये तो मिट्टी की हांडी को किसी चौराहे पर रख आयें और चावलों को पूर्ववत् पक्षियों को खिला दें। इसके अलावा कात्यायनी यंत्र के अतिरिक्त शेष समस्त पूजा-सामग्री को किसी वस्त्र में बांधकर बहते पानी में प्रवाहित कर दें। कात्यायनी यंत्र को अपने पूजास्थल पर रख दें तथा उसे नियमित रूप से धूप, दीप दिखाते रहे। यथासंभव संख्या में मंत्रजाप भी करते रहें।

इस शाबर अनुष्ठान को सफलतापूर्वक सम्पन्न कर लेने से शीघ्र ही लड़का या लड़की का विवाह जैसा मांगलिक कार्य निश्चित ही सम्पन्न हो जाता है। इसके अलावा दाम्पत्य संबंधी अन्य कष्ट एवं समस्यायें भी धीरे-धीरे दूर होती चली जाती हैं। इस अनुष्ठान कार्य को एक वर्ष के भीतर तीन बार तक सम्पन्न किया जा सकता है।

वांछित वर प्राप्ति का प्रयोग :

कई बार ऐसा होता है कि कन्या को वांछित वर प्राप्त नहीं हो पाता। जो रिश्ते आते हैं वह उसे पसंद नहीं होते। ऐसी स्थिति में अग्रांकित मंत्र का प्रयोग करें, आपकी कामना अवश्य पूर्ण होगी-

शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे।
सर्वस्यार्ति-हरे देवि ! नारायणि नमोस्तु ते॥

यह प्रयोग आपको माँ पार्वती की तस्वीर के समक्ष करना है। इस उपाय को मंगलवार के दिन प्रातः प्रारम्भ करें। स्नान-ध्यान से निवृत्त होकर प्रयोग के लिये बैठें। अपने सामने एक लकड़ी की चौकी रखें। उस पर पीला वस्त्र बिछायें। चौकी पर माँ पार्वती की तस्वीर रखें। एक प्लेट में साबुत चावल थोड़ी मात्रा में लेकर उन पर केशर के घोल के छींटे दें। इन पीले चावलों पर देशी घी का दीपक रखकर प्रज्ज्वलित करें। अब दीपक की लौ पर ध्यान केन्द्रित करते हुये उपरोक्त मंत्र का 108 बार जाप करें। जाप के पश्चात् माँ पार्वती को प्रणाम कर उठ जायें। जब दीपक बुझ जाये तब चावलों को पक्षियों को चुगने के लिये डाल दें। यह प्रयोग निरन्तर 27 मंगलवार को करना है। प्रयोग विधि यही रहेगी। जिस दिन प्रयोग करें उस दिन उपवास कर सकें तो फल प्राप्ति शीघ्र सम्भव होगी। 27 मंगलवार तक आपकी कामना पूर्ति के अवसर निर्मित होने लगेंगे। निश्चित रूप से आपको वांछित वर की प्राप्ति होगी।

अन्य उपयोगी उपाय :

कई बार ऐसा देखने में आता है कि कुछ युवक एवं युवतियों का विवाह बड़ी उम्र

होने तक सम्पन्न नहीं हो पाता है। इसके पीछे कारण कुछ भी हो सकते हैं किन्तु विवाह की उम्र निकलने के पश्चात् विवाह का होना थोड़ा असम्भव प्रतीत होता है। अगर विवाह होने के अवसर भी बनते हैं तो मनवांछित जीवनसाथी की प्राप्ति नहीं हो पाती। ऐसे युवक एवं युवतियां जिनकी उम्र विवाह करने की उम्र से अधिक हो गई है, जिनका विवाह सम्पन्न होने में अवरोध उत्पन्न हो रहे हैं उन्हें अग्रांकित मंत्र का प्रयोग करना चाहिये-

मखनो हाथी जर्व अम्बारी, उस पर बैठी कमाल खां की सवारी। कमाल खां, कमाल खां मुगल पठान, बैठे चबूतरे पढ़े कुरान। हजार काम दुनिया का करे। जा, एक काम मेरा कर। न करे, तो तीन लाख तैंतीस हजार पैगम्बरों की दोहाई।

जो युवक अथवा युवती उपरोक्त उपाय करना चाहते हैं उन्हें यह उपाय शुक्लपक्ष के प्रथम गुरुवार से प्रारम्भ करना चाहिये। इसके लिये कमलगट्टे की माला एवं सूती अथवा ऊनी कम्बल के आसन की आवश्यकता रहती है। प्रयोग में गुलाब की अगरबत्ती, लोबान तथा गुग्गुल की भी आवश्यकता होती है। जब उपाय करना हो तब पश्चिम की तरफ मुंह करके आसन पर बैठकर प्रतिदिन उपरोक्त मंत्र की 10 माला का जाप करें। जाप प्रारम्भ करने से पूर्व अपने सामने गुलाब की अगरबत्तियां जला लें। लोबान एवं गुग्गुल की धूनी दें। यह प्रयोग 21 दिन तक निरन्तर करना होता है। युवक इस उपाय को निरन्तर कर सकते हैं। अगर युवतियां कर रही है तो उन्हें माह के तीन विशेष दिवसों को छोड़कर पुनः उपाय प्रारम्भ कर देना चाहिये। उन्हें भी यह उपाय 21 दिन तक ही करना है।

आर्थिक समस्याओं से मुक्ति का प्रयोग

साधनाओं और अनुष्ठानों की अनेक पद्धतियां प्रचलित रही हैं, जिनमें वदोक्त पद्धतियां, तांत्रिक पद्धतियां, शैव, शाक्त और शाबर पद्धतियां सबसे प्रमुख हैं। इन समस्त पद्धतियों की अपनी-अपनी विशेषतायें और अपनी-अपनी विशिष्ट प्रक्रियायें हैं। कुछ पद्धतियां तो ऐसी रही हैं जो साधारणजनों के लिये नहीं, बल्कि उच्च साधकों के लिये बनी हैं जिन्हें साधारण लोग सहजतापूर्वक सम्पन्न नहीं कर सकते। मंत्रोक्त और तंत्रोक्त पद्धतियों से संबंधित अनुष्ठानों को सम्पन्न करना हर किसी के लिये सम्भव नहीं है। अतः सामान्यजनों के लिये शाबर साधनाएं अर्थात् शाबर पद्धति पर आधारित अनुष्ठान अधिक अनुकूल होते हैं।

यह शाबर साधनाएं भी तंत्र का ही एक अंग हैं। पूर्व में बताया गया है कि शाबर मंत्र शिव मुख से प्रकट हुए हैं। इन शाबर साधनाओं को समाज में लाने का श्रेय नाथ सम्प्रदाय के अनुयायियों को जाता है। इसी नाथ सम्प्रदाय में 64 सिद्ध और 64 योगिनियां हुई हैं। इस सम्प्रदाय के सबसे पहले सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) को माना जाता है। नाथ सम्प्रदाय का जन्मदाता ओघड़दानी आदिनाथ शिव ही माने गये हैं।

नाथ सम्प्रदाय के योगियों ने ब्रह्मा के मुख से उद्घोषित हुये वैदिक मंत्रों एवं शिव के श्रीमुख से उद्घोषित तांत्रोक्त मंत्रों को अपने विवेक एवं साधना के गहन अनुभवों के आधार पर सौम्य रूप प्रदान करके शाबर रूप प्रदान किया। शाबर पद्धति के रूप में तंत्र साधना का महत्व सामान्यजनों के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ क्योंकि इस शाबर पद्धति में न तो साधना की अधिक जटिलता थी और न ही भाषा संबंधी कोई कठिनाई आती थी। सबसे बढ़कर यह बात भी कि इन मंत्रों के पीछे गुरु के माध्यम से भगवान शिव की शक्ति ही मुख्य रूप से काम करती थी, जिससे यह तंत्र प्रयोग कभी भी निष्फल सिद्ध नहीं होते थे। इसी तरह आज के समय भी गुरु मुख से प्राप्त किये गये शाबर प्रयोग व शाबर मंत्र साधना के लिये सर्वश्रेष्ठ, अचूक, प्रभावयुक्त एवं फल प्रदाता सिद्ध होते हैं।

शाबर मंत्रों में प्रयुक्त अक्षर सीधे-सादे, सरल एवं छोटे होते हैं। उनके अर्थ भी अधिक स्पष्ट नहीं होते। अधिकतर शाबर मंत्र आम बोलचाल की ग्रामीण भाषा में होते हैं। इसलिये शताब्दियों तक शाबर मंत्रों के विभिन्न रूप गांव-देहात के अनपढ़ कहे जाने वाले ओझाओं, गुनियों में ही अधिक लोकप्रिय रहे हैं।

इन मंत्रों की रचना संस्कृत साहित्य की बजाय सामान्यजनों को ध्यान में रखकर लोकभाषा में की गई है, इसलिये इनके उच्चारण में किसी तरह की गलती होने की आशंका नहीं रहती। इनकी साधना व अनुष्ठान की प्रक्रियायें भी सहज ही होती हैं। इनके अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये किसी अन्य की आवश्यकता नहीं पड़ती, केवल साधना में पूर्ण विश्वास और गुरु का आशीर्वाद ही पर्याप्त होता है। इन शाबर अनुष्ठानों के दौरान साधना संबंधी अन्य तरह के प्रतिबंध भी नहीं लगाने पड़ते। अनुष्ठानों के दौरान साधक अपने दैनिक कार्यों को पूर्ववत् जारी रख सकता है।

जीवन में आने वाली अनेक प्रकार की समस्याओं से मुक्ति पाने में शाबर अनुष्ठान बहुत ही चमत्कारिक असर दिखाने वाले सिद्ध होते हैं। शाबर साधनाएं मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन जैसे अभिचार कर्मों से तो रक्षा प्रदान करती ही हैं, यह विवाह बाधा, आर्थिक परेशानियों, पारिवारिक कलह, झूठे मुकदमे आदि में फंस जाने और जीवन में सफलता प्राप्त करने में भी बहुत मदद करती हैं। अनेक प्रकार के रोगों पर भी इनका शीघ्र प्रभाव होता है। आगे आर्थिक परेशानियों से उबरने में उपयोगी एक शाबर अनुष्ठान का उल्लेख किया जा रहा है।

अगर व्यापार में बार-बार नुकसान उठाना पड़ रहा है, किसी प्रकार का नया कारोबार शुरू करते ही कोई न कोई बाधा खड़ी हो जाती है, व्यापार के रूप में अपनी योजनाओं को कार्यरूप में लाने में परेशानियां आ रही हैं अथवा व्यापार में पर्याप्त श्रम करने और अधिक पैसा लगाने के बावजूद पर्याप्त सफलता प्राप्त नहीं हो पा रही है, बार-बार नुकसान हो रहा है या फिर व्यापार पर कोई तांत्रिक प्रयोग होने के कारण एकाएक

भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ी है, बार-बार शत्रुओं के प्रयास से व्यापार में घाटा उठाना पड़ रहा है, व्यापारिक साथी समय पर पूरा सहयोग नहीं दे पा रहे हैं, समय पर आपको अपना पैसा वापिस नहीं मिलता अथवा लोग आपका पैसा लेकर लौटाने का नाम नहीं लेते, तो ऐसी सभी प्रकार की समस्याओं से मुक्ति पाने के लिये यह शाबर अनुष्ठान बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है।

इस शाबर अनुष्ठान को किसी भी बुधवार के दिन से प्रारम्भ किया जा सकता है। यह अनुष्ठान कुल 40 दिन का है। 40 दिन के इस अनुष्ठान को सम्पन्न करते ही आर्थिक समस्याओं से मुक्ति मिल मिलने लग जाती है।

इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने के लिये एक सुलेमानी हकीक, चमेली के तेल का दीपक, ताम्रपात्र, श्वेत चंदन, अनार की कलम, मिट्टी का बर्तन, सरसों के तेल के चार दीपक, शुद्ध लोबान, समुद्रफेन, भूतकेशी, पीली सरसों, काले उड़द, काले तिल आदि की आवश्यकता पड़ती है।

इस अनुष्ठान को शुक्लपक्ष के किसी भी बुधवार को प्रारम्भ किया जा सकता है। इसके लिये प्रातःकाल का समय ठीक रहता है। जिस दिन अनुष्ठान प्रारम्भ करना हो उसके एक दिन पहले उपरोक्त काम में आने वाली सामग्रियों की व्यवस्था कर लें। अगर अनुष्ठान का यह प्रयोग घर पर करना चाहते हैं तो इसके लिये स्थान का चयन करके साफ-सफाई कर लें। प्रातः उठ कर स्नान ध्यान करें। अनुष्ठान स्थल को गोबर से लीप कर अथवा गंगाजल छिड़क कर स्वच्छ कर लें। बैठने के लिये सफेद रंग के सूती अथवा ऊनी आसन की व्यवस्था कर लें। आसन पर पूर्व की ओर मुख करके बैठ जायें। पूर्व में मुख नहीं कर सकते तो उत्तर की ओर मुख करके बैठें। अपने सामने एक लकड़ी की चौकी रखें और उस पर एक मीटर लाल नये कपड़े को चार तह करके चौकी पर बिछा दें।

इसके पश्चात् एक-एक सरसों के तेल का दीपक जलाकर अपनी चारों दिशाओं में रख लें। चौकी के ऊपर ताम्रपत्र को रख दें। ताम्रपत्र पर सबसे पहले श्वेत चन्दन और अनार की कलम से एक लाइन में **ॐ गुरुभ्यायः नमः, गुरोक्ष्याय नमः, सुलेमानाय नमः** लिखकर उसके नीचे अपना नाम लिख दें। यंत्र के मध्य में ही सुलेमानी हकीक को रख दें।

इसके पश्चात् चमेली के दीपक को जलाकर वहीं चौकी पर दायीं तरफ स्थान दे दें। एक मिट्टी का पात्र लेकर उसमें कण्डे की सुलगती आग रख दें तथा उसमें मूल मंत्र की तीन-तीन आवृत्तियों के साथ तीन चम्मच घी, तीन लौंग, तीन कालीमिर्च, तीन इलायची अर्पित करके एक मूल मंत्र के उच्चारण के साथ लोबान, समुद्रफेन, भूतकेशी, पीली सरसों, काले तिल और सरसों के तेल का मिश्रण डाल दें।

इसके उपरान्त पद्मावती देवी से मन ही मन प्रार्थना करें तथा आर्थिक परेशानी से

बाहर निकालने का अनुरोध करके मंत्रजाप प्रारम्भ करें।

इस शाबर अनुष्ठान में प्रतिदिन आगे लिखे मंत्र का पांच माला जाप करना होता है। मंत्रजाप के लिये 108 मनके की हकीक माला काम में लायी जाती है। प्रत्येक माला का जाप पूरा होने पर सुलेमानी हकीक को यंत्र से उठाकर अपने मस्तक के साथ तीन बार लगाना होता है और यंत्र के ऊपर ही रख देना होता है। चालीस दिन का अनुष्ठान सम्पूर्ण होने के पश्चात् इस सुलेमानी हकीक को चांदी की अंगूठी में जड़वाकर अपने दाहिने हाथ की मध्यमा अथवा अनामिका अंगुली में धारण कर लें। वैसे तो अनुष्ठान का प्रभाव 21वें दिन से ही दिखाई पड़ने लग जाता है, किन्तु इस सुलेमानी हकीक को अंगुली में धारण करते ही साधक की ओजस्विता में वृद्धि होने लग जाती है।

शाबर अनुष्ठानों के संबंध में एक विशेष बात समझ लेनी चाहिये कि इन साधनाओं, अनुष्ठानों में हकीक, रुद्राक्ष, लोबान, गंधयुक्त कई प्रकार की जड़ी-बूटियों, पीपल, अशोक, आम जैसे वृक्षों एवं पुराने खण्डहर, शमशान भूमि आदि का विशेष महत्त्व होता है।

अनुष्ठान में प्रयुक्त किया जाने वाला शाबर मंत्र निम्न प्रकार है-

ॐ नमो भगवती पद्मा श्रीं ह्रीं पूर्व दक्षिण उत्तर पश्चिम धन द्रव्य आवे सर्वजन्य वश्य कुरू कुरू नमः। ॐ गुरु की शक्ति मेरी भक्ति फुरो मंत्र ईश्वर तेरी वाचा।

इस तरह चालीसवें दिन यह शाबर अनुष्ठान सम्पन्न हो जाता है। अनुष्ठान पूर्ण होने पर समस्त पूजा समाग्री, यंत्र, दीये आदि को किसी कोरे मिट्टी के बर्तन में भरकर उसके मुंह को कपड़े से बांधकर या तो जमीन में दबा दिया जाता है अथवा उन्हें बहते हुये पानी में छोड़ दिया जाता है। हकीक पत्थर व हकीक माला को स्वयं अपने शरीर पर धारण कर लिया जाता है। इस तरह आर्थिक परेशानी का तो समाधान हो ही जाता है, इसके साथ-साथ आय के नये-नये स्रोत भी खुलने लगते हैं।

तांत्रिक अभिचार कर्म से मुक्ति के उपाय

आज प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा में ईर्ष्यालु प्रवृत्ति को जन्म दिया है। यह ईर्ष्या अकारण ही उन लोगों के प्रति उत्पन्न होती हैं जो या तो बहुत तेजी से उन्नति करते हुये आगे निकल जाते हैं अथवा एक व्यक्ति किसी विशेष कारणों से किसी अन्य को हानि पहुंचाना चाहता है। ऐसे व्यक्ति अपनी ईर्ष्या को मूर्त रूप देने के लिये सामने आकर किसी प्रकार का विरोध प्रकट नहीं कर पाते। इसलिये ऐसे व्यक्ति हमेशा तांत्रिक अभिचार कर्म का सहारा लेते हैं। आज भी ऐसे अनेक तांत्रिक हैं जो अपने भ्रष्ट आचरण से किसी भी प्रकार का कार्य करने को तत्पर हो जाते हैं। ऐसे लोग कुछ धन लेकर किसी भी व्यक्ति के लिये, किसी भी व्यक्ति के प्रति तांत्रिक अभिचार कर्म करने को तत्पर हो जाते हैं। जब किसी व्यक्ति के सामने अनायास ही समस्यायें उत्पन्न होने लगे, जैसे कि चलता हुआ

व्यापार ठप्प होने लगे, बनते हुये काम बिगड़ने लगे, अनायास हानि की स्थितियां उत्पन्न होने लगे, यश के स्थान पर अपयश मिलने लगे तथा कोई व्यक्ति लम्बे समय से किसी बीमारी से जकड़ा रहे, लाख प्रयास करने के पश्चात् भी वह स्वस्थ नहीं हो तो यह समझें कि आपके प्रति किसी ने तांत्रिक अभिचार कर्म किया है। ऐसी स्थिति से मुक्ति प्राप्त करने के लिये अनेक शाबर मंत्र हैं जिनके प्रयोग से समस्याओं से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। यहां पर ऐसे प्रयोगों के प्रभाव से बचने के लिये अग्रांकित मंत्र का प्रयोग करें-

लोहे का कोठला वज्र के किंवार तेहि पर नावो बारम्बार तेते नहि पहिनहि एकहू बार एक पंठा अनंडा बांधू डीठी मूठ बांधूं तीरा बांधूं स्वर्गे इन्द्र बांधूं पाताले वासुको नाग बांधूं सैय्यद पांव शरण षोद की भक्ति नारसिंह वादिकार खेलु खेलु शंकनी डंकनी सात सेतर के संकरी बारह मन के पहार तेहि ऊपर बैठू अब देवी चौतराकय आन जंभाई जंभाई गोरख की दुहाई नोना चमारी की दुहाई तैंतीस कोटि देवताओं की दुहाई हनुमान की दुहाई काशी कोतवाल भैंरो की दुहाई अपने गुरुहि कटारी मारूं देवता खेल सभ आप लेइ काशीकादि कादी काशीकार पाप तेहि देवता के कंध चढ़ाइ काट जो मन मंह क्षोभ राखे।

इस मंत्र को पूर्व में दी गई मंत्र सिद्धि विधि के अनुसार सिद्ध कर लें। यदि घर में कोई व्यक्ति लम्बे समय से किसी रोग से पीड़ित चल रहा हो तो उपरोक्त मंत्र का प्रयोग उक्त व्यक्ति का कोई रिश्तेदार अथवा परिचित व्यक्ति प्रयोग कर सकता है। इसके लिये व्यक्ति अपने हाथ में राई और साबुत नमक की डली लेकर रोगी व्यक्ति के चारों ओर घूमता हुआ 21 बार इस मंत्र का उच्चारण करें। मंत्र पूर्ण होने के पश्चात् राई तथा नमक की डली को चौराहे पर डाल दिया जाये। ऐसा करने से धीर-धीरे रोगी व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करने लगता है। इस विधि का प्रयोग 11 अथवा 21 दिन तक निरन्तर करना चाहिये।

अन्य समस्याओं से मुक्ति प्राप्त करने के लिये-

- अगर आपका कारोबार बांध दिया गया है तो उपरोक्त विधि से अपनी दुकान पर प्रयोग करें। दुकान को खोलते ही अगरबत्ती लगाने के पश्चात् राई तथा साबुत नमक की डली लेकर उपरोक्त मंत्र का 5 बार पाठ करें। इसके पश्चात् इस सामग्री को चौराहे पर डाल दें। धीरे-धीरे दुकान की बंदिश समाप्त होकर व्यापार ठीक से चलने लगेगा।

- जिन लोगों के बनते हुये काम बिगड़ने लगते हैं तो उन्हें कोई भी नया काम करने से पूर्व उपरोक्त विधि से इस मंत्र का 5 बार जाप करके इस सामग्री को चौराहे पर डाल देना चाहिये। किये जाने वाले कार्य में सफलता प्राप्त होगी।

◆◆◆

निरोगी दुनिया प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

ज्योतिष एवं उपायों से सम्बन्धित

1.	तंत्र के दिव्य प्रयोग	आर. कृष्णा	75.00
2.	सोलह संस्कार	उपेन्द्र धाकरे	90.00
3.	गहरे पानी पैठ...	मोहन कुमार कश्यप	65.00
4.	नवग्रह दर्पण	उपेन्द्र धाकरे	101.00
5.	ऐसा भी होता है...	मोहन कुमार कश्यप	65.00
6.	कुछ मोती-कुछ सीप	उपेन्द्र धाकरे	65.00
7.	सखी सहेली	उपेन्द्र धाकरे	65.00
8.	छोटी-छोटी बातें...	राकेश सोनी	65.00
9.	उपवास एवं उपासना	उपेन्द्र धाकरे	65.00
10.	देखन में छोटे लगें...	उपेन्द्र धाकरे	65.00
11.	सुख-समृद्धि के दुर्लभ उपाय	उपेन्द्र धाकरे	65.00
12.	आपका भाग्य-आपके हाथ	उपेन्द्र धाकरे	65.00
13.	कर्ज से मुक्ति	राकेश सोनी-उपेन्द्र धाकरे	75.00
14.	भाग्य बदलें	राकेश सोनी	75.00
15.	मंत्र मंथन	मृदुला त्रिवेदी - टी.पी. त्रिवेदी	75.00
16.	मंत्र मंजूषा	मृदुला त्रिवेदी - टी.पी. त्रिवेदी	75.00
17.	हिमालय के सिद्ध योगी	डॉ. आर. कृष्ण	65.00
18.	हस्त विचार	राकेश सोनी - राजेश वर्मा	75.00
19.	फेंगशुई के चमत्कार	डॉ. एस.सी. कुरसीज़ा	65.00
20.	शनि संकट निवारण	उपेन्द्र धाकरे	65.00

शीघ्र प्रकाशित

1.	धनदायक सरल प्रयोग	उपेन्द्र धाकरे	सम्भावित मूल्य 65.00
2.	सोलह बाधक योग	उपेन्द्र धाकरे	सम्भावित मूल्य 90.00
3.	क्यों और कैसे...	मोहन कुमार कश्यप	सम्भावित मूल्य 75.00
4.	विवाह एवं दाम्पत्य सुख	उपेन्द्र धाकरे	सम्भावित मूल्य 80.00

प्रकाशन क्रम में-

1.	यंत्र शक्ति	सम्भावित मूल्य 60.00
2.	पूजा कैसे करें... ?	सम्भावित मूल्य 70.00
3.	दान-पुण्य एवं स्नान	सम्भावित मूल्य 60.00
4.	सिद्धिदायक सरल प्रयोग	सम्भावित मूल्य 60.00
5.	यंत्र रहस्य	सम्भावित मूल्य 60.00
6.	सम्पूर्ण विवाह ज्योतिष	सम्भावित मूल्य 60.00
7.	देव साधना एवं उपासना	सम्भावित मूल्य 60.00
8.	देवी साधना एवं उपासना	सम्भावित मूल्य 60.00
9.	आपका वास्तु	सम्भावित मूल्य 60.00
10.	मेरी सहेली (सखी सहेली - भाग-2)	सम्भावित मूल्य 60.00
11.	सबकी सहेली (सखी सहेली - भाग-3)	सम्भावित मूल्य 60.00

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें-

1.	शिशु रोग एवं स्वास्थ्य	डॉ. सुरेश कुमार शर्मा	60.00
2.	पेट के रोग : सम्पूर्ण चिकित्सा	डॉ. आर.के. शर्मा	70.00
3.	मधुमेह : बचाव सम्भव है	डॉ. आर.के. शर्मा	70.00
4.	सम्पूर्ण रोगों की सरल चिकित्सा	डॉ. सुरेश कुमार शर्मा	70.00
5.	जटिल रोगों की सरल चिकित्सा	सं. डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज	70.00
6.	फलों के द्वारा चिकित्सा	वैद्य गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'	70.00
7.	आरोग्य आपका	डॉ. चंचलमल चोरडिया	70.00
8.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज	70.00
9.	रोगों की सही चिकित्सा	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज	80.00
10.	उच्च रक्तचाप	डॉ. आर.के. शर्मा	60.00
11.	पति-पत्नी और सेक्स	डॉ. आर.के. शर्मा डॉ. एस.ए. जैदी	90.00
12.	आपकी रसोई	रचना गौड़ भारती	70.00
13.	भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के कानून	सं. श्याम सुन्दर वशिष्ठ	100.00

प्रकाशन क्रम में

1.	स्त्री रोग एवं स्वास्थ्य	सम्भावित मूल्य 70.00
2.	चर्म रोग एवं चिकित्सा	सम्भावित मूल्य 70.00

सम्पर्क स्थल :

निरोगी दुनिया प्रकाशन

389, जोशी भवन, मनिहारों का रास्ता, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर–302 003

फोन : ऑफिस : 0141-2321373 निवास-2305612 मो.- 9414048768, 9799906705

आज ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जिसके जीवन में किसी प्रकार की समस्या अथवा दुःख नहीं हो। इनमें से अनेक दुःख एवं कष्ट तो वह अपने पूर्व जन्म के कर्मफल के रूप में भोगता है और अनेक वर्तमान जीवन में किये जाने वाले गलत कार्यों के कारण से भोगता है। इसमें कहीं न कहीं उसकी अनियंत्रित कामनायें एवं इच्छायें कष्टों का कारण बन जाती हैं। दुःख, कष्ट तथा अन्य प्रकार की समस्याएं मानव जीवन के साथ प्रारम्भ से ही रही हैं किन्तु आज उनकी पीड़ा अधिक महसूस होती है। अनेक व्यक्ति ऐसे हैं जो अपने जीवन में हमेशा किसी न किसी दुःख एवं कष्ट से परेशान रहते हैं। इस प्रकार की स्थिति में जीवन में आनन्द और उमंग समाप्त होकर हताशा एवं निराशा बढ़ने लगती है।

उपरोक्त स्थितियों को देखते हुए यह विचार अवश्य उत्पन्न होता है कि जब प्रारम्भ से ही समस्याएं रही हैं तो उनका समाधान भी अवश्य रहा होगा। प्रारम्भ से ही यह अवधारणा रही है कि ईश्वर के सानिध्य में आने से कष्टों एवं पीड़ाओं से मुक्ति मिलती है। यह बात अलग है कि ईश्वर का सानिध्य प्राप्त करने के मार्ग अलग-अलग हैं। इन्ही में से एक मार्ग तांत्रिक प्रयोगों से होकर आता है। इस पुस्तक में विभिन्न प्रकार के तांत्रिक प्रयोगों, अनुष्ठानों एवं साधनाओं के बारे में बताने का प्रयास किया है। असंख्य लोगों ने इन प्रयोगों के द्वारा कष्टों एवं समस्याओं से मुक्ति प्राप्त की है।

तंत्र के दिव्य प्रयोग पुस्तक में आम लोगों के द्वारा किये जाने वाले सात्विक तांत्रिक प्रयोगों के बारे में बताया गया है जिनके माध्यम से दुःख एवं कष्टों से मुक्ति सम्भव है तथा मनोकामनाएं पूर्ण होने के अवसर बनने लगते हैं।

-आर. कृष्णा

सम्पर्क स्थल :

निरोगी दुनिया प्रकाशन

389, जोशी भवन, मनिहारों का रास्ता, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-302 003
फोन : 0141-2321373 निवास : 0141-2305612
मोबाइल : 94140-48768, 9799906705